* ओ३म् *

सामवेद संहिता

भाषा काव्यानुवाद

प्रकाशवती
शास्त्री, एम० ए० बी० टी०, प्रभाकर
१४, जैन मन्दिर, राजा बाजार
नई दिल्ली ।

प्रकाशक :
प्रकाशवती बुग्गा
१४, जैन मन्दिर, राजा बाजार
नई दिल्ली-१

संस्करण : १९८८ (सवत् २०४८)

मूल्य : १००.०० रुपये

मुद्रक :
वैदिक प्रेस
कैलाशनगर, दिल्ली-३१

॥ ओ३म् ॥

मेरे पूज्य पिता जी
श्री अनन्तराम जी खन्ना

मेरे पिता जी का जन्म लाहौर के निकट स्थित शाहदरा में हुआ। इनके पिता जी किसान थे। लाहौर के समीपस्थ एक ग्राम में रह कर कृषि कार्य करते थे। इन की माता जी बड़े धार्मिक तथा उदार विचारों की नारी थीं। इन के पिता जी शिक्षा के विशेष पक्षपाती न थे, अतः मेरे पिता जी अमृतसर में अपने मामा जी के पास रहने लगे। वहां रहकर उन्होंने बी०ए० तक शिक्षा प्राप्त की। लाहौर के सेण्ट्रल ट्रेनिंग कालेज से एस०ए०वी० की परीक्षा पास करके वहीं दयालसिंह कालेज में अंग्रेजी शिक्षक के रूप में कार्य करने लगे। मैट्रिक पास करने के पश्चात् ही इन्हें सरकारी नौकरी मिल रही थी, परन्तु उनके राष्ट्रीय विचारों ने इन्हें यह नौकरी न करने दी।

आर्यसमाज में प्रवेश--

वे हमें बताया करते थे कि एक आर्यसमाजी मुझे बुलाकर ले गया। सन्ध्या की पुस्तक दी जिसको मैंने दूसरे दिन ही याद करके सुना दिया।

आर्यसमाज पर इन्हें इतनी अटूट श्रद्धा थी कि वे प्रत्येक रविवार तथा अन्य उत्सवों पर नियमपूर्वक न केवल स्वयं जाते थे वरन् मुझे भी साथ ले जाते थे। घर में भी आर्यसमाज के सिद्धांतों का अक्षरशः पालन करते हुए किसी की भावनाओं को ठेस नहीं पहुंचाते थे। उन का स्वभाव अतिशय कोमल तथा हृदय उदार था।

कर्तव्य परायणता—

इनकी कर्तव्य-परायणता से स्कूल के समस्त अधिकारी सन्तुष्ट रहते थे, अतः उन्होंने इन्हें (सिंध) मियांवाली के एक स्कूल में प्रधानाध्यापक बनाकर भेज दिया। वहां चार वर्ष कार्य करके पुनः लाहौर लौट आए।

लाहौर से अम्बाला में आकर वहां हिन्दू मुस्लिम स्कूल के प्रधानाध्यापक के रूप में इन्हें अपने उदार स्वभाव के कारण पर्याप्त सफलता मिली।

वहां के शिक्षा विभाग ने इन्हें रिवाड़ी के समीपस्थ एक ग्राम में भेज दिया जहाँ पर यह लड़कों को गणित अंग्रेजी के अतिरिक्त कृषि की शिक्षा भी देते थे। यही नहीं वहां एक कन्या पाठशाला बन्द पड़ी थी उसका पुनः उद्‌घाटन करके मुझे उस छोटी अवस्था में ही अध्यापिका बना दिया। वहाँ सन्ध्या, हवन और भजनों का भी खूब प्रचार होता था।

दिल्ली में—

एक वर्ष के पश्चात् दिल्ली में आ गए। यहां पर एक बाजार में खड़े थे कि एक मुसलमान मित्र मिला। उसने पूछा, आजकल क्या कर रहे हो? बोले कुछ नहीं, वह बोला हमारे स्कूल का प्रधान पद संभालिए। एक वर्ष तक वे अरबी स्कूल के प्रधानाध्यापक रहे। वे सबके साथ प्रेमपूर्वक हंसकर ही बोलते थे, चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान। मूल रूप से आर्यसमाजी होते हुए किसी से घृणा या उपेक्षा नहीं करते थे।

दिल्ली में रहकर इन्होंने कई नये स्कूल भी खोले। हिन्दू, जैन, रामजस आदि इन स्कूलों में ही यह प्रधान पद पर कार्य करते रहे। दिल्ली के बड़े रईसों के और गरीबों के बच्चों को घर घर जाकर पढ़ाया। किसी से फीस लेकर किसी से न लेकर।

कन्या शिक्षा —

वर्तमान रघुमल कन्या पाठशाला के शैशव के यही संरक्षक थे। लगभग छः वर्ष तक इसके प्रबन्धक रहे।

इनकी छः कन्याएँ हुई। सब को समान रूप से पुत्रों के समान ही उच्च शिक्षा दी। अन्य कई कन्याओं को भी निःशुल्क शिक्षा देते रहे।

होम्योपैथिक चिकित्सा —

शिक्षण-कार्य के साथ होम्योपैथिक चिकित्सा की पुस्तकों का भी अध्ययन करते और लोगों का मुफ्त इलाज करते। इससे उन्हें प्रसन्नता होती थी।

एक बार हम मिंटो रोड पर रहते थे, रात के समय एक मुसलमान पड़ोसी घबराया हुआ आया और बोला, कृपया साइकिल दे दीजिए, मेरे बच्चे की हालत खराब है दवाई लाऊँगा। मेरे पिता जी ने कहा, मैं दवाई देता हूँ। पिता जी ने दवाई दी, ईश्वर की कृपा से उसका बच्चा ठीक हो गया। बस जी वह तो भक्त बन गए। हम मकान बदलकर डाक्टर लेन में आ गए। वे वहां भी अपनी पत्नी और बहिन को लेकर हमें मिलने के लिए आते रहे। पाकिस्तान में जाने से पहले भी हमें मिलकर ही गए। वास्तव में उनकी



श्री अनन्तराम जी खन्ना

बी० ए०

जन्म सन् १८८५ स्वर्गवास १९६३

दवाई में जादू था क्योंकि रोगियों की सेवा करना भी उनका शौक था। प्रतिदिन गन्दे गन्दे घरों में जाकर रोगियों के घावों को नीम के पानी से ही धो-धोकर ठीक कर देते थे।

मांसाहार के शत्रु —

सदा सादा निरामिष भोजन तो करते ही थे बाजार की बेकार खाद्य वस्तुओं और चाय से भी परहेज था। चाट मिठाई को खाना खिलाना भी पाप समझते थे।

उनकी तर्कशैली भी अद्‌भुत और मधुर होती थी। एक मांसाहारी मित्र से बोले — कभी सोचा है, मांस क्या होता है ? मरे जानवरों की सड़ी हुई चरबी। मित्र सुनकर चला गया। अगले दिन आकर बोला—मास्टर जी आप ने पता नहीं क्या कर दिया, आप की बात सुनकर मैं घर गया तो मांस को मैं चाहने पर भी नहीं पका सका, इतनी घृणा हो गई, उठा कर फेंक दिया। पिता जी हँसते-हँसते ही बात करते थे पर हम कभी उसकी अवहेलना नहीं कर सकते थे।

ज्ञान —

उनका गणित, इंगलिश, भूगोल, इतिहास का ज्ञान उच्चकोटि का था। अरबी, फारसी, उर्दू के अच्छे ज्ञाता थे। आर्यसमाज की कृपा से हिन्दी भी अच्छी लिख लेते थे। संस्कृत न सीखने का उन्हें दुःख था जिसे उन्होंने मुझे संस्कृत पढ़ा कर दूर करना चाहा, वे कहते थे मैंने तो तुझे केवल संस्कृत पढ़ानी है — घर में पण्डित जी आते थे। मुझे बचपन से ही संस्कृत सुगम और मधुर लगती थी।

मुझे भाषण देते हुए देखकर वे गद्‌गद हो जाते थे। आज मैं जो कुछ भी हूँ उनकी कृपा और सद्‌भावना के फलस्वरूप। अतः यह पुस्तक उनकी ही स्मृति में समर्पित है।

प्रकाशवती सुग्गा
शास्त्री, एम० ए०, बी० टी०, प्रभाकर

भूमिका

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद् भद्रं तन्न आसुव ।।

अर्थ—विश्व के उत्पत्तिकर्ता इतनी कृपा तो कीजिए ।
दूर करके सब बुराइयाँ भाव शुभ भर दीजिए ।।

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ।।

अर्थ—सत्य सनातन ज्ञान का प्रकाश करने के लिए जगत्पिता जगद्गुरु जगदीश्वर ने सृष्टि के प्रारम्भ में ही चार ऋषियों के द्वारा चारों वेदों का ज्ञान दिया । उनके नाम हैं—ऋग्, यजु, साम, अथर्व; और चार ऋषि हैं—अग्नि, आदित्य, वायु, अंगिरा । ऋग्वेद– विज्ञानकाण्ड, यजुर्वेद– कर्मकाण्ड और सामवेद उपासनाकाण्ड कहलाता है । अथर्ववेद शरीर विज्ञान के साथ ब्रह्मज्ञान का भी प्रकाशक है ।

विषयभेद से ही वेदों के चार भाग माने गए हैं । ऋषि दयानन्द कहते हैं ज्ञान और कर्म को ऋग् और यजु: से पूर्णतया जानकर सामवेद में उस पर विचार किया जाता है । स्पष्ट है कि वेद का पूर्ण फल ईश्वरप्राप्ति है । ज्ञानपूर्वक कर्म का नाम ही उपासना है । यह भी बताया है कि ऋग्भि: स्तुवन्ति, यजुर्भि: यजन्ति, सामानि गायन्ति ।

ऋषिवर आगे लिखते हैं गान विद्या तीन प्रकार की होती है—द्रुत, मध्यम और बिलम्बित । ऋग्वेद के मन्त्रों द्वारा स्तुति, यजुर्वेद के मन्त्रों द्वारा यज्ञ । ऋग् यजु मन्त्रों का गायन द्रुत और मध्यम गति से होता है । सामवेद का पाठ बिलम्बित गति से होता है ।

वस्तुत: सामवेद का विषय उपासना है । मनुष्य की कर्मग्रहग्रन्थियां जहां समाप्त हो जाती हैं, वहीं उपासना सामवेद का मुख्य विषय है । सामवेद में १८७५ मन्त्र हैं ।

उपासना-काण्ड होने के कारण ही सामवेद का विशेष महत्त्व है । यह सारे शास्त्रों में गीतिकाव्य के नाम से प्रसिद्ध है । इसका प्रत्येक मन्त्र प्रभु

की ज्ञानपूर्वक स्तुति प्रार्थना से ओत-प्रोत है। इसका एक-एक मन्त्र गाने वाले को आत्मविभोर करके ब्रह्मानन्द में लीन कर देता है। अनुपम शक्ति और स्फूर्ति प्रदान करता है।

वेदों की भाषा वैदिक संस्कृत है। इस भाषा से अनभिज्ञ जन मन्त्रों की आत्मा तक नहीं पहुंच सकता और न ही उसके वास्तविक आनन्द का उपभोग कर सकता है।

दुर्भाग्य से इस युग में संस्कृत भाषा का प्रचार अति अल्प है, अतः वेदों के श्रद्धालु भी इस आनन्द से वंचित हैं। इसी त्रुटि को पूर्ण करने के लिए ही मैंने सामवेद के मन्त्रों को भाषा-काव्य में परिणत करने की चेष्टा की है।

योगिराज कृष्ण जी ने भी अपनी भगवद् गीता में कहा है—

वेदानां सामवेदोऽस्मि।

सामवेद की श्रेष्ठता तो उसके नाम से ही प्रकट है। साम का अर्थ है समता, आत्मा और परमात्मा को उपासना द्वारा समान स्तर पर लाना। सच्चिदानन्द के अन्दर निहित आनन्द का आत्मा के द्वारा उपभोग करना। यद्यपि उपासना के मन्त्र चारों वेदों में पाए जाते हैं तथापि सामवेद में ऐसे मन्त्र विशेष रूप से संगृहीत किए गए हैं। इसमें प्रभु की सभी रूपों में सभी रसों में उपासना की गई है। साम वस्तुतः वह विद्या है जिसमें विश्व संगीत गूंज रहा है। विश्व-समन्वय है, ईश्वर, जीव, प्रकृति की क्रीड़ा है विश्व-साम है।

मैंने प्रायः आर्यसमाज के सत्संगों में अनुभव किया कि जनता भाषा-संगीत से अधिक प्रभावित होती है। सामवेद तो है ही संगीत। वैदिक भाषा के साथ-साथ यह आर्यभाषा का रूप क्यों न धारण करे। इसी विचार से मैंने सामवेद के मन्त्रों को हिन्दी भाषा में पद्यानुवाद करके, गान करके देखा, बड़ा आनन्द आया, अतः सामवेद के सारे मन्त्रों को हिन्दी कविता में लिख कर जन-जन में पहुंचाने की प्रबल प्रेरणा हुई। स्वान्तःसुखाय किया गया यह प्रयास सर्वहिताय आर्य जनता के सम्मुख उपस्थित है।

विनीता :

प्रकाशवती बुग्गा

शास्त्री, प्रभाकर एम०ए० बी०टी० सिद्धान्तशास्त्री।

सामवेद संहिता

(हिन्दी भाषा काव्यानुवाद)

आदरणीया माता प्रकाशवती जी शास्त्री, एम० ए०, बी० टी० प्रभाकर ने मनोयोग से सामवेद संहिता का हिन्दी कवितान्तर प्रस्तुत किया है। मुझे विश्वास है कि जैसे श्रद्धापूर्वक सामवेद का गायन करते हैं, उसी प्रकार इस हिन्दी अनुवाद का भी गायन करेंगे। यह अनुवाद निश्चय ही लोकप्रिय होगा, क्योंकि यह लोकभाषा में तथा लोकगीत शैली में लिखा गया है। माता जी ने चुन चुन कर ऐसे संदर्भ शब्दों का इस छायानुवाद में गुम्फन किया है जिनका सार्थ-संस्पर्श हमें आह्लादित करता है। वेदों का अनुवाद सरल कार्य नहीं है। वेदों की ऐसी व्याख्या करना जो विज्ञान सम्मत, समाज सम्मत, शास्त्र सम्मत तथा मानव सम्मत हो, एक बहुत ही कठिन कार्य है। वेदों का ज्ञान सत्य और सनातन ज्ञान है। इस ज्ञान को सभी के समझने योग्य बनाना, माता जी के अध्यवसाय का वह सुफल है जो इस ग्रन्थ के रूप में आपके सामने है। मैं विषय वस्तु के सम्बन्ध में कुछ भी न कहकर, केवल हिन्दी प्रस्तुति की ही प्रशंसा करना चाहता हूँ। सम्भवतः उतना ही कहना मेरे अधिकार में है।

मुझे विश्वास है कि सभी आर्यजन इन काव्यानुवादों का गायन करके आनन्द की अनुभूति करेंगे।

माता जी के इस सुप्रयास के लिए मैं नतमस्तक हूँ।

डॉ० धर्मपाल, प्रधान
दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा
१५, हनुमान् रोड, नई दिल्ली-११०००१
दिनांक ३।६।८८

॥ ओ३म् ॥

सामवेद कल्पद्रुमः

सच्छाया स्थिरधर्ममूलवलयः पुण्यालवालान्वितो
धीर्विद्या करुणाक्षमादिगुणविलसद्विस्तीर्णशाखा ।

सन्तोषोज्ज्वलपल्लवः शुचिर्यशः पुष्पः सदा सत्फला
सर्वाशा परिपूरकोऽयं सामवेदकल्पद्रुमः विद्यते ।

निस्सन्देह उपर्युक्त श्लोक पवित्र सामवेद के गुणों की व्याख्या करता है।

सामवेद को कल्पवृक्ष कहा है। क्योंकि इसके द्वारा मानव की सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं।

इस का शब्दार्थ इस प्रकार से है इस वृक्ष की छाया स्थिर है अर्थात् सदा रहने वाली है। इसकी जड़ें धर्म हैं यह सारा वृक्ष धर्म की जड़ों से घिरा हुआ है। इस की क्यारी पवित्र कर्मों से भरी हुई है। इस की फैली हुई शाखाएँ सभी दिव्य गुणों से सुशोभित हो रही हैं। वे गुण हैं करुणा, क्षमा, धी, विद्या। इसके पत्ते सन्तोष भाव से चमकते हैं। इसमें पवित्र यश के फूल लगे हुए हैं। इसमें सदा श्रेष्ठ फल लगते हैं और यह मानव की समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला है। इसीलिए इसे कल्पवृक्ष कहते हैं इसी कल्पवृक्ष का नाम सामवेद है। अर्थात् सामवेद ही वह कल्पवृक्ष है जिससे इतने शुभ गुणों की प्राप्ति होती है।

इस कल्पद्रुम की छाया का आनन्द लेना हो, इसके फलों का अनोखा रस सोम-पान करना हो तो इस के मन्त्रों के अन्दर प्रवेश करना होगा। इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए श्रीमती प्रकाशवती शास्त्री ने इस का भाषा में अनुवाद करके हमारे सामने प्रस्तुत किया है।

वेदपाठी वेदमर्मज्ञ विद्वानों को तो इसका आनन्द स्वतः प्राप्त हो जाता है परन्तु साधारण व्यक्ति जो केवल थोड़ी बहुत हिन्दी भाषा ही जानता है।

वह इससे दूर ही रहता है। केवल मन्त्रों के शरीर को ही छू पाता है। उसके प्राणों का संसर्ग नहीं प्राप्त कर सकता। प्रस्तुत भावानुवाद इसी कठिनाई को दूर करता है।

आप इस अनुवाद को पढ़ते समय ऐसा अनुभव करेंगे कि आप इन्द्र बन कर सोम रस का पान कर रहे हैं। जैसे बादलों को छिन्न भिन्न करके सूर्य की किरणें सारे संसार में फैल जाती हैं इसी प्रकार इस अनुवाद से मन्त्रों का प्रकाश साधारण व्यक्तियों को प्रकाश देने में समर्थ होगा।

मेघाछन्न आकाश पर जब इन्द्र का वज्र गिरता है उसकी जल की भीनी फुहार ग्रीष्मसन्तप्त धरती को शीतल जल से परिप्लावित कर देती है उसी प्रकार इस पुस्तक को पढ़ते पढ़ते मन समता और शान्ति के भावों से भर जाता है। सत् चिदानन्द के पवित्र स्पर्श का अनुभव करने लगता है।

लेखिका ने इस पुस्तक में ऐसे सुगम छन्दों तथा भाषा का प्रयोग किया है कि उससे साधारण पढ़ा लिखा व्यक्ति भी गा सके तथा समझ सके। गाते गाते मन इस में लीन हो जाए तथा सच्ची शान्ति और शक्ति को उपलब्ध करे।

ज्यों ज्यों इन मन्त्रों के साथ-साथ भाषा में गुंथे सुवासित पुष्पों को सूंघता है इसके अंग अंग में अनोखी शक्ति का संचार होने लगता है। उसका मन शिवसंकल्पों से पूरित होकर शुभ कर्मों को करने के लिए मचल उठता है। उसे लगता है कि वह सचमुच सोमरस का पान कर रहा है वह इन्द्र ही शक्ति और ऐश्वर्य का स्वामी है।

एक मन्त्र देखिए—

पवस्व देववीरति पवित्रं सोमरंहसा।
इन्द्रमिन्दो वृषा विश ॥

अर्थ—दिव्य गुणों के धारणकर्ता,
पावन सोम तू आता जा।
हृदय में आकर आनन्ददाता,
इन्द्र के तन में छाता जा ॥

इस मन्त्र में प्रभु भक्ति ही सोम है उसे पीकर ही मनुष्य इन्द्र अर्थात् इन्द्रियों का स्वामी बन जाता है और उसका जीवन सच्चे आनन्द से भर जाता है।

प्रस्तुत पुस्तक का उद्देश्य ही सामवेद के आनन्द का प्रचार तथा प्रसार करना है। ईश्वर से यही प्रार्थना है कि इस पुस्तक का पाठ करके सारा संसार आनन्द और शांति से भर जाये। ईश्वर करे लेखिका का उद्देश्य सफल हो। इस पुस्तक का पुष्कल प्रचार तथा प्रसार हो।

शुभाभिलाषिणी :
डा० चन्द्रप्रभा

।। ओ३म् ।।

शुभ कामनाएँ

श्रीमती प्रकाशवती शास्त्री ने 'सामवेद' का पद्यानुवाद (कविता) में छन्दोबन्धन किया है। यह आर्यसमाजों में सामवेद गायन कथा करने के लिए अत्युपयोगी साधन बन गया है। इन मधुर कविताओं से सब को आनन्द मिलेगा। इसे श्रद्धा से गाया जा सकता है। श्रीमती शास्त्री जी का उद्देश्य है कि मानव मात्र के हृदय में वेद के प्रति श्रद्धा बढ़े। भव्य भावना भरे। यह मानव तन हृदय कोष भावनाओं से ओत-प्रोत रहे, इस में कूड़ा करकट जमा न हो, प्रकाश से भरा रहे। संगीत से भरे, सुगन्धि से भरे, जो मनुष्य अपने हृदय कोष जीवन की सुगन्धि से भर लेता है वह स्वयं ही प्रभु भक्त बन जाता है। इसी की पूर्ति के लिए वेद भगवान् की प्रशस्ति में चन्द्र के सम काव्य कानन संजोये गये हैं। जन जन कल्याण हेतु ज्ञान ज्योति दिखलाई है।

सामवेद गायन निश्चय ही लोगों के हृदय में रस की सृष्टि के साथ साथ संस्कृति के परिवेश में सुरक्षित बना रहेगा। श्रीमती शास्त्री जी एक विदुषी महिला हैं। सदा आर्यसमाज के सिद्धान्तों पर दृढ़ रहती हैं। सरल भाषा में कविता का रूप देकर जीवन भर वेदों की महिमा गाई है। स्वामी दयानन्द के गुणों का गायन किया है। इस वेद भगवान् की पावन वाटिका का एक एक सुरभित पुष्प सबको आनन्दित करता रहेगा। सृष्टि रचयिता परम प्रभु में सच्चा विश्वास और श्रद्धा उत्पन्न होगी और दृढ़ आत्मबल की प्राप्ति होगी, और इस वेद गायन काव्य से सुख शान्ति की अनुभूति होगी। श्रीमती शास्त्री जी का यह परिश्रम चिरकाल तक अमर रहेगा कि—

धवल धाम नयनाभिराम, भूकम्पों में ढह जाते हैं।
गज तुरङ्ग वाहन पानी की, बाढ़ों में बह जाते हैं।।
अन्त चिता में बड़े बड़े, बलवन्त देह दह जाते हैं।
पर कवियों के काव्य, कोटिशः कण्ठों में रह जाते हैं।।

इस उत्तम वेद महिमा गायन से आर्यसमाज की गौरव श्रीमती प्रकाशवती शास्त्री का परिश्रम प्रशंसा योग्य है ।

मैं चाहता हूँ कि इस ग्रन्थ का अधिकाधिक प्रचार हो और उन की रचनाओं से अधिक से अधिक लाभान्वित हों । आशा है कि प्रचार-प्रसार के लिए यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी ।

शुभ कामनाओं के साथ ।

शुभेच्छु :
स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती
अधिष्ठाता, वैदिक धर्म प्रचार
१५ हनुमान् रोड, नई दिल्ली-१

दु:ख शमनानुवाद

पूज्य माता श्रीमती प्रकाशवती जी बुग्गा द्वारा रचित ग्रन्थ सामवेद का भाषानुवाद देखा। पिछले कतिपय वर्षों से आप के द्वारा विरचित भक्ति भावनाओं से गुम्फित छन्दों का अवलोकन करता रहा हूँ। काव्य करने की आप में मौलिक प्रतिभा है। सामवेद के मन्त्रों का जिस हृदयाह्लादक शैली में आप ने पद्यबद्ध अनुवाद किया है उसकी जितनी भी प्रशंसा की जाय कम है। लेखन द्वारा यश अर्जित करने की इच्छा आप में लेशमात्र भी नहीं रही है। आप का लेखन तो समाज में व्याप्त कुरीतियों, कुसंस्कारों तथा कुप्रथाओं के समूलोच्छेदनार्थ होता है। सामवेद के पद्यानुवाद में आप विगत कई वर्षों से संलग्न रही हैं। प्रसंगवशात् इस के कुछ स्थलों का मैंने अवलोकन भी किया है। मेरी यह दृढ़ धारणा है कि आपके द्वारा किया गया यह सत्प्रयास दिग्भ्रमित तथा अशान्त मानव को शाश्वत शान्ति प्राप्त कराने में सहायक होगा। वस्तुत: साम शब्द का अर्थ ही होता है जो दु:खों का शमन करे। इस अनुवाद द्वारा जनमानस अपनी भाषा में प्रभु वाणी का पारायण कर स्वयं के सन्तप्त हृदय को परमानन्द की अनुभूति करा सकेगा ऐसा मेरा विश्वास है। मानव के अन्त:करण को उदात्त भावनाओं द्वारा परितृप्त करने वाले सुख और शान्ति के अमृत स्रोत प्रभु के सन्देश तथा लोकभाषाबद्ध उन का यह काव्यानुवाद 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' होवे ऐसी मेरी मंगल-कामना है। ग्रन्थ लेखिका सात्त्विक विचार वाली विदुषी तथा साहित्य की विविध विधाओं में नितान्त निपुण हैं। यावत् सामर्थ्य मनसा वाचा कर्मणा समाज सेवा में सतत संलग्न रहती हैं। परमात्मा इन्हें अनुकूल स्वास्थ्य तथा दीर्घायुष्य दे जिस से इन के द्वारा रचित सत् साहित्य से समाज अधिकाधिक लाभान्वित हो सके।

विदुषामनुचर :
भारद्वाज पाण्डेय
एम० ए० साहित्याचार्य
आर्यसमाज हनुमान् रोड, नई दिल्ली

॥ ओ३म् ॥

सामवेद-संहिता

पूर्वाचिकः (छन्द आर्चिकः)

आग्नेयं काण्डम्

अथ प्रथमोऽर्धः

इसके ११४ मंत्र हैं।

ओ३म् अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि ॥१॥

आगे बढ़ाने वाले हे प्रभो,
मेरे हृदय में आइए।
अज्ञान का कर नाश,
हम को त्याग भाव सिखाइए ॥

त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः। देवेभिर्मानुषे जने ॥२॥

हे मार्गदर्शक प्रभो हमें, मार्ग दिखलाते रहो।
ज्ञान कर्म की इन्द्रियों को, शुभ कर्म सिखलाते रहो ॥

अग्निं दूतं वृणीमहे होतारं विश्ववेदसम्। अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥३॥

हे सर्वज्ञानी दिव्य अग्ने, आत्मिक यज्ञ हम से करा।
तेरी कृपा ही शक्ति देती, हम को तू ही आगे बढ़ा ॥

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनद् द्रविणस्युर्विपन्यया। समिद्धः शुक्र आहुतः ॥४॥

मैं स्तुति से सिद्ध कर, अग्नि का प्रकाश वरता।
अग्नि हमारे अज्ञान के, सारे संकट नाश करता ॥

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम्। अग्ने रथं न वेद्यम् ॥५॥

मैं स्तुति करता तुम्हारी, मित्र सम प्यारा तू ही।
है अतिथि भी तू हमारा, सब वस्तु भण्डारा तू ही ॥

त्वं नो अग्ने महोभिः पाहि विश्वस्या अरातेः। उत द्विषो मर्त्यस्य ॥६॥

हे प्रकाशदाता दिव्य अग्ने, ज्ञान की अग्नि जला।
द्वेष आदि भाव गन्दे, दूर सब मन से भगा॥

एह्यू षु ब्रवाणि तेऽग्न इत्थेतरा गिरः। एभिर्वर्धास इन्दुभिः ॥७॥

आ आ प्रभो आ आ प्रभो,
स्वागत मैं तेरा करता हूँ।
तेरे प्रेम भरे शब्दों से,
अपने मन को भरता हूं॥

आ ते वत्सो मनो यमत् परमाच्चित् सधस्थात्। अग्ने त्वां कामये गिरा ॥८॥

मेरा मन है पुत्र तुम्हारा, तुझ से ही सुख पाता है।
चाहे तुम कितने ऊँचे हो, तेरे से ही नाता है॥

त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत। मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः ॥९॥

सारे जग को मन में धरके, भक्त तुझे पा जाता है।
मन से तुझ को ध्याते ध्याते, तेरी ज्योति पा जाता है॥

अग्ने विवस्वदाभरास्मभ्यमूतये महे। देवो ह्यसि नो दृशे ॥१०॥

मेरी यात्रा यज्ञ है, मार्ग मुझे दिखलाइए।
अपनी शक्ति से मुझे, उद्देश्य पर पहुंचाइए॥

इति प्रथमा दशतिः (प्रथमः खण्डः)

नमस्ते अग्न ओजसे गृणन्ति देव कृष्टयः। अमैरमित्रमर्दय ॥१॥

अपना आपा अर्पण करता, शक्ति पाने के लिए।
शत्रु सारे नष्ट कर दे, शुभ कर्म कराने के लिए॥

दूतं वो विश्ववेदसं हव्यवाहममर्त्यम्। यजिष्ठमृञ्जसे गिरा ॥२॥

उस सर्वोत्तम देवदूत के, गीत सदा मैं गाता हूँ।
त्याग भाव से कर्म करूं, तुझे यजमान बनाता हूं॥

उप त्वा जामयो गिरो देदिशतीर्हविष्कृतः। वायोरनीके अस्थिरन् ॥३॥

प्राणायाम करें जो मानव, और गीत प्रभु के गाते हैं।
तेरी सत्ता सत्य सनातन में, लीन वही हो जाते हैं॥

उप त्वाग्ने दिवे दिवे दोषावस्तर्धिया वयम्। नमो भरन्त एमसि ॥४॥

हे अज्ञान हटाने वाले, तेरी उपासना हम करें।
अहंकार का भूत भगाकर, तेरी आराधना हम करें॥

जराबोध तद्विविड्ढि विशे विशे यज्ञियाय। स्तोमं रुद्राय दृशीकम् ॥५॥

त्यागभाव को धारण कर, जो तेरी स्तुतियां गाता है।
भर जा तू उसके गीतों में, जो अपना आप गंवाता है॥

प्रति त्यं चारुमध्वरं गोपीथाय प्रहूयसे। मरुद्भिरग्न आ गहि ॥६॥

हे तेजधारी सुविचार दो, मानसिक यज्ञ को करूं।
ऐसा मुझे आधार दो, तेरी शरण को ही वरूं॥

अश्वं न त्वा वारवन्तं वन्दध्या अग्निं नमोभिः। सम्राजन्तमध्वराणाम् ॥७॥

यज्ञ के सम्राट् का, वन्दन सदा करते रहें।
शीघ्रगामी अश्वसम, विघ्न सब हरते रहें॥

और्वभृगुवच्छुचिमप्नवानवदा हुवे। अग्निं समुद्रवाससम् ॥८॥

मैं हूं ज्ञानी कर्मशील हूं, ज्ञान की ज्योति बढ़ा रहा।
अन्तःकरण में रहने वाली, अमर प्रभा को जगा रहा॥

अग्निमिन्धानो मनसा धियं सचेत मर्त्यः। अग्निमिन्धे विवस्वभिः ॥९॥

यज्ञ की अग्नि जला कर,
मन में हम चिन्तन करें।
सब ओर फैली तव प्रभा से,
चेतना धारण करें॥

आदित् प्रत्नस्य रेतसो ज्योतिः पश्यन्ति वासरम्। परो यदिध्यते दिवि ॥१०॥

जिसने सारा जगत् बनाया, सारा दिन प्रकाश करे।
भक्त के मन आकर वो ही अज्ञान तिमिर का नाश करे ॥

इति द्वितीया दशतिः (द्वितीयः खण्डः)।

अग्निं वो वृधन्तमध्वराणां पुरुतमम्। अच्छा नप्त्रे सहस्वते ॥१॥

यज्ञों का विस्तार करो, विश्वप्रेम प्रसार करो।
शक्तिशाली अग्नि को पाओ, प्राणीमात्र से प्यार करो ॥

अग्निस्तिग्मेन शोचिषा यंसद्विश्वं न्य३त्रिणम्। अग्निर्नो वंसते रयिम् ॥२॥

यह तेजधारी अग्नि, अपने तेज से सब पाप हरता।
यज्ञनाशक कामादि गण, नाश कर आनन्द भरता ॥

अग्ने मृड महाँ असस्यय आ देवयुं जनम्। इयेथ बर्हिरासदम् ॥३॥

तुम बड़े आलोकधारी, मेरे मन में आइए।
दिव्यता जो चाहता है, उसमें ही बस जाइए ॥

अग्ने रक्षा णो अंहसः प्रति स्म देव रीषतः। तपिष्ठैरजरो दह ॥४॥

हे अजर तुम ही शक्तिशाली, शक्तिजल बरसाइए।
शक्तिनाशक पापरोग मूल से विनसाइए ॥

अग्ने युङ्क्ष्वा हि ये तवाश्वासो देव साधवः। अरं वहन्त्याशवः ॥५॥

उन्नतिपथ नेता आप हैं, हम को रथ में ले जाओ।
घोड़े जैसी शक्तिशाली, किरणों को भी साथ सजाओ ॥

नि त्वा नक्ष्य विश्पते द्युमन्तं धीमहे वयम्। सुवीरमग्न आहुत ॥६॥

जग के पालक प्यारे स्वामी, तेरी शरण हम आते हैं।
हे अग्ने तू वीर है सच्चा, तुझ को ही हम ध्याते हैं ॥

अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम्। अपां रेतांसि जिन्वति ॥७॥

सब से ऊंची दिव्य शक्ति, अग्नि ज्ञान कर्म प्रदाता।
द्युलोक में रह कर पाले, सारी धरा से कर्म कराता॥

इममू षु त्वमस्माकं सनिं गायत्रं नव्यांसम्। अग्ने देवेषु प्र वोचः ॥८॥

हे ऊपर ले जाने वाले, अपना सुंदर गीत सिखा।
ठीक ठीक सब बांट सकें, ऐसा हम को बोध करा॥

तं त्वा गोपवनो गिरा जनिष्ठदग्ने अङ्गिरः। स पावक श्रुधी हवम् ॥९॥

हे अग्ने तू मेरे सारे, अंगों में ही रहता है।
अज्ञान पाप को भस्म बनाता, भक्त तुझे जन कहता है॥

परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत्। दधद्रत्नानि दाशुषे ॥१०॥

यह अग्नि है द्रष्टा सब का, सब रत्नों का स्वामी है।
दानशील को ही देता है, रत्नभण्डारी नामी है॥

उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥११॥

उसी प्रभु की दिव्य शक्तियाँ, कण कण में हैं चमक रहीं।
प्रभु के दर्श का ज्ञान करातीं, सूर्य-किरणें दमक रहीं॥

कविमग्निमुप स्तुहि सत्यधर्माणमध्वरे। देवममीवचातनम् ॥१२॥

हे नरजीवन यज्ञ के कर्ता, तुझ अग्नि का ध्यान धरूँ।
दुःखरोग और पाप के नाशक, तेरे भक्ति रस का पान करूँ॥

शं नो देवीरभिष्टये शं नो भवन्तु पीतये। शंयोरभि स्रवन्तु नः ॥१३॥

हे प्रभो कल्याणकर्ता, दिव्यशक्ति दीजिए।
शांति और सुखसाधनों की, सब पे वर्षा कीजिए॥

कस्य नूनं परीणसि धियो जिन्वसि सत्पते। गोषाता यस्य ते गिरः ॥१४॥

हे सत्य के रक्षक व पालक, मेरे काम पूरे कीजिए।
अपनी स्तुति के तेज से, अंग अंग भर दीजिए॥

इति तृतीया दशतिः (तृतीयः खण्डः)।

यज्ञा यज्ञा वो अग्नये गिरा गिरा च दक्षसे । प्र प्र वयममृतं जातवेदसं प्रियं मित्रं न शंसिषम् ॥१॥

यज्ञ से अग्नि बढ़ाओ, मित्र तुम उसको बनाओ।
निज वाणी को सच्ची बना, गुण प्रभु के नित्य गाओ ॥

पाहि नो अग्न एकया पाह्यूत द्वितीयया । पाहि गीर्भिस्तिसृभि-रूर्जांपते पाहि चतसृभिर्वसो ॥२॥

रक्षा करो हमारी, सब को बसाने वाले।
बल के तुम्हीं हो स्वामी, शक्ति बढ़ाने वाले ॥
ऋग्वेद की ऋचाएं, रक्षा करें हमारी।
यजु साम संहिताएं अथर्व भी होवें लाभकारी ॥

बृहद्भिरग्ने अर्चिभिः शुक्रेण देव शोचिषा । भरद्वाजे समिधानो यविष्ठ्य रेवत्पावक दीदिहि ॥३॥

अज्ञान नाश करके, मन में करो उजाला।
तम का संहार करके, चमके ज्योति ज्वाला ॥
जो भक्त यज्ञ करता, उसके हृदय में चमके।
रहता सदा नया तू, शम दम के साथ दमके ॥

त्वे अग्ने स्वाहुत प्रियासः सन्तु सूरयः । यन्तारो ये मघवानो जनानामूर्वं दयन्त गोनाम् ॥४॥

भक्ति करे जो तेरी प्रभु, वह है सब का प्यारा।
आत्मा के धन को पाके, ज्योति का देने हारा ॥
सब को ही है वह बढ़ाता, सब को ही है पथ दिखलाता।
तेरा है प्रेम हर भक्त को, अद्‌भुत प्रभा दिखलाता ॥

अग्ने जरितर्विश्पतिस्तपानो देव रक्षसः । अप्रोषिवान् गृहपते महाँ असि दिवस्पायुर्दुरोणयुः ॥५॥

हे दिव्य अग्ने तू ही, सारी प्रजा का पालक।
सब के अन्दर तू रहता है, कुविचार का नाशक ॥
चमके तेरी ज्योति सदा ही, तेरी प्रभा सुखकारी।
सब से बड़ा तू ही तो है, सुख शांति भण्डारी ॥

अग्ने विवस्वदुषसश्चित्रं राधो अमर्त्य । आ दाशुषे जातवेदो वहा त्वमद्या देवाँ उषर्बुधः ॥६॥

जिस भक्त हृदय में, सदा ज्ञान का भानु चमके ।
रत्नों से भरा खजाना, उसी के मन में दमके ॥
प्रभु कृपा से ही मानव, दिव्य गुणों को अपनाता ।
अर्पण करके अपना आपा, उसको ही पा जाता ॥

त्वं नश्चित्र ऊत्या वसो राधांसि चोदय । अस्य रायस्त्वमग्ने रथीरसि विदा गाधं तुचे तु नः ॥७॥

हे सुखदाता सुख पाने के, साधन हम को भेज पिता ।
शक्तिदाता ईश्वर ! मेरी सन्तानों को दे आधार पिता ॥

त्वमित्सप्रथा अस्यग्ने त्रातर्ऋतः कविः । त्वां विप्रासः समिधान दीदिव आ विवासन्ति वेधसः ॥८॥

परम सत्य तू क्रांतिकारी, तेरी ज्योति जगमग करती ।
अपना आपा जो तुझ पर वारे, उसको कामों में है भरती ॥

आ नो अग्ने वयो वृधं रयिं पावक शंस्यम् । रास्वा च न उपमाते पुरुस्पृहं सुनीती सुयशस्तरम् ॥९॥

ऊंचा जीवन कर हमारा,
यश हमें दे दीजिए ।
कार्य शुभ हों सब हमारे,
नीति ऐसी कीजिए ॥

यो विश्वा दयते वसु होता मन्द्रो जनानाम् । मधोर्न पात्रा प्रथमान्यस्मै प्र स्तोमा यन्त्वग्नये ॥१०॥

मधुभावों के भर कर प्याले,
तेरे सम्मुख लाई हूं ।
पर हितकारी को ही पहुंचे,
आशा लेकर आई हूं ॥

इति चतुर्थी दशतिः (चतुर्थः खण्डः) ।

एना वो अग्नि नमसोर्जो नपातमा हुवे। प्रियं चेतिष्ठमरतिं स्वध्वरं विश्वस्य दूतममृतम् ॥१॥

करूं उपासना अमर दूत को,
करके अपना आपा अर्पण।
शक्ति का वही देने वाला,
शुभ कर्मों में प्रेरे मन॥

शेषे वनेषु मातृषु सं त्वा मर्तास इन्धते। अतन्द्रो हव्यं वहसि हविष्कृत आदिद्देवेषु राजसि ॥२॥

हे जगजननी हे अनुपम देवी, मन मन्दिर में हो रहती।
जो जन तुझ को भजते हैं, उनमें तेरी अग्नि दहती॥
कर्मों का फल देने में, कभी न देर लगाती।
दुराचरण को दूर भगा कर, सब को है हर्षाती॥

अदर्शि गातुवित्तमो यस्मिन्व्रतान्यादधुः। उपो षु जातमार्यस्य वर्धनमग्नि नक्षन्तु नो गिरः ॥३॥

ऊंचे से ऊंचे पथ पर, ले जाने वाला देख लिया।
कैसे शुभ संकल्प बनावें, यह भी हमने सीख लिया॥
देख देख कर रचना तेरी, सदा प्रेरणा पाते।
सदा चमकने वाले स्वामी, तेरी महिमा गाते॥

अग्निरुक्थे पुरोहितो ग्रावाणो बर्हिरध्वरे। ऋचा यामि मरुतो ब्रह्मणस्पते देवा अवो वरेण्यम् ॥४॥

हे अग्ने हे गीत पुरोहित, तेरी महिमा हम गावें।
गाते गाते तेरी महिमा, ऊपर ऊपर उठते जावें॥
तेरे गीत मनोहर प्रभु जी, हमें सहारा देते हैं।
तू गीतों का अमर भण्डारी, तुझ से वाणी लेते हैं॥

अग्निमीडिष्वावसे गाथाभिः शीरशोचिषम्। अग्नि राये पुरुमीढ श्रुतं नरोऽग्निः सुदीतये छर्दिः ॥५॥

सोई ज्योति जगा ले मानव, शरण पाने के लिए।
ऐश्वर्य चाहे, ज्ञान चाहे, या भरण पाने के लिए॥
कर स्तुति उस अग्नि की, वही ऊंचे ले जाए।
सुखकारी ज्ञान प्रकाश भी, उससे तू पा जाए॥

श्रुधि श्रुत्कर्ण वह्निभिर्देवैरग्ने सयावभिः। आ सीदतु बर्हिषि मित्रो अर्यमा प्रातर्यावभिध्वरे ॥६॥

प्रातः सायं शक्ति लेकर, मेरे हृदय में आइए।
ज्ञान कर्म और यज्ञ के हित, दिव्य शक्ति लाइए ॥

प्र दैवोदासो अग्निर्देव इन्द्रो न मज्मना। अनु मातरं पृथिवीं वि वावृते तस्थौ नाकस्य शर्मणि ॥७॥

अंतरिक्ष का सूर्य जैसे सेवा करता धरा को।
ज्ञान का रवि प्रकट करता, आलोक परा को ॥

अध ज्मो अध वा दिवो बृहतो रोचनादधि। अया वर्धस्व तन्वा गिरा ममा जाता सुक्रतो पृण ॥८॥

उत्तम कर्म कराने वाले तू इस पृथिवी का राजा।
मेरी वाणी को दिव्य बना, जीवमात्र का भरण करा जा ॥

कायमानो वना त्वं यन्मातॄरजगन्नपः। न तत्ते अग्ने प्रमृषे निवर्त्तनं यद् दूरे सन्निहाभुवः ॥९॥

शुभ संकल्पों वाली अग्नि कभी न शीतल होने पाए।
मैं न उसको सहन करूं, मुझ से दूर दूर हो जाए ॥

नि त्वामग्ने मनुर्दधे ज्योतिर्जनाय शश्वते। दीदेथ कण्व ऋतजात उक्षितो यं नमस्यन्ति कृष्टयः ॥१०॥

ज्योति दर्शक अग्ने तेरा, मननशील ने ध्मान किया।
अपना आपा अर्पण करके श्रेष्ठ कर्म का ज्ञान लिया ॥
सत्यज्ञान के शीतल जल से तुझ को ज्ञानी सींचा करता।
चमक-चमक कर तू भी उसके अन्तस्तल में आनंद भरता ॥

इति प्रथमप्रपाठके प्रथमोऽर्धः समाप्तः ॥

इति पंचमो दशतिः (पंचमः खण्डः)।

अथ द्वितीयोऽर्धः

देवो वो द्रविणोदाः पूर्णां विवष्ट्वासिचम्। उद्वा सिञ्चध्वमुप वा पृणध्वमादिद् वो देव ओहते ॥१॥

पूर्ण है प्रभु पूर्ण देता, पूर्ण होगी कामना।
पूर्ण हो जब भेंट तेरी, पूरी होगी साधना ॥

प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनृता। अच्छा वीरं नर्यं पंक्तिराधसं देवा यज्ञं नयन्तु नः ॥२॥

यज्ञ होगा इन्द्रियों से, ज्ञान की जो दायिनी।
शक्तियों का पुंज दे दो, ज्योति की जो वाहिनी ॥
वेदवाणी दान कर दो, वेद का ही ध्यान हो।
वेद रक्षक तुम सदा, वेद का ही ज्ञान दो॥

ऊर्ध्व ऊ षु ण ऊतये तिष्ठा देवो न सविता। ऊर्ध्वो वाजस्य सनिता यदञ्जिभिर्वाघद्भिर्विह्वयामहे ॥३॥

रक्षा करो हे अग्ने तेरा प्रकाश अनुपम।
रवि सा रहे तू प्रेरक, सुन प्रार्थना स्तुति मम ॥

प्र यो राये निनीषति मर्तो यस्ते वसो दाशत्। स वीरं धत्ते अग्न उक्थशंसिनं त्मना सहस्रपोषिणम् ॥४॥

अमर धन जो चाहता, जग को बसाने वाले।
अर्पण करे वह सब कुछ, शुभ राह दिखाने वाले ॥

प्र वो यह्वं पुरूणां विशां देवयतीनाम्। अग्निं सूक्तेभिर्वचोभिर्वृणीमहे यं समिदन्य इन्धते ॥५॥

तेरी अलौकिक ज्योति सज्जन, चित्त में धारण करें।
हम मधुर वचनावली से, तेरा आवाहन करें॥
पूज्य स्वामी हो सभी के, संकल्प शुभ प्रदान कर।
तेजधारी कर हमें, और प्रतिभावान् कर॥

अयमग्निः सुवीर्यस्येशे हि सौभगस्य। राय ईशे स्वपत्यस्य गोमत ईशे वृत्रहथानाम् ॥६॥

आलोकमय प्रभु रूप तेरा, शांतिदायक है सदा।
विघ्न सारे दूर करके, उन्नत बनाता है सदा॥
दुःख पाप सारे नष्ट कर, धन बढ़ाता है तू ही।
भ्रमजाल जो हों मन में, उन को हटाता है तू ही॥

त्वमग्ने गृहपतिस्त्वं होता नो अध्वरे। त्वं पोता विश्ववार प्रचेता यक्षि यासि च वार्यम् ॥७॥

मेरे कामों का तू पोषक, मेरे घर का स्वामी है।
देता लेता तू वैभव को, तू उन्नति पथगामी है॥

सखायस्त्वा ववृमहे देवं मर्तास ऊतये। अपां नपातं सुभगं सुदंससं सुप्रतूर्तिमनेहसम् ॥८॥

पाप रहित तुम देव हो मेरे सुन्दर प्यारे शांतिस्वरूप।
उत्तम कर्मों को करवाते, पाप रहित भूपन के भूप॥

इति षष्ठी दशतिः (षष्ठः खण्डः)।

आ जुहोता हविषा मर्जयध्वं नि होतारं गृहपतिं दधिध्वम्। इडस्पदे नमसा रातहव्यं सपर्यता यजतं पस्त्यानाम् ॥१॥

करो यज्ञ तुम शुभ भावों से, शुद्ध करो निज मन का द्वार।
बठा इस में यज्ञ का स्वामी, पूजो इस को बारंबार॥
अर्पण कर दो अपना सब कुछ, तब यह पूजा हो प्यारी।
त्याग-भाव हृदय में भरके, बन जाए मंगलकारी॥

चित्र इच्छिशोस्तरुणस्य वक्षथो न यो मातरावन्वेति धातवे। अनूधा यदजीजनदधा चिदा ववक्षत् सद्यो महि दूत्यं३चरन् ॥२॥

दिव्य शक्ति के धारणकर्ता, अग्ने तेरा रूप महान।
संकल्परूप हे ज्योतिधारी तेरी शक्ति गुण की खान॥

इदं त एकं पर ऊ त एकं तृतीयेन ज्योतिषा सं विशस्व। संवेशन-स्तन्वे३ चारुरेधि प्रियो देवानां परमे जनित्रे ॥३॥

परम देव इक तेरी ज्योति, जग को जगमग करती है।
दूजी चेतन में झलकाकर, उसमें शक्ति भरती है॥
तीजी ज्योति आनन्ददाता, सब को आनन्द देती है।
दिव्य शक्ति की दात्री बनकर, दुःख सब का हर लेती है॥

इमं स्तोममर्हते जातवेदसे रथमिव सं महेमा मनीषया। भद्रा हि नः प्रमतिरस्य संसद्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥४॥

ज्योतिरूप प्रभु हम तेरी, महिमा निशदिन गावें।
आगे आगे जो ले जाएं, वही गीत हम गावें।
शुभकारी हो मति हमारी, तेरी करुणा पावें॥

मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आ जातमग्निम्। कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्नः पात्रं जनयन्त देवाः ॥५॥

सब से ऊंचा सुख का दाता,
जड़ जंगम में रमता है।
ढूँढ ढूंढ़ कर यत्न करो,
वह सत्य भवन में जमता है॥

वि त्वदापो न पर्वतस्य पृष्ठादुक्थेभिरग्ने जनयन्त देवाः। तं त्वा गिरः सुष्टुतयो वाजयन्त्याजिं न गिर्ववाहो जिग्युरश्वाः ॥६॥

मेघ देता जल जगत् को, तू प्रेरणा है दे रहा।
कर्म करने के लिए विद्वान् तुझ से ले रहा॥
वीर घोड़े युद्ध को, आगे बढ़ाते हैं सदा।
स्तुति गीत हम सब को प्रभु दर्शन कराते हैं सदा॥

आ वो राजानमध्वरस्य रुद्रं होतारं सत्ययजं रोदस्योः। अग्निं पुरा तनयित्नोरचित्ताद्धिरण्यरूपमवसे कृणुध्वम् ॥७॥

जागो जन-जीवन है जब तक, उस अग्नि का ध्यान करो।
जब तक जगती आत्मज्योति, रक्षक का आह्वान करो॥
आत्म-यज्ञ करवा कर
वह सब विघ्नों का नाश करे।
सत्य लाभ हित वह होता,
निज तेज यज्ञ प्रकाश भरे॥

इन्धे राजा समर्यो नमोभिर्यस्य प्रतीकमाहुतं घृतेन। नरो हव्येभिरीडते सबाध आग्निरग्रमुषसामशोचि ॥८॥

जो आग तेरे सामने है, वह प्रभु का है निशान।
मेरा प्रभु तब जागता, कर्म जब करते महान॥
घी डालने से आग बढ़ती, घर को बनाती दीप्तिमान्।
निर्विघ्न स्तुतियों से हमें, दर्शन देता कीर्तिमान्॥
अभिमानी से दूर रहता, विनयी के जो आस पास।
करके समर्पण सर्व सत्ता आज बन जा उसका दास॥

प्र केतुना बृहता यात्यग्निरा रोदसी वृषभो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुपमामुदानडपामुपस्थे महिषो ववर्ध ॥९॥

ज्ञान का झण्डा लिये, वह ज्ञानी आगे जा रहा।
चमक वाले बादलों में, द्युलोक में वह छा रहा ॥
शब्द उसका गूंजता, चारों ओर मेरे गा रहा।
शुभ कर्म करते देख मुझ को, इस ओर बढ़ता आ रहा ॥

अग्निं नरो दीधितिभिररण्योर्हस्तच्युतं जनयत प्रशस्तम्। दूरेदृशं गृहपतिमथव्युम् ॥१०॥

मन में रहता वह प्रभु, बुद्धि में भी संचरे।
अरणियों में आग रह, ज्यों शीतता सब की हरे ॥
दूर के देखें नजारे, उस की कृपा से हम सदा।
आत्मा को शक्ति देता, वास उसमें करता सर्वदा ॥

इति सप्तमी दशतिः (सप्तमः खण्डः)।

अबोध्यग्निः समिधा जनानां, प्रति धेनुमिवायतीमुषासम्। यह्वा इव प्र वयामुज्जिहानाः प्र भानवः सस्रते नाकमच्छ ॥१॥

मधुर दूध को देने वाली गाय सब की माता है।
प्रातःकाल में उषा सुन्दरी जन जन को सुखदाता है ॥
सुख को पाता है वह प्राणी संकट उस का भगता है।
उषा काल में यज्ञ करे जो, जिसमें अग्नि जगता है ॥
ज्ञानी ध्यानी सारे मानव, सुख पाने को उत्सुक रहते।
ज्ञान रश्मियां सुख दाता हैं वेदमंत्र ऐसा हैं कहते ॥

प्र भूर्जयन्तं महां विपोधां, मूरैरमूरं पुरां दर्माणम्। नयन्तं गीर्भिर्वना धियं धा हरिश्मश्रुं न वर्मणा धनर्चिम् ॥२॥

जयशील रक्षक सज्जनों का, ऊंचा करे जो शुद्ध मन को।
उस अग्नि को अपना बना, जो नष्ट करता दुष्ट जन को ॥
जगमगाती किरणें जैसे, रवि को घेरतीं चारों ओर से।
लक्ष्य मेरे ध्यान का, बन जाए तू सब छोर से ॥

शुक्रं ते अन्यद् यजतं ते अन्यद् विषुरूपे अहनी द्यौरिवासि।
विश्वा हि माया अवसि स्वधावन् भद्रा ते पूषन्निह रातिरस्तु ॥३॥

एक तेरा रूप है जो, ज्ञान से दिन रात चमके।
दूसरा जग में समाया, कर्म-कर्ता में जो दमके।
अमृतमय हैं रूप दोनों, रक्षा करो इनकी सदा।
कल्याण मंगल की यहां, होती रहे वर्षा सदा॥

इडामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध। स्यान्नः
सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे ॥४॥

हे ज्ञानमय ईश्वर हमें, शुभ सत्यवाणी दीजिए।
शुभ कर्म हम नित ही करें, प्रेरणा वह कीजिए॥
जब भक्त तेरा ग्रहण करता, शरण तेरी प्रेम से।
तू शक्ति अपनी दान करता, उसको निरंतर नेम से॥

प्रहोता जातो महान्नभोविन्नृषद्मा सीदवपां विवर्ते। दधद्यो धायि
सुते वयांसि यन्ता वसूनि विधते तनूपाः ॥५॥

हे अग्ने इस जीवन-यज्ञ में, तेरी ज्योति जला करती।
यज्ञ कराने वाले तुझ से, मेरी गाड़ी चला करती॥
मेरे मन में बैठा तू ही, सारे शुभ काम कराता है।
उड़ने वाले चंचल मन को, तू ही वश में लाता है॥

प्र सम्राजमसुरस्य प्रशस्तं पुंसः कृष्टीनामनुमाद्यस्य। इन्द्रस्येव
प्र तवसस्कृतानि वन्दद्वारा वन्दमाना विवष्टु ॥६॥

शुभ कामों के कर्ता नर का,
वह करता रहता अभिनन्दन।
अज्ञान भगाने वाला योद्धा,
इंद्र बनाता सब का जीवन॥

अरण्योर्निहितो जातवेदा गर्भ इवेत्सुभृतो गर्भिणीभिः। दिवे दिवे
ईड्यो जागृवद्भिर्हविष्मद्भिर्मनुष्येभिरग्निः ॥७॥

मेरे मनमंदिर में स्वामी, ऐसी ज्योति जगा करती।
मन बुद्धि मिल उसे बढ़ावें, कर्मशक्ति ऊंचा करती॥
माता के प्रेम उदर में,
शिशु का जैसे पालन होता।
तेरी अमर ज्योति से,
भगवन् शुभ कामों का पोषण होता॥

सनादग्ने मृणसि यातुधानान् न त्वा रक्षांसि पृतनासु जिग्युः। अनु दह सहमूरान्कयादो मा ते हेत्या मुक्षत दैव्यायाः ॥८॥

तेरी कृपा से नष्ट होते,
मार्ग के सारे व्यवधान।
पर-पीड़क परमांस के भोजी,
जन का नाश करो भगवान ॥

इति अष्टमो दशतिः (अष्टमः खण्डः)।

अग्न ओजिष्ठमा भर द्युम्नमस्मभ्यमध्रिगो। प्र नो राये पनीयसे रत्सि वाजाय पन्थाम् ॥१॥

हाथ जोड़ हम मांग रहे, सच्चा धन हम को दे भगवान।
सुख देने वाली राहों पर, चलते रहें हम तुझे जान ॥

यदि वीरो अनुष्यादग्निमिन्धीत मर्त्यः। आजुह्वद्धव्यमानुषक् शर्म भक्षीत दैव्यम् ॥२॥

हे वीर कर ले ज्ञान का तू, यज्ञ अपने मन भवन में।
कर्म की नित डाल आहुतियां, पा अलौकिक आनन्द मन में ॥

त्वेषस्ते धूम ऋण्वति दिवि संच्छुक्र आततः। सूरो न हि द्युता त्वं कृपा पावक रोचसे ॥३॥

ज्योति वाले तेरी शक्ति, नीलगगन में जगमग जगती।
रवि की आभामयी किरण सम, शोभाशाली लगती ॥

त्वं हि क्षैतवद्यशोऽग्ने मित्रो न पत्यसे। त्वं विचर्षणे श्रवो वसो पुष्टिं न पुष्यसि ॥४॥

सूर्य के सम ऐश्वर्यशाली, भक्त तेरा यश जानते।
वेद ज्ञान से शक्ति देता, घट घट में तुम को मानते ॥

प्रातरग्निः पुरुप्रियो विशः स्तवेतातिथिः। विश्वे यस्मिन्नमर्त्ये हव्यं मर्तास इन्धते ॥५॥

गीत उसी प्यारे के गाओ,
कण कण में जो समा रहा।
अपना सब कुछ उस को दे दो,
जो घट घट में ज्योति जगा रहा ॥

यद्वाहिष्ठं तदग्नये बृहदर्च विभावसो। महिषीव त्वद्रयिस्त्वद्वाजा उदीरते ॥६॥

सुख वाले सर्वोत्तम साधन, अग्नि के अर्पण करते हैं।
उसके दानों की क्या गिनती, उनको पा आगे बढ़ते हैं॥

विशो विशो वो अतिथिं वाजयन्तः पुरुप्रियम्। अग्निं वो दुर्यं वचः स्तुषे शूषस्य मन्मभिः ॥७॥

मेरे घर आए तुम अतिथि, स्वागत मैं तेरा करूं।
सब का प्यारा रचने हारा, तेरे गीतों से मन भरूं॥

बृहद्वयो हि भानवेऽर्चा देवायाग्नये। यं मित्रं न प्रशस्तये मर्तासो दधिरे पुरः ॥८॥

चिरंजीवी हो वीर हमारा, सब का जो यशदाता है।
नेता बन कर अपने देश का, जन जन का सुखदाता है॥

अगन्म वृत्रहन्तमं ज्येष्ठमग्निमानवम्। यः स्म श्रुतर्वन्नार्क्षे बृहदनीक इध्यते ॥९॥

ज्ञान कर्म संघर्षों में जो, सब को देता शक्ति है।
सब से उत्तम पाप विनाशक, प्रभु में मेरी भक्ति है॥

जातः परेण धर्मणा यत्सवृद्भिः सहाभुवः। पिता यत्कश्यपस्याग्निः श्रद्धा माता मनुः कविः ॥१०॥

धर्म भाव से तू जन्मा है, श्रद्धा तेरी माता है।
पिता ज्ञान सब भांति स्नेही, गुरु क्रांति का दाता है॥

इति नवमी दशतिः(नवमः खण्डः)।

सोमं राजानं वरुणमग्निमन्वारभामहे। आदित्यं विष्णुं सूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिम् ॥१॥

वरुण विष्णु और सोम है तू ही, तुझ में सब गुण रहते हैं।
हे राजा तू आनन्ददाता, तुझ को अग्नि कहते हैं॥
ज्योति वाली किरणों के स्वामी,
आदित्य देव है नाम तेरा।
इन नामों से तुझे पुकारूं,
सब को शक्ति देना है काम तेरा॥

इत एत उदारुहन् दिवः पृष्ठान्या रुहन् । प्र भूर्जयो यथा पथो द्या-मङ्गिरसो ययुः ॥२॥

भक्त चले जिन राहों से,
हम उन राहों में चलते जाएं ।
यह जग जीतें प्रभु-भक्ति से,
आनन्दलोक भी पा जाएं ॥

राये अग्ने महे त्वा दानाय समिधीमहि । ईडिष्वा हि महे वृषन् द्यावा होत्राय पृथिवी ॥३॥

हे प्रभो हम हवन करते, तुझ को चमकाने के लिए ।
मधुर अद्भुत और मनोहर, दान पाने के लिए ॥

दधन्वे वा यदीमनु वोचद् ब्रह्मेति वेरु तत् । परि विश्वानि काव्या नेमिश्चक्रमिवाभुवत् ॥४॥

पहले परखो मनमंदिर में, पीछे वाणी करे प्रकाश ।
ब्रह्म वही है, वेद वही है, करता वही दुःख का नाश ॥

प्रत्यग्ने हरसा हरः शृणाहि विश्वतस्परि । यातुधानस्य रक्षसो बलं न्युब्ज वीर्यम् ॥५॥

तेजधारी तेज अपना, कर प्रकट चारों ओर से ।
नाश कर कपटी जनों का, अपने बल के जोर से ॥
दुष्ट बल से हीन हों, वीर्य उनका नष्ट हो ।
धर्मपथ के पथिक नर को, फिर कभी न कष्ट हो ॥

त्वमग्ने वसूँरिह रुद्राँ आदित्याँ उत । यजा स्वध्वरं जनं मनुजातं घृतप्रुषम् ॥६॥

हे ज्ञानदाता कर्म प्रेरक, मेरी विनय सुन लीजिए ।
शुभकारी ज्ञानी जन को, आदित्य रुद्र वसु कीजिए ॥

इति दशमी दशतिः (दशम खण्डः) ।

॥ इति प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः ॥

अथ द्वितीयः प्रपाठकः

(प्रथमोऽर्धः)

पुरु त्वा दाशिवाँ वोचेऽरिरग्ने तव स्विदा। तोदस्येव शरण आ महस्य ॥१॥

अपने स्वारथ के हित पहले करता था तेरा उपयोग।
जैसे तैसे छीन झपट कर, करता दानों का उपभोग॥

आज दया तेरी शक्ति से,
करता हूं तेरा ही ध्यान।
तुझ से बढ़ कर और न कोई,
आज हुआ यह मुझ को ज्ञान॥

प्र होत्रे पूर्व्यं वचोऽग्नये भरता बृहत्। विपां ज्योतींषि बिभ्रते न वेधसे॥२॥

गीत गाओ उस प्रभु के, जैसे ऋषिगण गाते थे।
करो स्तुति इस यज्ञ अनल की, तपस्वी जैसे ध्याते थे॥

अग्ने वाजस्य गोमत ईशानः सहसो यहो। अस्मे देहि जातवेदो महि श्रवः॥३॥

हे बली हे ज्ञानधन, आलोक हम को दीजिए।
सर्वगत ज्ञानी विधाता, अज्ञान को हर लीजिए॥

अग्ने यजिष्ठो अध्वरे देवान् देवयते यज। होता मन्द्रो वि राजस्यति स्रिधः॥४॥

हे अग्ने तू यज्ञ कराता, तू है सब से श्रेष्ठ महान।
यज्ञ आत्मा से करने को, दिव्य शक्तियां करो प्रदान॥
तू सुख दाता पाप नष्ट कर, अद्भुत शोभा पाता है।
तेरी शक्ति से ही मानव, मुक्ति पथ पर जाता है॥

जज्ञानः सप्त मातृभिर्मेधामाशासत श्रिये। अयं ध्रुवो रयीणां चिकेतदा ॥५॥

ज्ञान साधिका सात शक्तियाँ,
उत्पन्न करतीं तेरा ज्ञान।
शासक बनती धारणा शक्ति की,
आत्मिक शक्ति मिले महान ॥
सदा सहाई परमार्थ बल को,
करे प्रकाशित यह ही ज्ञान।
सारे जगत् का छोड़ सहारा,
पाता नर इस से ही त्राण ॥

उत स्या नो दिवा मतिरदितिरूत्या गमत्। सा शन्ताता मयस्करदप स्रिधः ॥६॥

कभी न टूटे सच्चा ज्ञान, प्रभु की ऐसी शक्ति महान।
सत्यमार्ग की बाधाओं का, करके नाश करे कल्याण ॥

ईडिष्वा हि प्रतीव्यां३ यजस्व जातवेदसम्। चरिष्णु धूममगृभीतशोचिषम् ॥७॥

कण कण में ज्योति उसकी राजे,
दीप्ति जिसकी जगमग राजे।
सब में समाया जो ईश्वर है,
उसी प्रभु का अग्नि नाम।
उसे जगाओ हव्य वस्तु से,
वही है सब सुख का धाम ॥

न तस्य मायया च न रिपुरीशीत मर्त्यः। यो अग्नये ददाश हव्यदातये ॥८॥

काम जो निष्काम करके, प्रेरक प्रभु के अर्पण करता।
छल बल से कोई भी शत्रु, उसके अधिकार नहीं हरता ॥

अप त्यं वृजिनं रिपुं स्तेनमग्ने दुराध्यम्। दविष्ठमस्य सत्पते कृधी सुगम् ॥९॥

दुष्टता कर दूर दुष्टों की, उन्हें सज्जन बना।
जिससे मिलजुल कर करें, तेरी प्रजा का हम भला ॥

अुष्टयग्ने नवस्य मे स्तोमस्य वीर विश्पते । नि मायिनस्तपसा रक्षसो दह ॥१०॥

अभी अभी जो की विनय, उसको प्रभु अपनाइए ।
अपनी तेज रूपी आग से, मेरे पाप ताप जलाइए ॥

इति प्रथमा दशतिः (एकादशः खण्डः) ।

प्र मंहिष्ठाय गायत ऋताव्ने बृहते शुक्रशोचिषे । उपस्तुतासो अग्नये ॥१॥

भक्तो ! बने हो तुम प्रशंसित, दानी प्रभु के गान से ।
गीत गाओ उस सत्यनेता, दिव्य ज्योति स्थान के ॥

प्र सो अग्ने तवोतिभिः सुवीराभिस्तरति वाजकर्मभिः । यस्य त्वं सख्यमाविथ ॥२॥

हे ज्ञानमय मेरे पिता, तू कर्म का कर्तार है ।
मेरा मित्र बन हे वीर, रक्षक, मेरा बेड़ा पार है ॥

तं गूर्धया स्वर्णरं देवासो देवमरतिं दधन्विरे । देवत्रा हव्यमूहिषे ॥३॥

उसी सुखरूप के गुण हम गावें, जो सब का आधार है ।
मेरे अंगों ने सौंपा है, अपने कामों का भार है ॥

मा नो हृणीथा अतिथिं वसुरग्निः पुरुप्रशस्त एषः । यः सुहोता स्वध्वरः ॥४॥

रूठ न जाए मेरा अग्नि, अतिथि जो सुन्दर हमारा ।
अच्छे काम कराता और बसाता, ज्योतिवाला प्राणप्यारा ॥

भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः । भद्रा उत प्रशस्तयः ॥५॥

हे अग्ने कल्याणकारी, तेरी शरण हम आते हैं ।
दान हमारा हो सुखदायी, गीत सदा शुभ गाते हैं ॥

यजिष्ठं त्वा ववृमहे देवं देवत्रा होतारममर्त्यम् । अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥६॥

हे देवों के देव प्रभो ! तुझ को ही हम अपनाते हैं ।
जीवन परहित ही जीने की, राह तुझी से पाते हैं ॥

तदग्ने द्युम्नमा भर यत् सासाहासदने कं चिदत्रिणम् । मन्युं जनस्य दूढ्यम् ॥७॥

हे तेजधारी तेज दो, मैं क्रोध पर वश पा सकूं ।
मनमंदिर में जो घुसा है, दुष्ट उसे भगा सकूं ॥

यद्वा उ विश्पतिः शितः सुप्रीतो मनुषो विशे । विश्वेदग्निः प्रति रक्षांसि सेधति ॥८॥

जाग जाग अय तीक्ष्ण अग्ने, मेरे मन में जाग ।
भाग भाग अय पापवासना, मेरे मन से भाग ॥

इति द्वितीया दशतिः (द्वादशः खण्डः) ।

इत्याग्नेयं काण्डं पर्व वा ।

इति प्रथमोऽध्यायः । इति प्रथमं पर्व ।

अथ ऐन्द्रं काण्डम्

अथ द्वितीयोऽध्यायः

तद्वो गाय सुते सचा पुरुहूताय सत्वने । शं यद्गवे न शाकिने ॥१॥

गीत गाओ उसी इन्द्र का, जिसका इन्द्रियां पूजन करें ।
आत्मा के यज्ञ से जो सदा, कल्याण सब का ही करें ।
ज्ञान में भी, कर्म में भी, जो प्रभु सदा सुखदायक है ।
जीवन भर के शुभ कामों का, वही हमारा नायक है ॥

यस्ते नूनं शतक्रतविन्द्र द्युम्नितमो मदः । तेन नूनं मदे मदेः ॥२॥

हे चतुर शिल्पी कारीगर, तेरे ज्ञान में भरा आनन्द ।
मुझ को भी दे दे ऐसा, कभी न होने पाए मन्द ॥

गाव उप वदावटे मही यज्ञस्य रप्सुदा । उभा कर्णा हिरण्यया ॥३॥

तू अलौकिक बुद्धि वाला, प्रेरणा दे हम को सदा ।
एकांत में मुझे शिक्षा देकर, यज्ञ को सुन्दर बना ॥

अरमश्वाय गायत श्रुतकक्षारं गवे । अरमिन्द्रस्य धाम्ने ॥४॥

हे विज्ञानी, अन्तर्ज्ञानी,
तेरी है सुन्दर गति महान् ।
करो स्तुति परम ज्योति की,
कण कण में उसकी शक्ति जान ॥

तमिन्द्रं वाजयामसि महे वृत्राय हन्तवे । स वृषा वृषभो भुवत् ॥५॥

बड़ी बड़ी और काली काली, जो बाधाएँ ज्ञान को ।
नष्ट करें हम सब उनको, पा शक्ति भगवान् की ॥

त्वमिन्द्र बलादधि सहसो जात ओजसः । त्वं सन् वृषन् वृषेदसि ॥६॥

काट काट सारे शत्रुओं को, इन्द्र हुआ तेरा अवतार ।
तेरे बल का क्या कहना, तू तो सब का बल दातार ॥

यज्ञ इन्द्रमवर्धयद् यद्भूमिं व्यवर्तयत् । चक्राण ओपशं दिवि ॥७॥

ज्ञान कर्म ही मिलकर दोनों, बुद्धि को विकसाते हैं ।
तब आत्मा में बल आता है, उत्तम पथ बतलाते हैं ॥

यदिन्द्राहं यथा त्वमीशीय वस्व एक इत् । स्तोता मे गोसखा स्यात् ॥८॥

हे इन्द्र मेरा मन यदि, गीत गाए इन्द्रियों के साथ ही ।
शक्तिशाली मैं भी बनूं, हे इन्द्र तेरी भांति ही ॥

पन्यं पन्यमित् सोतार आ धावत मद्याय । सोमं वीराय शूराय ॥९॥

आनन्दगंगा बह रही है, पान कर आनन्द लो ।
वीरता और शूरता भी, पा रहो निर्द्वन्द्व हो ॥

इदं वसो सुतमन्धः पिबा सुपूर्णमुदरम्। अनाभयिन् ररिमा ते ॥१०॥

हे इन्द्र परमानन्द का, पुनीत यह उपहार लो।
भेंट देते हैं वसु, हम, निर्भय इसे स्वीकार लो॥

इति तृतीया दशतिः (प्रथमः खण्डः)।

उद् घेदभि श्रुतामघं वृषभं नर्यापसम्। अस्तारमेषि सूर्य ॥१॥

जगमग करतीं तेरी किरणें, मन में ज्योति जगाती हैं।
अज्ञान अविद्या नाश करे, मन को ऊंचे ले जाती हैं।
पर उपकारी पर हितकारी, जन ही उसको पाता है।
ज्ञान धनी का ज्ञान बढ़ाकर, तू ऊंचा उसे उठाता है॥

यदद्य कच्च वृत्रहन्नुदगा अभि सूर्य। सर्वं तदिन्द्र ते वशे ॥२॥

तू ही करता उदय शक्ति को, तू उसमें आलोक भरे।
जीवन मम आलोकित करके, अंधकार का शोक हरे॥

य आनयत् परावतः सुनीती तुर्वशं यदुम्। इन्द्रः स नो युवा सखा ॥३॥

मेरा साथी तू है प्रभुवर, शुभ नीति का दाता है।
जो जो चलते कुपथ चाल से, उनको मार्ग बताता है॥

मा न इन्द्राभ्या३ दिशः सूरो अक्तुष्वा यमत्। त्वा युजा वनेम तत् ॥४॥

काम, क्रोध और लोभ शत्रु, सब फिरते चारों ओर हैं।
मेरे मन तुम उन को जीतो, जो इस नगरी के चोर हैं॥

एन्द्र सानसिं रयिं सजित्वानं सदासहम्। वर्षिष्ठमूतये भर ॥५॥

हे अनुपम हे अद्भुत प्रतिमे! भर दे मेरे ज्ञान खजाने।
नाश करे जो उन अरियों का, करते जो हमले मनमाने॥
भर दे मुझ में इतना धीरज, डरूं न शत्रुभावों से।
जीत जीत कर आगे जाऊं, सारे ही प्रतिभावों से॥

इन्द्रं वयं महाधन इन्द्रमर्भे हवामहे । युजं वृत्रेषु वज्रिणम् ॥६॥

छोटे बड़े सभी झगड़ों को, जो पल भर में नाश करे ।
तुझे पुकारूं सुन्दर मन, तू दिव्य शक्ति प्रकाश करे ॥

अपिबत् कद्रुवः सुतमिन्द्रः सहस्रबाह्वे । तत्राददिष्ट पौंस्यम् ॥७॥

ज्ञान के रस को पीकर मेरी, मनीषा जगमग करती है ।
शुभ काम करे वह सभी तरह के, सुख से आगे बढ़ती है ॥

वयमिन्द्र त्वायवोऽभि प्र नोनुमो वृषन् । विद्धी त्वा३स्य नो वसो ॥८॥

हे स्वामी, हे अन्तर्यामी, सारा धन बल तेरा है ।
मेरे मन की भी तू जाने, सब कुछ अर्पण मेरा है ॥

आ घा ये अग्निमिन्धते स्तृणन्ति बर्हिरानुषक् । येषामिन्द्रो युवा सखा ॥९॥

जिनकी बुद्धि में ज्ञान भरा, वे संकल्प की आग जलाते हैं ।
दिव्य शक्तियों के स्वागत को, आसन सदा बिछाते हैं ॥

भिन्धि विश्वा अप द्विषः परि बाधो जही मृधः । वसु स्पार्हं तदा भर ॥१०॥

दूर कर दे द्वेष सारे, हिंसकों का नाश कर ।
दिव्य मोहक आनन्द का, हे इन्द्र तू प्रकाश कर ॥

इति चतुर्थी दशतिः (द्वितीयः खण्डः) ।

इहेव शृण्व एषां कशा हस्तेषु यद्वदान् । नि यामञ्चित्र-मृञ्जते ॥१॥

सुनता हूँ वे जो कहती हैं, करता जो करवाती हैं ।
मेरी प्रेरक विचार शक्तियां, सारे नियम बताती हैं ॥

इम उ त्वा वि चक्षते सखाय इन्द्र सोमिनः । पुष्टावन्तो यथा पशुम् ॥२॥

हे इन्द्र हम तुझ को पुकारें, प्रेम से तुझ को निहारें ।
हाथ में ले मधुर वस्तु, स्वामी ज्यों पशु को पुकारे ॥

समस्य मन्यवे विशो विश्वा नमन्त कृष्टयः। समुद्रायेव सिन्धवः ॥३॥

सारी नदियाँ बहकर आतीं,
सागर में हैं मिलती जातीं।
जो जन करते काम मनोहर,
तुझको कर अर्पण शांति आती॥

देवानामिदवो महत् तदा वृणीमहे वयम्। वृष्णामस्मभ्यमूतये ॥४॥

दिव्य तेरी शक्तियों को, हम नित्य करते कामना।
आगे बढ़ातीं, सुख दिलातीं, हम को उनकी चाहना॥

सोमानां स्वरणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कक्षीवन्तं य औशिजः ॥५॥

वेद वाणी के अधीश्वर, ऐसी कृपा कर दीजिए।
ज्ञानसाधक कुशल जन पर; आनन्द वर्षा कीजिए॥

बोधन्मना इदस्तु नो वृत्रहा भूर्यासुतिः। शृणोतु शक्र आशिषम् ॥६॥

ज्ञान वाला चित्त ही, आनन्द का साधन करे।
कामना पाकर सभी, शक्ति से निज मन भरे॥

अद्या नो देव सवितः प्रजावत् सावीः सौभगम्। परा दुःष्वप्न्यं सुव ॥७॥

दूर करके भाव काले, आलोक जीवन में धरें।
सौभाग्य सुख सन्तान से, हम सभी के घर भरें॥

क्वा३स्य वृषभो युवा तुविग्रीवो अनानतः। ब्रह्मा कस्तं सपर्यति ॥८॥

है कहाँ वह इन्द्र राजा, जो वर्षा सदा सुख की करे।
रूप यौवन से भरा, वह कौन ज्ञानी जन तरे॥

उपह्वरे गिरीणां सङ्गमे च नदीनाम्। धिया विप्रो अजायत ॥९॥

पर्वतस्थली में जिनके घर हैं,
नदियों के संगम पर रहते हैं।
ज्ञान भरें और सुकर्म करें,
मेधावी उन को कहते हैं॥

प्र सम्राजं चर्षणीनामिन्द्रं स्तोता नव्यं गीर्भिः । नरं नृषाहं मंहिष्ठम् ॥१०॥

कर्म करें शुभ ज्ञानी जन, उनका जो सम्राट् है ।
स्तुति करें हम उसी इन्द्र की, नेता जो विभ्राट् है ॥

इति पंचमी दशतिः (तृतीयः खण्डः) ।

द्वितीयप्रपाठके प्रथमश्चार्धः ॥

अपादु शिप्रचन्धसः सुदक्षस्य प्रहोषिणः । इन्दोरिन्द्रो यवाशिरः ॥१॥

शक्ति भक्ति जो धारण करके, निज सर्वस्व चढ़ाता है ।
सुखद सुसंस्कृत पावन, परमानन्द रसीला पाता है ॥

इमा उ त्वा पुरूवसोऽभि प्र नोनुवुर्गिरः । गावो वत्सं न धेनवः ॥२॥

रंग-रंग में रमने वाले, तुझ को मेरे गीत पुकारें ।
नई बनी गो माता जैसे, अपना प्यारा पुत्र दुलारें ॥

अत्राह गोरमन्वत नाम त्वष्टुरपीच्यम् । इत्था चन्द्रमसो गृहे ॥३॥

चन्द्र के आलोक में हैं, सूर्य की किरणें समाईं ।
आनन्द छाया है वहीं, तेरा रूप देता है दिखाई ॥

यदिन्द्रो अनयद्रितो महीरपो वृषन्तमः । तत्र पूषा भुवत् सचा ॥४॥

बड़े-बड़े कामों का नेता, आनन्द की वर्षा करता है ।
रोम-रोम में वासी बनकर, शक्ति सुधा को भरता है ॥

गौर्धयति मरुतां श्रवस्युर्माता मघोनाम् । युक्ता वह्नी रथानाम् ॥५॥

शुभ संकल्पों को माता, और अन्तर्मुख करने वाली ।
चिति शक्ति है जगाती सब को, ज्ञानामृत भरने वाली ॥

उप नो हरिभिः सुतं याहि मदानां पते । उप नो हरिभिः सुतम् ॥६॥

जितने हैं आनन्द अलौकिक, उन सब का तू स्वामी है ।
इन्द्रियों से जो ज्ञान है मिलता, उसका सहायक नामी है ॥

इष्टा होत्रा असृक्षतेन्द्रं वृधन्तो अध्वरे। अच्छावभृथमोजसा ॥७॥

तेरा जीवन यज्ञ बनाती, इन्द्रियां बलवान् हैं।
बुद्धि में आलोक लातीं, करती तेरा कल्याण हैं ॥

अहमिद्धि पितुष्परि मेधामृतस्य जग्रह। अहं सूर्य इवाजनि ॥८॥

बुद्धि ऐसी मिले मुझे, मैं ईश का सब ज्ञान पाऊँ।
सूर्य सम प्रेरक बनूं, जग में ज्योति जगमग जगाऊं ॥

रेवतीर्नः सधमाद इन्द्रे सन्तु तुविवाजाः। क्षुमन्तो याभिर्मदेम ॥९॥

हे इन्द्र तेरे साथ मेरी, इन्द्रियां बलवान् हों।
तेरे अलौकिक आनंद से, सम्पन्न हों धनवान् हों ॥

सोमः पूषा च चेततुर्विश्वासां सुक्षितीनाम्। देवत्रा रथ्योर्हिता ॥१०॥

मेरे अंग-अंग में रहता, मेरा मन आत्म-हितकारी।
आनन्द, विजय और पोषणकर्ता, वही सदा है सुखकारी ॥

इति षष्ठी दशतिः (चतुर्थः खण्डः)।

पान्तमा वो अन्धस इन्द्रमभि प्र गायत। विश्वासाहं शतक्रतुं मंहिष्ठं चर्षणीनाम् ॥१॥

गीत गाओ उसी इन्द्र के, दिव्य आनन्द जो धरता है।
शुभ कामों में करे सहायता, दुष्टों का बल हरता है ॥

प्र व इन्द्राय मादनं हर्यश्वाय गायत। सखायः सोमपाव्ने ॥२॥

शुभ काम को साथी बना, आनन्द के दर्शन करो।
मधुर रस का आत्मा में, सर्वदा वर्षण करो।
साथी! गाओ गीत मधुर, मन में जो आनंद भरे।
इन्द्रियों के साथ मिलकर, सोमरस से शक्ति भरे ॥

वयमु त्वा तदिदर्था इन्द्र त्वायन्तः सखायः। कण्वा उक्थेभिर्जरन्ते ॥३॥

प्रकाशमय ज्ञानी प्रभो! तेरी प्रशंसा हम करें।
तेरे निकट आते हुए, तुझ को हृदय से हम वरें ॥

इन्द्राय मद्वने सुतं परि ष्टोभन्तु नो गिरः । अर्कमर्चन्तु कारवः ॥४॥

आनन्द सरोवर में नहाईं, वाणियां जब जब बहें ।
कर्मयोग के कुशल साधक, सोमरस पाता रहें ॥

अयं त इन्द्र सोमो निपूतो अधि बर्हिषि । एहीमस्य द्रवा पिब ॥५॥

आनन्द गंगा बह रही है, हे इन्द्र नित तेरे लिए ।
अन्तःकरण से पान कर ले, देर इतनी किस लिए ॥

सुरूपकृत्नुमूतये सुदुघामिव गोदुहे । जुहूमसि द्यवि द्यवि ॥६॥

मीठा दूध पिलाती गाय, उसको ही जो दोहन करता ।
दानी त्यागी वीरों का ही, घर ईश्वर है भरता ॥

अभि त्वा वृषभा सुते सुतं सृजामि पीतये । तृम्पा व्यश्नुही मदम् ॥७॥

प्राप्त हुआ आनन्द अलौकिक,
तेरे लिए किया तैयार ।
इसे पाकर तृप्ति पा ले,
भर दे सुख से सब संसार ॥

य इन्द्र चमसेष्वा सोमश्चमूषु ते सुतः । पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥८॥

पान कर आनन्द तू, प्रभु तू ही शक्तिमान है ।
अन्न प्राण मन और ज्ञान का जो निधान है ॥

योगे योगे तवस्तरं वाजे वाजे हवामहे । सखाय इन्द्रमूतये ॥९॥

जब हम मिलकर साथी सारे, ज्ञान कर्म के पथ पर जाते ।
लेकर नाम उसी बली को, इन्द्र कहकर हम बुलाते ॥

आ त्वेता नि षीदतेन्द्रमभि प्र गायत । सखायः स्तोमवाहसः ॥१०॥

आओ भक्तो मिलकर बैठो, गीत उसी के गावें ।
यश गावें हम उसी इन्द्र के, जिस से वैभव पावें ॥

इति सप्तमो दशतिः (पञ्चमः खण्डः) ।

इदं ह्यन्वोजसा सुतं राधानां पते । पिबा त्वा३स्य गिर्वणः ॥१॥

घोर तप से बना हुआ यह, भक्ति रस का प्याला है ।
पी ले इसको सिद्धिदाता, तू ही सुख देने वाला है ॥

महाँ इन्द्रः पुरश्च नो महित्वमस्तु वज्रिणे । द्यौर्न प्रथिना शवः ॥२॥

डरता रह तू इसी इन्द्र से, जो बल का भण्डारा है ।
ऊपर नीचे दायें बायें, उसकी शक्ति धारा है ॥

आ तू न इन्द्र क्षुमन्तं चित्रं ग्राभं सं गृभाय । महाहस्ती दक्षिणेन ॥३॥

धारण कर तू हे जगस्वामी, हम को शुभ कर्मों के हित ।
तेरी शक्ति हमें बढ़ावे, हरे भरे हों सारे खेत ॥

अभि प्र गोपतिं गिरेन्द्रमर्च यथा विदे । सूनुं सत्यस्य सत्पतिम् ॥४॥

तू जगा ले आत्मशक्ति, जो ज्ञान की भण्डार है ।
सत्य का प्रकाश करके, उसका पालनहार है ॥

कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा । कया शचिष्ठया वृता ॥५॥

कौन-सी शक्ति मिले, और कौन-सा आलोक हो ।
उन्नतिपथ का प्रकाशक, मित्र मेरा अशोक हो ॥

त्यमु वः सत्रासाहं विश्वासु गीर्ष्वायतम् । आ च्यावयस्यूतये ॥६॥

नाश करे जो पाप मन के, ध्यान उसी का किया करो ।
दिन-दिन आगे बढ़ने के हित, नाम इन्द्र का लिया करो ॥

सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् । सनिं मेधामयासिषम् ॥७॥

जग के पालक अद्भुत प्यारे, तेरी करूं मैं कामना ।
ध्यान धारणा तुझ से पाके, तेरी करूं उपासना ॥

ये ते पन्था अधो दिवो येभिर्व्यश्वमैरयः । उत श्रोषन्तु नो भुवः ॥८॥

मन के पथ पर तुम्हीं चलाते, जब मैं पथ में डरती हूं ।
जग के पथ पर मुझे चलाओ, यही याचना करती हूं ॥

भद्रं भद्रं न आ भरेषमूर्जं शतक्रतो । यदिन्द्र मृडयासि नः ॥९॥

सब कामों को करने वाला, तू ही सुख का दाता है ।
अनुपम शक्ति, उत्तम ज्ञान, तुझ से हो जन पाता है ॥

अस्ति सोमो अयं सुतः पिबन्त्यस्य मरुतः । उत स्वराजो अश्विना ॥१०॥

दिव्यानन्द यह प्राप्त हुआ है,
कर लो इसका मन से ध्यान ।
उत्तम ज्ञान मनीषा से,
सानन्द करो इसी का पान ॥

इति अष्टमी दशतिः (षष्ठः खण्डः) ।

ईङ्खयन्तीरपस्युव इन्द्रं जातमुपासते । वन्वानासः सुवीर्यम् ॥१॥

ज्ञान पाकर कर्म की, चाहना जब हम करें ।
शक्तिशाली इन्द्र की, साधना तब हम करें ॥

न कि देवा इनीमसि न क्या योपयामसि । मन्त्रश्रुत्यं चरामसि ॥२॥

हे प्रभो मम इन्द्रियां, कभी न होवें कष्ट-कारी ।
न लुभावें न डरावें, करें सदा शुभ कर्म सारी ॥

दोषो आगाद् बृहद्गाय द्युमद्गामन्नाथर्वण । स्तुहि देवं सवितारम् ॥३॥

अन्धकार में चलते मानव, प्रकाशक प्रभु को याद कर ।
गीत गाकर उस पिता के, मन में तू आह्लाद भर ॥

एषो उषा अपूर्व्या व्युच्छति प्रिया दिवः । स्तुषे वामश्विना बृहत् ॥४॥

जगमग करती उषा रानी, देख लो वह आ रही ।
ज्ञान और संकल्प के यह, शुभ संदेशे ला रही ।
ज्ञान और संकल्प शक्ति, मेरे मन को भर रही ।
मैं करूं उसकी स्तुति जो, संकल्प ज्ञान बढ़ा रही ॥

इन्द्रो दधीचो अस्थभिर्वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। जघान नवतीर्नव ॥५॥

साधन शक्ति कर में लेकर, सब विघ्नों का नाश किया।
नहीं हारता शक्तिशाली, उसे आत्मा ने प्रकाश दिया ॥

इन्द्रे हि मत्स्यन्धसो विश्वेभिः सोमपर्वभिः। महाँ अभिष्टि-रोजसा ॥६॥

आनन्द का है स्रोत बहता, इन्द्र तू उस में नहा।
अदम्य शक्ति प्राप्त करके, बलवान् हो रहना बना ॥

आ तू न इन्द्र वृत्रहन्नस्माकमर्धमा गहि। महान्महीभि-रूतिभिः ॥७॥

महती शक्ति वाले ईश्वर, तू है सब से बहुत बड़ा।
इसीलिए हम तुझे बुलाते, शीघ्र हमारे मन में आ ॥

ओजस्तदस्य तित्विष उभे यत् समवर्तयत्। इन्द्रश्चर्मेव रोदसी ॥८॥

सारे लोक हैं घूमते, तेरे तेज प्रताप से।
वीर पुरुष जैसे है, घुमाता ढाल अपने आप से ॥

अयमु ते समतसि कपोत इव गर्भधिम्। वचस्तच्चिन्न ओहसे ॥९॥

तेरा ही हूं आश्रित प्रभुवर, प्रेम से सुन लीजिए।
कबूतर रक्षा करे प्रिया की, ऐसे रक्षा कीजिए ॥

वात आ वातु भेषजं शम्भु मयोभु नो हृदे। प्र न आयूंषि तारि-षत् ॥१०॥

सर्वव्यापक प्रभु हमारे, सब कष्टों को सदा हरे।
बन्धन सारे काट हमारे, जीवन नैया पार करे ॥

इति नवमी दशतिः (सप्तमः खण्डः)।

यं रक्षन्ति प्रचेतसो वरुणो मित्रो अर्यमा। न किः स दभ्यते जनः ॥१॥

प्रेम, न्याय और पावन विद्या, जिसकी रक्षा करते हैं।
कभी नहीं वह जन दुःख पाता, उसके संकट झरते हैं ॥

गव्यो षु णो यथा पुराश्वयोत रथया । वरिवस्या महोनाम् ॥२॥

ज्ञान का धन जो पाना चाहे,
मन अपने को साध ले।
आंख, नाक और जिह्वा को,
अपने कर में बांध ले॥

इमास्त इन्द्र पृश्नयो घृतं दुहत आशिरम् । एनामृतस्य पिप्युषीः ॥३॥

अय मेरी तमनाशक बुद्धि,
तेरी किरणें जगमग करतीं।
जब यह चाहें ऋत को पाना,
सत्य रवि के तेज को वरतीं॥

अया धिया च गव्यया पुरुणामन् पुरुष्टुत । यत् सोमे सोम आभुवः ॥४॥

प्रकाश को प्यासी बुद्धि तेरी, तू यज्ञों में आता है।
तेरे अनगिनत भक्त हैं तू हो, तू सोम शक्ति को पाता है॥

पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । यज्ञं वष्टु धिया-वसुः ॥५॥

अन्तःकरण की प्रेरणा, सुविचार से भरपूर है।
भर जाए मेरी आत्मा, रहती जो इस से दूर है॥

क इमं नाहुषीष्वा इन्द्र सोमस्य तर्पयात् । स नो वसून्या भरात् ॥६॥

कौन है, शुभ कर्म से जो, इन्द्र का तर्पण करे।
शुभ कर्मरूपी सोम पा, इन्द्र ही ज्ञान धन भरे॥

आ याहि सुषुमा हि त इन्द्र सोमं पिबा इमम् । एदं बर्हिः सदो मम ॥७॥

मनमंदिर में इन्द्र आओ, बैठकर शासन करो।
तेरे लिए यह भक्ति रस है, पान तुम निशदिन करो॥

महि त्रीणामवरस्तु द्युक्षं मित्रस्यार्यम्णः । दुराधर्षं वरुणस्य ॥८॥

जीत न सकता जिसको कोई,
मित्र अर्यमा वरुण महान।
रक्षा करें सदा यह मेरी,
सदा सत्य का पर्दा तान॥

त्वावतः पुरूवसो वयमिन्द्र प्रणेतः । स्मसि स्थातर्हरीणाम् ॥९॥

सब के नेता सब के रक्षक, सब को तुम्हीं बसाते हो।
हम आते हैं पास तेरे, तुम अंगों में सरसाते हो॥

इति दशमी दशतिः (अष्टमः खण्डः)।

॥ इति द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः ॥

अथ तृतीयः प्रपाठकः

(प्रथमोऽर्धः)

उत्वा मदन्तु सोमाः कृणुष्व राधो अद्रिवः। अव ब्रह्मद्विषो जहि ॥१॥

तेरी शक्ति कभी न टूटे, मुझ को परमानन्द मिले।
विघ्नों का तू ही नाश करे, हम को ऐश्वर्य अमन्द मिले॥

गिर्वणः पाहि नः सुतं मधोर्धाराभिरज्यसे। इन्द्र त्वादातमिद्यशः ॥२॥

तेरी प्रशंसा हम करें, हम ने भक्तिरस निर्माण किया।
स्नान करो तुम इसमें स्वामी, तेरी दया का दान लिया॥

सदा व इन्द्रश्चर्कृषदा उपो नु स सपर्यन्। न देवो वृतः शूर इन्द्रः ॥३॥

ऐश्वर्यशाली इन्द्र प्रभु, जब जब तेरे पास है आता।
तुझ को अपनी ओर खींचता, उसको क्यों नहीं अपनाता॥

आ त्वा विशन्त्विन्दवः समुद्रमिव सिन्धवः। न त्वामिन्द्रातिरिच्यते ॥४॥

कल-कल करतीं नदियां बहतीं, सागर में हो जातीं लीन।
आनन्द लहरियां लहरातीं, तेरे में हो जातीं जलमीन॥

इन्द्रमिद्गाथिनो बृहदिन्द्रमर्केभिरर्किणः। इन्द्रं वाणीरनूषत ॥५॥

साम गान के गाने वाले, और ऋचा दर्शाने वाले।
गाते तेरे गीत मनोहर, पावन मंत्रों के रखवाले॥

इन्द्र इषे ददातु न ऋभुक्षणमृभुं रयिम्। वाजी ददातु वाजिनम् ॥६॥

मनीषा मुझ को मिले चमकती, तेजस्वी ऐश्वर्य मिले।
उत्तम कर्म कराने को, वीरेश इन्द्र से बल मिले॥

इन्द्रो अङ्ग महद्भयमभीषदपचुच्यवत् । स हि स्थिरो विचर्षणिः ॥७॥

आलोकमयी यह उत्तम प्रतिभा
भय संकट का नाश करे।
दर्शनशक्ति दूर देखती,
मन में सदा प्रकाश भरे॥

इमा उ त्वा सुते सुते नक्षन्ते गिर्वणो गिरः । गावो वत्सं न धेनवः ॥८॥

दूध पिलाने वाली गउएं पहुंचें; अपने बछड़ों पास।
मेरी वाणियां तुझे ढूंढतीं, मैं हूं परमानन्द का दास॥

इन्द्रा नु पूषणा वयं सख्याय स्वस्तये । हुवेम वाजसातये ॥९॥
इन्द्र पूषा की करें स्तुति हम, भोग पाने के लिए।
ज्ञान शक्ति मित्रता, जीवन में लाने के लिए॥

नकि इन्द्र त्वदुत्तरं न ज्यायो अस्ति वृत्रहन् । नक्येवं यथा त्वम् ॥१०॥

हे विघ्ननाशक इन्द्र तुझ से, न कोई महान है।
कोई बड़ा तुझ से नहीं, न कोई तेरे समान है॥

इति प्रथमा दशतिः (नवमः खण्डः) ।

तरणिं वो जनानां त्रदं वाजस्य गोमतः । समानमु प्र शंसिषम् ॥१॥

स्तुति करूं मैं उसी पिता की, जो सब का तारनहार।
प्रकाश का स्वामी, सब का रक्षक; सब सुख का आधार॥

असृग्रमिन्द्र ते गिरः प्रति त्वामुदहासत । सजोषा वृषभं पतिम् ॥२॥
मन में जब उठे कामना; नारी पति के पास जाए।
तुझ को पाने मेरी वाणियां, ऊंची सी उड़ान लगाएं॥

सुनीथो घा स मर्त्यो यं मरुतो यमर्यमा । मित्रास्पान्त्यद्रुहः ॥३॥
जीवन पथ पर चलते चलते, मार्ग कभी न खोता है।
जिसके सिर पर मरुत् अर्यमा, मित्र का साया होता है॥

यद्वीडाविन्द्र यत् स्थिरे यत्पर्शाने पराभृतम् । वसु स्पार्हं तदा भर ॥४॥
हे इन्द्र हे दृढ़ संकल्प जन, सभी धनों का वरण करो।
मननशील जन जो पा सकते, उन्हीं सुखों का भरण करो॥

श्रुतं वो वृत्रहन्तमं प्र शर्धं चर्षणीनाम् । आशिषे राधसे महे ॥५॥
शक्तिशाली ज्ञान सत्य की, कामना करते रहो।
जिससे सभी को सुख मिले, ऐश्वर्य वह वरते रहो॥

अरं त इन्द्र श्रवसे गमेम शूर त्वावतः । अरं शक्र परेमणि ॥६॥
तुझ को रिझाएँ शत्रुनाशक, अन्तर्ज्ञान पाने के लिए।
लीन तेरे में ही हम रहें, तुझे श्रेष्ठ गाने के लिए॥

धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम् । इन्द्र प्रातर्जुषस्व नः ॥७॥
तुम मिलते हो उसे इन्द्र जी, जो जौ की खीलें खाते हैं।
दही सत्तू और पूए खाकर, गुण गण तेरे गाते हैं॥

अपां फेनेन नमुचेः शिर इन्द्रोदवर्तयः । विश्वा यदजयः स्पृधः ॥८॥
तुमने जीतीं सभी इन्द्रियां, हे इन्द्र वीर स्पर्धा वाले।
काटो काल भयंकर का सिर, शुभ कामों के बन रखवाले॥

इमे त इन्द्र सोमाः सुतासो ये च सोत्वाः । तेषां मत्स्व प्रभूवसो ॥९॥
शक्तिशाली हे आश्रयदाता, उन आनन्दों में रमण करो।
सिद्ध करेंगे जिनको आगे, हे इन्द्र उन्हीं में भ्रमण करो॥

तुभ्यं सुतासः सोमाः स्तीर्णं बर्हिर्विभावसो । स्तोतृभ्य इन्द्र मृडय ॥१०॥
शोभाशाली हे इन्द्र हमारे, ये आनन्द तुम्हारे हैं।
मन आसन पर बैठो प्यारे, सारे भक्त पुकारे हैं॥

इति द्वितीया दशतिः (दशमः खण्डः) ।

आ व इन्द्रं क्रिविं यथा वाजयन्तः शतक्रतुम् । मंहिष्ठं सिञ्च इन्दुभिः ॥१॥

अन्न धान्य उपजाने हेतु; कूप आदि का करें निर्माण ।
शुभकारी यह इन्द्र आत्मा, दिव्यानन्द से बने महान ॥

अतश्चिदिन्द्र न उपा याहि शतवाजया । इषा सहस्रवाजया ॥२॥

सैकड़ों बलशाली लेकर, प्रेरणाएं साथ तू ।
आजा हमारे पास प्यारे, सारी शक्तियों का नाथ तू ॥

आ बुन्दं वृत्रहा ददे जातः पृच्छाद् वि मातरम् । क उग्राः के ह शृण्विरे ॥३॥

कौन हिंसक कौन डाकू, इन्द्र इसको जानता ।
बाधाएं कर के दूर सारी, उन्नति पथ तानता ॥

वृबदुक्थं हवामहे सृप्रकरस्नमूतये । साधः कृण्वन्तमवसे ॥४॥

आगे बढ़ने के लिए, हम आश्रय लें साम का ।
साधना साधक वही, रक्षक वही शुभ काम का ॥

ऋजुनीती नो वरुणो मित्रो नयति विद्वान् । अर्यमा देवैः सजोषाः ॥५॥

इन्द्रियों का साथ देता, गुण अलौकिक बिखेरता ।
सर्वज्ञ हम से स्नेह करता, शुभ मार्ग में है प्रेरता ॥

दूरादिहेव यत्सतोऽरुणप्सुरशिश्वितत् । वि भानुं विश्वथा तनत् ॥६॥

चमकता है सूर्य सम, दूर से ही हरता अंधकार ।
इन्द्र प्रभु के आलोक से, आलोक पाता है संसार ॥

आ नो मित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम् । मध्वा रजांसि सुक्रतू ॥७॥

मित्र, वरुण तुम हम पर बरसो, दिव्यानन्द की धार लिये ।
शुभ कर्मों के करने वालो, आओ मधुर व्यवहार लिये ॥

उदु त्ये सूनवो गिरः काष्ठा यज्ञेष्वत्नत । वाश्रा अभिज्ञु यातवे ॥८॥

प्यारा बछड़ा जब रम्भाए, गऊएं घुटनों पर झुक जातीं ।
स्तुति वाणियां मेरे सारे, आत्मिक यज्ञों को ले आतीं ॥

इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा नि दधे पदम् । समूढमस्य पांसुले ।।९।।
सर्वव्यापक प्रभु की शक्ति, धरती और आकाश में छाई ।
अज्ञान भरे अन्तःकरण में, मूर्ख को न देती दिखाई ।।

इति तृतीया दशतिः (एकादशः खण्डः) ।

अतीहि मन्युषाविणं सुषुवांसमुपेरय । अस्य रातौ सुतं पिब ।।१।।
हे इन्द्र तुझे न क्रोधी भाते, भक्तों के ढिग जाते हो ।
भक्तों की त्याग तपस्या का, आनन्द सदा तुम बरसाते हो ।।

कदु प्रचेतसे महे वचो देवाय शस्यते । तदिद्ध्यस्य वर्धनम् ।।२।।
महान् चेतना वाले प्रभु की, स्तुति में जो गीत गाया ।
जिसको कहते इन्द्र शक्ति, उसे ही इसने बढ़ाया ।।

उक्थं च न शस्यमानं नागो रयिरा चिकेत । न गायत्रं गीयमानम् ।।३।।
सर्वव्यापक ईश सब के, प्रेम को पहिचानता ।
ज्ञान या अज्ञान से, गाई स्तुति को जानता ।।

इन्द्र उक्थेभिर्मन्दिष्ठो वाजानां च वाजपतिः । हरिवान्त्सुतानां सखा ।।४।।
ज्ञानघनों का स्वामी इन्द्र, सामगान में रमण करे ।
शुभ कामों से मिले मोद के, साथ साथ वह गमन करे ।।

आ याह्यु प नः सुतं वाजेभिर्मा हृणीयथाः । महाँ इव युवजानिः ।।५।।
शुभ कामों को करके मैंने, आत्मिक मधु संवारा है ।
आकर हम को वह धन दे दो, जो अधिकार हमारा है ।।

कदा वसो स्तोत्रं हर्यत आ अव श्मशा रुधद्वाः । दीर्घं सुतं वाताप्याय ।।६।।
सब को बसाने वाले, तेरी करूं मैं कामना ।
जैसे नहरें जल को भरतीं, वैसे करूँ उपासना ।।

ब्राह्मणादिन्द्र राधसः पिबा सोममृतूंरनु । तवेदं सख्यमस्तृतम् ।।७।।
हे इन्द्र बन कर मित्र हमारे, सदा हमारे साथ रहो।
ऋतु ऋतु में मोद फले जो, उसे सदा तुम नाथ गहो ।।

वयं घा ते अपि स्मसि स्तोतार इन्द्र गिर्वणः । त्वं नो जिन्व सोमपाः ।।८।।
तेरे ही हम बनें उपासक, तू ही प्रशंसा योग्य प्रभु।
तृप्त करो हे इन्द्र हमें, देकर, भक्ति रस का भोग्य हमें ।।

एन्द्र पृक्षु कासु चिन्नृम्णं तनूषु धेहि नः । सत्राजिदुग्र पौंस्यम् ।।९।।
हे इन्द्र तूही तेजवन्त है, तूही विश्वविजेता है।
हमारे इन्हीं शरीरों में तू, पौरुष धन को देता है ।।

एवा ह्यसि वीरयुरेवा शूर उत स्थिरः । एवा ते राध्यं मनः ।।१०।।
वीरों से तू प्रेम करे, सारे विघ्न हटाने वाला है।
तू भी वीर है दृढ़ संकल्पी, मनन सिखाने वाला है ।।

इति चतुर्थी दशतिः (द्वादशः खण्डः)।

इति द्वितीयोऽध्यायः ।

अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धा इव धेनवः ।
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः ।।१।।
दूध पिलाने वाली गऊएं, बछड़ों के ढिग जाती हैं।
तेरे अर्पित सभी कामना, सत्य के दर्शन पाती हैं ।।

त्वामिद्धि हवामहे सातौ वाजस्य कारवः ।
त्वां वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं नरस्त्वां काष्ठास्वर्वतः ।।२।।
ज्ञान संपत्ति पाने के हित, हे ईश्वर तुझे बुलाते हैं।
बाधाओं के आने पर हम, तेरे दर पर आते हैं ।।
सदा सफलता पाने को, जब सारे यत्न थक जाते हैं।
सत्व के स्वामी शक्तिधारी, तेरा ध्यान लगाते हैं ।।

अभि प्र वः सुराधसमिन्द्रमर्च यथा विदे।
यो जरितृभ्यो मघवा पुरूवसुः सहस्रेणेव शिक्षति ॥३॥
पाना चाहो सच्ची विद्या, धनवाली प्रतिभा वरण करो।
सब भक्तों को शरण में लेती, उससे शिक्षा ग्रहण करो॥

तं वो दस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः।
अभि वत्सं न स्वसरेषु धेनव इन्द्रं गीर्भिर्नवामहे ॥४॥
सुन्दर है वह शत्रु नाशक, ज्ञान अन्न में रमण करे।
गौएँ बुलातीं ज्यों बछड़ों को, हम उसका आवाहन करें॥

तरोभिर्वो विदद्वसुमिन्द्रं सबाध ऊतये।
बृहद्गायन्तः सुतसोमे अध्वरे हुवे भरं न कारिणम् ॥५॥
सोम यज्ञ में बृहत् साम को, ऋत्विग् ऊँचे स्वर से गाओ।
धन प्रदाता सदा इन्द्र है, यज्ञों में तुम उसे बुलाओ॥

तरणिरित् सिषासति वाजं पुरन्ध्या युजा।
आ व इन्द्रं पुरुहूतं न मे गिरा नेमिं तष्टेव सुद्र्वम् ॥६॥
धारण करता सारे जग को, सब का तारण हारा है।
ज्ञानदान वह सब को करता, सब का वही सहारा है॥

पिबा सुतस्य रसिनो मत्स्वा न इन्द्र गोमतः।
आपिर्नो बोधि सधमाद्यो वृधेऽस्माँ अवन्तु ते धियः ॥७॥
परमानन्द का पान करो, हे आत्मन् आनन्द भोग करो।
भक्त सभा में बन्धु बनकर, उन्नतिपथ में तुम योग करो॥

त्वं ह्येहि चेरवे विदा भगं वसुत्तये।
उद्वावृषस्व मघवन् गविष्टय उदिन्द्राश्वमिष्टये ॥८॥
ज्ञान शक्ति कर्मशक्ति, हे इन्द्र तुझ से मांग रहा।
परम धन को पा तुझी से, आनन्द पाना चाह रहा॥

न हि वश्चरमं च न वसिष्ठः परिमंसते।
अस्माकमद्य मरुतः सुते सचा विश्वे पिबन्तु कामिनः ॥९॥
कभी नहीं जो हम को भूले, सर्वश्रेष्ठ वह स्वामी है।
ज्ञानयज्ञ में मिलकर बैठें, मिलता रस सुखगामी है॥

मा चिदन्यद् वि शंसत सखायो मा रिषण्यत।
इन्द्रमित् स्तोता वृषणं सचा सुते मुहुरुक्था च शंसत ॥१०॥
अन्य किसी की स्तुति करो मत, मित्रो यदि सुख पाना है।
उसी इन्द्र की करें प्रशंसा प्रेम उसी से माना है॥

इति पंचमो दशतिः (प्रथमः खण्डः)।

इति तृतीयप्रपाठके प्रथमश्चार्धः॥

न किष्टं कर्मणा नशद् यश्चकार सदावृधम्।
इन्द्रं न यज्ञैर्विश्वगूर्तमृभ्वसमधृष्टं धृष्णुमोजसा॥१॥
जो ज्ञानी जन यज्ञ यजन से, जग में यश फैलाता है।
सब से उत्तम कामों को करके, विजयी इन्द्र पद पाता है॥

य ऋते चिदभिश्रिषः पुरा जत्रुभ्य आतृदः।
सन्धाता सन्धिं मघवा पुरुवसुर्निष्कर्ता विह्रुतं पुनः॥२॥
छिन्न भिन्न होने न देता, सब अंगों का योग करे।
पुनः पुनः दे प्राणशक्ति, आत्मा शरीर में भोग करे॥

आ त्वा सहस्रमा शतं युक्ता रथे हिरण्यये।
ब्रह्मयुजो हरय इन्द्र केशिनो वहन्तु सोमपीतये॥३॥
चमकीले रथ में बैठ मेरे मन ज्ञान शक्ति के तार लिये।
सम्पन्न वृत्तियां तुझ को ले जाएं, परमानन्द रसधार लिये॥

आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि मयूररोमभिः।
मा त्वा के चिन्नि येमुरिन्न पाशिनोऽति धन्वेव ताँ इहि॥४॥
रंग बिरंगी उमंगें लेकर, बंधन काट गिराता जा।
धनुर्धारी सम तीर चला, आनन्द विजय का पाता जा॥

त्वमङ्ग प्र शंसिषो देवः शविष्ठ मर्त्यम्।
न त्वदन्यो मघवन्नस्ति मर्डितेन्द्र ब्रवीमि ते वचः॥५॥
मरने वाली इसी देह में, प्राणशक्ति तू भरता है।
हे ईश्वर तू ही सुखदाता है, भक्त प्रशंसा करता है॥

त्वमिन्द्र यशा अस्यृजीषी शवसस्पतिः ।
त्वं वृत्राणि हंस्यप्रतीन्येक इत् पुर्वनुत्तश्चर्षणीधृतिः ॥६॥
शुभ कामों को जो करता है, तू उसकी रक्षा करता है ।
तू अपराजित शक्ति वाला, मग बाधाएँ हरता है ॥

इन्द्रमिद्देवतातय इन्द्रं प्रयत्यध्वरे ।
इन्द्रं समीके वनिनो हवामह इन्द्रं धनस्य सातये ॥७॥
इन्द्र का लेके सहारा, आत्म यज्ञ में बढ़ते हैं ।
निज इन्द्रियां सशक्त कर, ज्ञान शिखर पर चढ़ते हैं ॥

इमा उ त्वा पुरुवसो गिरो वर्धन्तु या मम ।
पावकवर्णाः शुचयो विपश्चितोऽभिस्तोमैरनूषत ॥८॥
सब के भीतर बसने वाले, मेरे गीत तेरे गुण गाते ।
पावन शुद्ध मनीषी जन, सब ऐसे गीत सुनाते ॥

उदु त्ये मधुमत्तमा गिरः स्तोमास ईरते ।
सत्राजितो धनसा अक्षितोतयो वाजयन्तो रथा इव ॥९॥
मधुर स्तुति से भर कर वाणी, हृदयकुञ्ज से आती है ।
विघ्नों का प्रभु ! नाश करो; ये ही विनय सुनाती है ॥

यथा गौरो अपा कृतं तृष्यन्नेत्यवेरिणम् ।
आपित्वे नः प्रपित्वे तूयमा गहि कण्वेषु सु सचा पिब ॥१०॥
जल का प्यासा गोरा मृग, सरपट भागा जाता है ।
इन्द्रियों के संग मेरा मन भी, ज्ञान नदी को पाता है ॥

इति षष्ठी दशतिः (द्वितीयः खण्डः) ।

शग्ध्यू३षु शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
भगं न हि त्वा यशसं वसुविदमनु शूर चरामसि ॥१॥
हे इन्द्र हे स्वामी तू हमारे, सारे काम बनाता है ।
तू ही हमारी रक्षा करता, तू ही ज्ञान का दाता है ॥
मन की दुविधाओं का नाशक, सारे कष्ट हटाता है ।
तेरे पीछे चलें हम, तू ऐश्वर्य विधाता है ॥

या इन्द्र भुज आभरः स्वर्वां असुरेभ्यः ।
स्तोतारमिन्मघवन्नस्य वर्धय ये च त्वे वृक्तबर्हिषः ॥२॥
हे इन्द्र तू परमार्थ राही, अपना भोग्य हमें भी दे ।
हृदय-आसन बिछे हमारे, हम को साधन-पथ पर ले ॥

प्र मित्राय प्रार्यम्णे सचथ्यमृतावसो ।
वरूथ्ये३ वरुणे छन्द्यं वचः स्तोत्रं राजसु गायत ॥३॥
हे ज्ञानी हे सत्य निवासी, दिव्य गुणों को गाया कर ।
न्याय-नीति और मित्र भाव के, सुन्दर छन्द बनाया कर ॥

अभि त्वा पूर्वपीतय इन्द्र स्तोमेभिरायवः ।
समीचीनास ऋभवः समस्वरन् रुद्रा गृणन्त पूर्व्यम् ॥४॥
मेरे मन तू दिव्यशक्ति है, हम तुझ से आयु पाते हैं ।
प्राण के स्वामी तुझ को साधें, रुद्र भी तुझ को गाते हैं ॥

प्र व इन्द्राय बृहते मरुतो ब्रह्मार्चत ।
वृत्रं हनति वृत्रहा शतक्रतुर्वज्रेण शतपर्वणा ॥५॥
हे विद्वानो वेदवाणी से, इन्द्र का पूजन करो ।
विघ्नों का यही नाश करता, ज्ञान कर्म से यजन करो ॥

बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहन्तमम् ।
येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि ॥६॥
सामगान को गाओ ज्ञानो, अज्ञान हमारा वही हरे ।
सच्चा दिव्य मार्ग दिखाए, आलोक इसी में प्रकट करे ॥

इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।
शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ॥७॥
जैसे पिता पुत्रों को पाले, वैसे हो हम को ज्ञान दे ।
उन्नति-पथ पर चलें प्रभु, हम को ज्योति दान दे ॥

मा न इन्द्र परा वृणग्भवा नः सधमाद्ये ।
त्वं न ऊती त्वमिन्न आप्यं मा न इन्द्र परावृणक् ॥८॥
हे इन्द्र हम को छोड़ मत तू, आनन्द का सहभोग कर ।
तू ही मेरा इष्ट रक्षक, मुझ से कभी न वियोग कर ॥

वयं घ त्वा सुतावन्त आपो न वृक्तबर्हिषः ।
पवित्रस्य प्रस्रवणेषु वृत्रहन् परि स्तोतार आसते ॥९॥
हे विघ्नों के नाशक प्रभुवर, तेरे गीत हम गाते हैं।
पावन मन स्रोतों पर बैठे, प्रतिक्षण आनन्द पाते हैं॥

यदिन्द्र नाहुषीष्वा ओजो नृम्णं च कृष्टिषु ।
यद्वा पञ्चक्षितीनां द्युम्नमा भर सत्रा विश्वानि पौंस्या ॥१०॥
शरीरधारी, कर्मकारी प्रभु से तेज बल और ज्ञान लें।
अपनी निरन्तर साधना से, इन्द्र इन को मान लें॥

इति सप्तमी दशतिः (तृतीयः खण्डः) ।

सत्यमित्था वृषेदसि वृषजूतिर्नोऽविता ।
वृषा ह्युग्र शृण्विषे परावति वृषो अर्वावति श्रुतः ॥१॥
सुख का वर्षक सचमुच तू है, तू ही रक्षा करता है।
दूर पास की सभी कामना, तू ही पूरी करता है॥

यच्छक्रासि परावति यदर्वावति वृत्रहन् ।
अतस्त्वा गीर्भिर्द्युगदिन्द्र केशिभिः सुतावाँ आ विवासति ॥२॥
हे शक्तिमन् हे विघ्ननाशक, भक्त तुझ को बुला रहा।
आनन्द साधक प्रकाशराही, नित्य तुझ को चाह रहा॥

अभि वो वीरमन्धसो मदेषु गाय गिरा महा विचेतसम् ।
इन्द्रं नाम श्रुत्यं शाकिनं वचो यथा ॥३॥
आनन्द चाहते हो यदि, उस अतिचेतन का गान करो।
शक्तिशाली विख्यात इन्द्र का, वाणी से रस पान करो॥

इन्द्र त्रिधातु शरणं त्रिवरूथं स्वस्तये ।
छर्दिर्यच्छ मघवद्भ्यश्च मह्यं च यावया दिद्युमेभ्यः ॥४॥
अन्न, प्राण और मन वाले, तीनों शरीरों को पार कर।
दिव्य आनन्द भोग करो, जाग्रत, स्वप्न सुषुप्ति सुधार कर॥

आयन्त इव सूर्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत ।
वसूनि जातो जनिमान्योजसा प्रति भागं न दीधिम ।।५।।

उसी प्रभु के लिये सहारा, सारे सुख हम पाते हैं ।
अगले पिछले सभी कर्मफल, इन्द्र शक्ति से आते हैं ।।

न सीमदेव आपतदिषं दीर्घायो मर्त्यः ।
एतग्वा चिद्य एतशो युयोजत इन्द्रो हरी युयोजते ।।६।।

सौ वर्षों तक जीने वाले, इन्द्रियां घोड़े साध लें ।
इष्ट पाने के लिए हम, दिव्य शक्ति आराध लें ।।

आ नो विश्वासु हव्यमिन्द्रं समत्सु भूषत ।
उप ब्रह्माणि सवनानि वृत्रहन् परमज्या ऋचीषम ।।७।।

सभी प्रकार के संघर्षों में, उसी इन्द्र को हम मनाएं ।
यज्ञों पर कर आत्म समर्पण, वीर विजयी को मिल सजाएं ।।

तवेदिन्द्रावमं वसु त्वं पुष्यसि मध्यमम् ।
सत्रा विश्वस्य परमस्य राजसि नकिष्ट्वा गोषु वृण्वते ।।८।।

तीन अवस्था वाले धन का, स्वामी इन्द्र कहाता है ।
तू ही राजा तुरीय काल का, तू ही आनन्ददाता है ।।

क्वेयथ क्वेदसि पुरुत्रा चिद्धि ते मनः ।
अलर्षि युध्म खजकृत् पुरन्दर प्र गायत्रा अगासिषुः ।।९।।

कहाँ कहां तू है भटकता, आजा अपने आप में ।
दुष्ट भावों के संहारक, कहां गया तू ताप में ।।
गान तेरे गा रहे हम, प्रभो तू हमें मिलता नहीं ।
तेरे दर्शन के विना, यह चित्तकमल खिलता नहीं ।।

वयमेनमिदा ह्योऽपीपेमेह वज्रिणम् ।
तस्मा उ अद्य सवने सुतं भरा नूनं भूषत श्रुते ।।१०।।

हमने खिलाया ज्ञानरूपी, वज्रधारी को सदा ।
आनन्द से उसको भरें हम, ज्ञान यज्ञों में सदा ।।

इति अष्टमी दशतिः (चतुर्थः खण्डः) ।

यो राजा चर्षणीनां याता रथेभिरध्रिगुः ।
विश्वासां तरुता पृतनानां ज्येष्ठं यो वृत्रहा गृणे ॥१॥
स्वयं प्रकाशित सब अंगों में, उसी इन्द्र का गान करूँ ।
गति दाता और पापविनाशक, विघ्नहारी का मान करूँ ॥

यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि ।
मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतये वि द्विषो वि मृधो जहि ॥२॥
निर्भय करो हे इन्द्र हमें, तू समर्थ बलवान है ।
द्वेषभाव को नाश कर दे, हिंसा का जो प्राण है ॥

वास्तोष्पते ध्रुवा स्थूणांसत्रं सोम्यानाम् ।
द्रप्सः पुरां भेत्ता शश्वतीनामिन्द्रो मुनीनां सखा ॥३॥
सब के वासी देहरक्षक, तुम भक्तों के आधार हो ।
ज्ञानियों को मोक्ष देते, मुनियों के मित्र सर्वाधार हो ॥

बण्महाँ असि सूर्य बडादित्य महाँ असि ।
महस्ते सतो महिमा पनिष्टम मह्ना देव महाँ असि ॥४॥
हे प्रेरक हे सदा एकरस, तुम सत्य ही महान हो ।
महिमा तेरो बहुत बड़ो, स्तुति योग्य सब की शान हो ॥

अश्वी रथी सुरूप इद् गोमान् यदिन्द्र ते सखा ।
श्वात्रभाजा वयसा सचते सदा चन्द्रैर्याति सभामुप ॥५॥
कर्म से बलशाली सुन्दर, तेरा मित्र ज्ञानवान हो ।
जीवन में ऐश्वर्य मिले, सभा समाज में मान हो ॥

यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतं भूमिरुत स्युः ।
न त्वा वज्रिन्त्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी ॥६॥
हजारों सूर्य और ब्रह्माण्ड, तुझ तक जा नहीं सकते ।
असंख्यों भूमियां द्यौलोक, तुझ को पा नहीं सकते ॥

यदिन्द्र प्रागपागुदङ् न्यग्वा हूयसे नृभिः ।
सिमा पुरु नृषूतो अस्यानवेऽसि प्रशर्ध तुर्वशे ॥७॥
भक्त जन तुझ को पुकारें, चारों दिशाओं से प्रभु ।
पा चुके दर्शन अनेकों, तेरी कलाओं के प्रभु ॥

दोष कर दे दूर उनके झुक के चलते जो सदा।
तेरी शक्ति प्राप्त कर के, सब दोष दलते जो सदा॥

कस्तमिन्द्र त्वा वसवा मर्त्यो दधर्षति।
श्रद्धा हि ते मघवन् पार्ये दिवि वाजी वाजं सिषासति ॥८॥
तेरा कौन कर सके निरादर, तू सब को देता वास है।
द्युलोक में है ज्ञान देता, श्रद्धा तेरे पास है॥

इन्द्राग्नी अपादियं पूर्वागात् पद्वतीभ्यः।
हित्वा शिरो जिह्वया रारपच्चरत् त्रिंशत् पदा न्यक्रमीत् ॥६॥
बुद्धियां ले धारणावती, हे इन्द्र मेरे पास आ।
पूर्ण कर शुभकामनाएं मेरे मन में वास पा॥

इन्द्र नेदीय एदिहि मितमेधाभिरूतिभिः।
आ शन्तम शन्तमाभिरभिष्टिभिरा स्वापे स्वापिभिः ॥१०॥
तेरी चेतन सत्ता स्वामी, सब से आगे चलती है।
इन्द्र अग्नि तक जाकर, अपना काम वह करती है॥

इति नवमी दशतिः (पञ्चमः खण्डः)।

इत ऊती वो अजरं प्रहेतारमप्रहितम्।
आशुं जेतारं हेतारं रथीतममतूर्तं तुग्रियावृधम् ॥१॥
ज्ञान बल को जो बढ़ाता, उसी इन्द्र का ध्यान धरो।
सर्वव्यापक अमर प्रेरक, रक्षक का गुण गान करो॥

मो षु त्वा वाघतश्च नारे अस्मन्नि रीरमन्।
आरात्ताद्वा सधमादं न आ गहीह वा सन्नुप श्रुधि ॥२॥
हे प्रभु तुम से दूर जो रहते, उल्टी चाल चला करते।
मेधावी भी नहीं सुहाते, जो प्रज्ञा को छला करते॥

सुनोता सोमपाव्ने सोममिन्द्राय वज्रिणे।
पचता पक्तीरवसे कृणुध्वमित् पृणन्नित् पृणते मयः ॥३॥
साधन वाले इन्द्र प्रभु हित, आनन्द रस तैयार करो।
हो प्रसन्न वह रक्षा करेगा, सुखदायक से प्यार करो॥

यः सत्राहा विचर्षणिरिन्द्रं तं हूमहे वयम् ।
सहस्रमन्यो तुविनृम्ण सत्पते भवा समत्सु नो वृधे ॥४॥
शत्रुनाशक इंद्र प्रभु का, हम सब मिल आह्वान करें।
तेज का दाता, सत् का रक्षक, जीवन को गतिमान् करे ॥

शचीभिर्नः शचोवसू दिवा नक्तं दिशस्यतम् ।
मा वां रातिरुपदसत् कदाचनास्मद्रातिः कदाचन ॥५॥
अनन्तशक्ति वाले अश्वियो, प्रेरणा दिनरात दो।
दान तुम देते रहो, हमारे दान में भी साथ दो ॥

यदा कदा च मीढुषे स्तोता जरेत मर्त्यः ।
आदिद् वन्देत वरुणं विपा गिरा धर्तारं विव्रतानाम् ॥६॥
जो पापियों को दण्ड देकर, सुख को वर्षा करता है।
वंदना उसको करें जो, विविध गुणों का धर्ता है ॥

पाहि गा अन्धसो मद इन्द्राय मेध्यातिथे ।
यः सम्मिश्लो हर्योर्यो हिरण्यय इन्द्रो वज्री हिरण्ययः ॥७॥
इन्द्रियों का रक्षा करके, आनन्द का अर्जन करें।
ज्ञान एवं कर्मबल से, इन्द्र तम तर्जन करें ॥

उभयं शृणवच्च न इन्द्रो अर्वागिदं वचः ।
सत्राच्या मघवान्त्सोमपीतये धिया शविष्ठ आ गमत् ॥८॥
हे इन्द्र हमारे अन्दर बाहिर को, वाणियां सुन लीजिए।
सद् बुद्धि से ऐश्वर्य देकर, परमानन्द रस दीजिए ॥

महे च न त्वाद्रिवः परा शुल्काय दीयसे ।
न सहस्राय नायुताय वज्रिवो न शताय शतामघ ॥९॥
हे वज्रधारी इन्द्र तुझ को, मैं न छोड़ूंगा कभी।
चाहे मिले लाखों करोड़ों, सम्पत्तियां मुझ को सभी ॥

वस्याँ इन्द्रासि मे पितुरुत भ्रातुरभुञ्जतः ।
माता च मे छदयथः समा वसो वसुत्वनाय राधसे ॥१०॥
प्राप्त धनों का भोग न करें, उन भ्रात पिता से श्रेष्ठ हो।
ऐश्वर्य बढ़ाते लाभ कराते, माता से तुम श्रेष्ठ हो ॥

इति दशमो दशतिः (दशम खण्डः)।

॥ इति तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः ॥

अथ चतुर्थः प्रपाठकः

(प्रथमोऽर्धः)

इम इन्द्राय सुन्विरे सोमासो दध्याशिरः ।
तॉं आ मदाय वज्रहस्त पीतये हरिभ्यां याह्योक आ ॥१॥
आत्मा के लिए ज्ञानरस, मिला ध्यान के योग से ।
परमानन्द मिलेगा तुझ को, ज्ञान कर्म उपभोग से ॥

इम इन्द्र मदाय ते सोमाश्चिकित्र उक्थिनः ।
मधोः पपान उप नो गिरः शृणु रास्व स्तोत्राय गिर्वणः ॥२॥
हे आत्मन् तव हर्ष के हित, करें ज्ञान की साधना ।
पान करो मधु गान सुनो, मम पूर्ण कर दो कामना ॥

आ त्वा३द्य सबर्दुघां हुवे गायत्रवेपसम् ।
इन्द्रं धेनुं सुदुघामन्यामिषमुरुधारामरङ्कृतम् ॥३॥
मधुर अपना ज्ञान देती, भक्तों को करती गतिमान् ।
सुख से बरसाएं बड़ी धार को, तू है कामधेनु समान ॥

न त्वा बृहन्तो अद्रयो वरन्त इन्द्र वीडवः ।
यच्छिक्षसि स्तुवते मावते वसु नकिष्टदा मिनाति ते ॥४॥
बड़े-बड़े पर्वत भी आकर, तुझ को रोक नहीं पाते ।
भक्तों को जो संपत्ति देता, नाश न उसका कर जाते ॥

क ईं वेद सुते सचा पिबन्तं कद्वयो दधे ।
अयं यः पुरो बिभिनत्त्योजसा मन्दानः शिप्र्यन्धसः ॥५॥
यज्ञ करें अमर रस पावें, इन्द्र ही उसका पान करें ।
दीर्घकाल तक आनन्द भोगें, देहों का अभिमान करें ॥

यदिन्द्र शासो अव्रतं च्यावया सदसस्परि ।
अस्माकमंशुं मघवन् पुरुस्पृहं वसव्ये अधि बर्हय ॥६॥
पद से हटाओ व्रतविधाता, जो नियम पालन न करते ।
उनको बढ़ाते ही रहो, जो व्रतों को नित्य धरते ॥

त्वष्टा नो दैव्यं वचः पर्जन्यो ब्रह्मणस्पतिः।
पुत्रैर्भ्रातृभिरदितिर्नु पातु नो दुष्टरं त्रामणं वचः ॥७॥
हे दुःखनाशक गीत तेरे, गंभीर स्वर पाते रहें।
निर्माण पालन और पुष्टि का, अक्षर ज्ञान पाते रहें ॥

कदा चन स्तरीरसि नेन्द्र सश्चसि दाशुषे।
उपोपेन्नु मघवन् भूय इन्नु ते दानं देवस्य पृच्यते ॥८॥
इन्द्र तू वन्ध्या गाय नहीं, तेरा भक्त सदा कुछ पाता है।
अपने दान भण्डारे से तू, सदा दान बरसाता है ॥

युङ्क्ष्वा हि वृत्रहन्तम हरी इन्द्र परावतः।
अर्वाचीनो मघवन्त्सोमपीतय उग्र ऋष्वेभिरा गहि ॥९॥
मेरी भटकती इन्द्रियां, तेरा ज्ञान पाकर शान्त हों।
आनन्द रस का पानकर, तेरे साथ न उद्भ्रान्त हों ॥

त्वामिदा ह्यो नरोऽपीप्यन् वज्रिन् भूर्णयः।
स इन्द्र स्तोमवाहस इह श्रुध्युप स्वसरमा गहि ॥१०॥
हे शक्तिमन् तेरे भक्तों ने, तुझ को सदा मनाया है।
सुनो टेर उस साधक की, जो शरण तुम्हारी आया है ॥

इति प्रथमा दशतिः (सप्तमः खण्डः)।

प्रत्यु अदर्श्यायत्यू३च्छन्ती दुहिता दिवः।
अपो मही वृणुते चक्षुषा तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी ॥१॥
देख रहा है साधक तुझ को, आलोक लोक से आई हो।
तम की नाशक नेत्री बनकर, ज्ञानशक्ति ले छाई हो ॥

इमा उ वां दिविष्टय उस्रा हवन्ते अश्विना।
अयं वामह्वेऽवसे शचीवसू विशं विशं हि गच्छथः ॥२॥
चिति शक्तियां तुम्हें बुलातीं, प्रकाश पाने के लिए।
अन्तर्ज्ञान के धनी अश्वियों को, रक्षक बनाने के लिए ॥

कुष्ठः को वामश्विना तपानो देवा मर्त्यः।
घ्नता वामश्मया क्षयमाणोंऽशुनेत्थमु ग्राद्वन्यथा ।।३।।
उससे होते तृप्त अश्वियो, जो ठीक रूप से खाता है।
भूख प्यास से दुःखी न रहता, वही तुझ को भाता है ।।

अयं वां मधुमत्तमः सुतः सोमो दिविष्टिषु।
तमश्विना पिबतं तिरो अह्न्य‍ं धत्तं रत्नानि दाशुषे ।।४।।
चेतना से भरे हुए तुम, आनन्द रस का पान करो।
जिस साधक ने इसे बनाया, उसको सब फलदान करो ।।

आ त्वा सोमस्य गल्दया सदा याचन्नहं ज्या।
भूर्णि मृगं न सवनेषु चुक्रुधं क ईशानं न याचिषत् ।।५।।
सारे यज्ञों में तुम रहते, परमानन्द का दान करो।
याचना से भले ही रूठो, दाता मेरा मान करो।।

अध्वर्यो द्रावया त्वं सोममिन्द्रः पिपासति।
उपो नूनं युयुजे वृषणा हरी आ च जगाम वृत्रहा ।।६।।
हे यज्ञ करता तू बहा रस, इन्द्र पीने आ गया।
विघ्ननाशक शक्तियां ले, सुख बढ़ाने आ गया।।

अभीषतस्तदा भरेन्द्र ज्यायः कनीयसः।
पुरुवसुर्हि मघवन् बभूविथ भरे भरे च हव्यः ।।७।।
परमानन्द तू दे सदा, जो उसको पाना चाहते।
ऐश्वर्यवाले पोषणकर्ता, प्रभु के पास जाना चाहते।।

यदिन्द्र यावतस्त्वमेतावदहमीशीय।
स्तोतारमिद्दधिषे रदावसो न पापत्वाय रंसिषम् ।।८।।
हे इन्द्र तेरा धन जो पाऊँ, साधक को ही दान करूँ।
पापी दुष्ट, अन्यायी को, कभी न मैं धनवान करूँ।।

त्वमिन्द्र प्रतूर्तिष्वभि विश्वा असि स्पृधः।
अशस्तिहा जनिता वृत्रतूरसि त्वं तूर्य तरुष्यतः ।।९।।
हे इन्द्र तू आत्मिक संघर्षों में, नायक बन चमकाता है।
हिंसक भावों को दूर हटाकर, अनुशासन में लाता है।।

प्र यो रिरिक्ष ओजसा दिवः सदोभ्यस्परि ।
न त्वा विव्याच रज इन्द्र पार्थिवमति विश्वं ववक्षिथ ॥१०॥
सारे लोकों को पारकर, तू ज्योति लोक में रहता है ।
जग के दोष न तुझ को व्यापें, तू इन सब को सहता है ॥

इति द्वितीया दशतिः (अष्टमः खण्डः) ।

असावि देवं गोऋजीकमन्धो न्यस्मिन्निन्द्रो जनुषेमुवोच ।
बोधामसि त्वा हर्यश्व यज्ञैर्बोधा न स्तोममन्धसो मदेषु ॥१॥
साधकों ने है सिद्ध किया, भक्ति रस का प्याला ।
ज्ञान यज्ञों में तुझे जगाते, मत भूल मेरे गीतों की माला ॥

योनिष्ट इन्द्र सदने अकारि तमा नृभिः पुरुहूत प्र याहि ।
असो यथा नोऽविता वृधश्चिद्ददो वसूनि ममदश्च सोमैः ॥२॥
तेरा भवन सजा है प्यारे, तू इसमें बसने आ जा ।
तू रक्षक तू मोदक, आनन्द बढ़ाने आ जा ॥

अदर्दरुत् समसृजो वि खानि त्वमर्णवान् बद्बधानाँ अरम्णाः ।
महान्तमिन्द्र पर्वतं वि यद्वः सृजद्धारा अव यद्दानवान् हन् ॥३॥
दुष्टों का कर नाश तूने इन्द्रियों का किया निर्माण ।
इसी देह में बहाई तूने, आनन्द की धारा महान ॥

सुष्वाणास इन्द्र स्तुमसि त्वा सनिष्यन्तश्चित्तुविनृम्ण वाजम् ।
आ नो भर सुवितं यस्य कोना तना त्मना सह्याम त्वोताः ॥४॥
उत्तम अन्न का सेवन करते, तेरे गीत हम गाते हैं ।
हम को हमारा लक्ष्य दिखा, जहां पर आनन्द पाते हैं ॥

जगृह्मा ते दक्षिणमिन्द्र हस्तं वसूयवो वसुपते वसूनाम् ।
विद्मा हि त्वा गोपतिं शूर गोनामस्मभ्यं चित्रं वृषणं रयिं दाः ॥५॥
जीवन तत्त्वों का तू स्वामी, तेरा पकड़ें दायां हाथ ।
हम को पोषक चेतन धन दे, तू है दिव्य ज्योति का नाथ ॥

इन्द्रं नरो नेमधिता हवन्ते यत्पार्या युनजते धियस्ताः।
शूरो नृषाता श्रवसश्च काम आ गोमति व्रजे भजा त्वं नः ॥६॥
जीवन रण में उसे बुलाते, जो पार लगाने वाला है।
कर्म ज्ञान की शक्ति देकर, पाप नशाने वाला है॥

वयः सुपर्णा उप सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः।
अप ध्वान्तमूर्णुहि पूर्द्धि चक्षुर्मुमुग्ध्या३स्मान्निधयेव बद्धान् ॥७॥
दूर-दूर तक जाने वाली, इन्द्रियां तुझ से मांग रहीं।
अन्धकार से प्रभु छुड़ाओ, ज्योति पथ में जाग रहीं॥

नाके सुपर्णमुप यत् पतन्तं हृदा वेनन्तो अभ्यचक्षत त्वा।
हिरण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुरण्युम् ॥८॥
अभिन्न मित्र जानकर तुम को, शक्तिशाली पक्षी माना।
विघ्ननिवारक दिव्यादेश से, ज्योति पथ चमकाना॥

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः।
स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥९॥
सब से पहिले उसी इन्द्र ने, वेद ज्ञान चमकाया था।
सत् के और असत् के सारे, कारण को समझाया था॥
प्यारा सुन्दर जीवन उसने, शब्दों में समझाया था।
सारी ज्ञान रश्मियों को, उसने ही प्रकटाया था॥

अपूर्व्या पुरुतमान्यस्मै महे वीराय तवसे तुराय।
विरप्शिने वज्रिणे शन्तमानि वचांस्यस्मै स्थविराय तक्षुः ॥१०॥
उसी महान् बलशाली का, निशदिन ही हम गान करें।
विघ्न का नाशक शक्तिशाली, सब का ही कल्याण करें॥

इति तृतीया दशतिः (नवमः खण्डः)।

अव द्रप्सो अंशुमतीमतिष्ठदीयानः कृष्णो दशभिः सहस्रैः।
आवत्तमिन्द्रः शच्या धमन्तमप स्नीहितिं नृमणा अधद्राः ॥१॥
जब चमकीला काला, पाप आत्मा पर करता वार।
उसे धरा पर पटक मारता, इन्द्र लिए कर्म तलवार॥

वृत्रस्य त्वा श्वसथादीषमाणा विश्वे देवा अजहुर्ये सखायः ।
मरुद्भिरिन्द्र सख्यं ते अस्त्वथेमा विश्वाः पृतना जयासि ॥२॥
पाप की सब भावनाएं दिव्य गुणों को हैं गिरातीं ।
इन्द्र सम सुविचार सेना, शत्रु मण्डल को मिटातीं ॥

विधुं दद्राणं समने बहूनां युवानं सन्तं पलितो जगार ।
देवस्य पश्य काव्यं महित्वाद्या ममार स ह्यः समान ॥३॥
सब को मार गिराने वाला, विघ्नासुर है डरा हुआ ।
कल तक था जो प्राणों वाला, दिव्यगुणों से भरा हुआ ॥

त्वं ह त्यत् सप्तभ्यो जायमानोऽशत्रुभ्यो अभवः शत्रुरिन्द्र ।
गूढे द्यावापृथिवी अन्वविन्दो विभुमद्भ्यो भुवनेभ्यो रणं धाः ॥४॥
दुर्भावों को नष्ट करे, जो विचार तलवार से ।
पंच कोषों को वही नर, जीतता क्रम वार से ॥

मेडि न त्वा वज्रिणं भृष्टिमन्तं पुरुधस्मानं वृषभं स्थिरप्स्नुम् ।
करोष्यर्यस्तरुषीर्दुवस्युरिन्द्र द्युक्षं वृत्रहणं गृणीषे ॥५॥
साधना की कामना से, इन्द्रियों को तू चलाता ।
विघ्ननाशक शक्तिदाता, सब का पोषक आश्रयदाता ॥

प्र वो महे महे वृधे भरध्वं प्रचेतसे प्र सुमतिं कृणुध्वम् ।
विशः पूर्वीः प्र चर चर्षणिप्राः ॥६॥

उच्च चेतना में मन लगाओ,
ऊपर ऊपर चढ़ते जाओ ।
ज्ञान को पाकर इन्द्र के मुख से
जनता के सेवक बन जाओ ॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि सञ्जितं धनानि ॥७॥
इन्द्र का चाहें सहारा, ज्ञान साधक काम करने के लिए ।
नेता हमारा सब से उत्तम, तेज से विघ्न हरने के लिए ॥

उदु ब्रह्माण्यैरत श्रवस्येन्द्रं समर्ये महया वसिष्ठ ।
आ यो विश्वानि श्रवसा ततानोपश्रोता म ईवतो वचांसि ॥८॥
जीवन उत्तम करना है तो, वेदमंत्र उच्चार लो ।
वेद-ज्ञाता, यज्ञकर्ता, इन्द्र मन में धार लो ॥

चक्रं यदस्याप्स्वा निषत्तमुतो तदस्मै मध्विच्चच्छद्यात् ।
पृथिव्यामतिषितं यदूधः पयो गोष्वदधा ओषधीषु ॥६॥
बंध गया यह चक्र कर्मों का, मधुर रस धार के।
गाय भूमि इन्द्रियां बन ज्ञान देता, अन्न दुग्ध आहार के ॥
क्रमंचक्र में जीव घूमता, पाता है संघर्ष को ।
ज्ञानी जनों को कष्ट न होता, सदा बढ़ाता हर्ष को ॥

इति चतुर्थी दशतिः (दशमः खण्डः) ।

त्यमू षु वाजिनं देवजूतं सहोवानं तरुतारं रथानाम् ।
अरिष्टनेमिं पृतनाजमाशुं स्वस्तये तार्क्ष्यमिहा हुवेम ॥१॥
कामरूप घोड़ों से चलते; ज्ञानप्रभा से ज्योतिमान ।
इन्द्र-रथ को हम बुलाते, संघर्षों में वेगवान ॥

आतारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं हवेहवे सुहवं शूरमिन्द्रम् ।
हुवे नु शक्रं पुरुहूतमिन्द्रमिदं हविर्मघवा वेत्विन्द्रः ॥२॥
मेरा रक्षक वीर इन्द्र है, करूं सदा उसका आह्वान ।
सारे भक्त हैं उसे बुलाते, मैं भी गाऊं उसका गान ॥

यजामह इन्द्रं वज्रदक्षिणं हरीणां रथ्यां३ विव्रतानाम् ।
प्र श्मश्रुभिर्दोधुवदूर्ध्वधा भुवद्वि सेनाभिर्भयमानो वि राधसा ॥३॥
उसी इन्द्र की करें भक्ति, जो दण्ड उद्दण्ड को देता ।
पाप शक्ति का नाश करे, वह उन्नति पथ का नेता ॥

सत्राहणं दाधृषिं तुम्रमिन्द्रं महामपारं वृषभं सुवज्रम् ।
हन्ता यो वृत्रं सनितोत वाजं दाता मघानि मघवा सुराधाः ॥४॥
सभी विघ्नों का नाश करके, ज्ञान के धन को ला देता है ।
करें उसी इन्द्र का गायन, जो भक्तों का पथ नेता है ॥

यो नो वनुष्यन्नभिदाति मर्त्त उगणा वा मन्यमानस्तुरो वा ।
क्षिधी युधा शवसा वा तमिन्द्राभी ष्याम वृषमणस्त्वोताः ॥५॥
अपनी मौत बुलाने वाला, कोई हम से लड़ने आवे ।
तुझ से रक्षित नाशक शस्त्रों के, आगे कभी न टिकने पावे ॥

यं वृत्रेषु क्षितयः स्पर्धमाना यं युक्तेषु तुरयन्तो हवन्ते।
यं शूरसातौ यमपामुपज्मन् यं विप्रासो वाजयन्ते स इन्द्रः ॥६॥
आगे बढ़ने की इच्छा ले, इन्द्रियां जिसे बुलाती हैं।
साधन-पथ को निर्मल करने, इन्द्र का नाम जपाती हैं॥

इन्द्रापर्वता बृहता रथेन वामीरिष आ वहतं सुवीराः।
वीतं हव्यान्यध्वरेषु देवा वर्धेथां गीर्भिरिडया मदन्ता ॥७॥
आत्मा में तुम रहते हो, वीर प्रेरणादायक हो।
आत्मिक-यज्ञ में करें समर्पण, सत्य तेज विधायक हो॥

इन्द्राय गिरो अनिशितसर्गा अपः प्रैरयत् सगरस्य बुध्नात्।
यो अक्षेणेव चक्रियौ शचीभिर्विष्वक्तस्तम्भ पृथिवीमुत द्याम् ॥८॥
इंद्र की भौतिक, आत्मिक, शक्ति-पहियों से रथ चलता।
अर्पण करके कर्मजाल को, अंतर्मन है ज्ञान से पलता॥

आ त्वा सखायः सख्या ववृत्युस्तिरः पुरु चिदर्णवाञ्जगम्याः।
पितुर्नपातमा दधीत वेधा अस्मिन् क्षये प्रतरां दीद्यानः ॥९॥
अर्थ चेतना का सागर तू है, तुझ में लहरें गमन करें।
मित्रता से रहें सदा सब, प्रभु पालक में रमन करें॥

को अद्य युङ्क्ते धुरि गा ऋतस्य शिमीवतो भामिनो दुर्हृणायून्।
आसन्नेषामप्सुवाहो मयोभून् य एषां भृत्यामृणधत् स जीवात् ॥१०
काम क्रोध से भरी इन्द्रियां, ये बड़ी बलवान् हैं।
सत्य पथ पर संयम से चलें, जीवन का कल्याण है॥

इति पंचमो दशतिः (एकादशः खण्डः)।

इति चतुर्थप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः॥

गायन्ति त्वा गायत्रिणोऽर्चन्त्यर्कमर्किणः।
ब्रह्माणस्त्वा शतक्रत उद्वंशमिव येमिरे ॥१॥
ज्ञान के दाता, कर्म कराता, उसी इन्द्र का ध्यान धरें।
ध्वज डंडे सा उसे उठावें, भक्त उसी का गान करें॥

इन्द्रं विश्वा अवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः।
रथीतमं रथीनां वाजानां सत्पतिं पतिम् ॥२॥
मनमंदिर में जो रहता है, रक्षक पालक नेता है।
सब मिल गीत उसी के गावें, जो सच्चा सुख देता है॥

इममिन्द्र सुतं पिब ज्येष्ठममर्त्यं मदम्।
शुक्रस्य त्वाभ्यक्षरन् धारा ऋतस्य सादने ॥३॥
ज्ञान जल सींच कर, परम सत्य दर्शन करें।
परम मोक्ष पाने के लिए, इन्द्र बन धर्षण करें॥

यदिन्द्र चित्र म इह नास्ति त्वादातमद्रिवः।
राधस्तन्नो विदद्वस उभयाहस्त्या भर ॥४॥
चेतनामय इन्द्र मुझ को, ज्ञान धन का दान दे।
खाली पड़ी है मेरी झोली, उसको भर भगवान दे॥

श्रुधी हवं तिरश्च्या इन्द्र यस्त्वा सपर्यति।
सुवीर्यस्य गोमतो रायस्पूर्धि महाँ असि ॥५॥
इन्द्र तू है महती शक्ति, तेरा पूजन जो करे।
शक्तिशाली इंद्रियजित को, शक्तिधन से तू भरे॥

असावि सोम इन्द्र ते शविष्ठ धृष्णवा गहि।
आ त्वा पृणक्त्विन्द्रियं रजः सूर्यो न रश्मिभिः ॥६॥
ज्ञान का आनन्द पाता, वासना से जो परे।
सूर्य के आलोक सम, मोद वह मन में भरे॥

एन्द्र याहि हरिभिरुप कण्वस्य सुष्टुतिम्।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥७॥
भक्त जन जो गीत गाते, हे इन्द्र साधन साथ सुन।
आलोक लोक के वासी, दिव्य जीवन का स्वामी बन॥

आ त्वा गिरो रथीरिवास्थुः सुतेषु गिर्वणः।
अभि त्वा समनूषत गावो वत्सं न धेनवः ॥८॥
आत्म यज्ञ में तुम्हें बुलाएं, गीत प्रशंसा के गाते।
ज्यों बछड़ा गाय ढिग जाए, वैसे हम तुझे बुलाते॥

एतो न्विन्द्रं स्तवाम शुद्धं शुद्धेन साम्ना ।
शुद्धैरुक्थैर्वावृध्वांसं शुद्धैराशीर्वान् ममत्तु ॥९॥
आओ रिझाएं उस प्रभु को, जो शुद्ध ज्योति रूप है।
निर्मल गीत उसको भेंट दें, आनन्द का जो भूप है ॥

यो रयिं वो रयिन्तमो यो द्युम्नैर्द्युम्नवत्तमः ।
सोमः सुतः स इन्द्र तेऽस्ति स्वधापते मदः ॥१०॥
स्वधापते सब धन के स्वामी, इन्द्र प्रभु तू कांतिमान् ।
परमानंद के रस को पाकर, पाता तू आनंद महान् ॥

इति षष्ठी दशतिः (द्वादशः खण्डः) ।

इति तृतीयोऽध्यायः ।

प्रत्यस्मै पिपीषते विश्वानि विदुषे भर ।
अरङ्गमाय जग्मयेऽपश्चादध्वने नरः ॥१॥
जीवन पथ में आगे रह कर, सब को राह दिखाता है।
हे इंद्र उसे आनंद दान दे, जो ज्ञान से प्रेम बढ़ाता है ॥

आ नो वयो वयःशयं महान्तं गह्वरेष्ठाम् ।
महान्तं पूर्विणेष्ठामुग्रं वचो अपावधीः ॥२॥
जग को ठीक चलाने वाला, सब के मन में रहता है।
सब से कोमल वाणी बोलो, ऐसे निशदिन कहता है ॥

आ त्वा रथं यथोतये सुम्नाय वर्तयामसि ।
तुविकूर्मिमृतीषहमिन्द्रं शविष्ठ सत्पतिम् ॥३॥
तुझ से मिलकर इन्द्र रहें हम, तू ही सत्य का त्राता है।
ज्ञान कर्म का रचने वाला, जीत वासना लाता है ॥

स पूर्व्यो महोनां वेनः क्रतुभिरानजे ।
यस्य द्वारा मनुः पिता देवेषु धिय आनजे ॥४॥
पूजनीयों का ज्ञानी नेता, ज्ञान कर्म प्रकाश करे ।
ज्ञानी जनों को प्रेरित करता, अज्ञान निशा का नाश करे ॥

यवी वहन्त्याशवो भ्राजमाना रथेष्वा ।
पिबन्तो मदिरं मधु तत्र श्रवांसि कृण्वते ॥५॥

परमानंद का भोग करातीं, जहां आलोक-किरण ले जातीं ।
अन्तिम लक्ष्य वही हमारा, इन्द्रियां जिसका बोध करातीं ॥

त्यमु वो अप्रहणं गृणीषे शवसस्पतिम् ।
इन्द्रं विश्वासाहं नरं शचिष्ठं विश्ववेदसम् ॥६॥

उसी इन्द्र के गीत सुनाऊँ, जो अरियों का नाश करे ।
कभी न हारे सब का नेता, उत्तम ज्ञान प्रकाश करे ॥

दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः ।
सुरभि नो मुखा करत् प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥७॥

व्यापक प्रभु की स्तुति करें, जो सन्मार्ग पर ले जाता ।
सदा विजय का लाभ करे, आयु सब की सदा बढ़ाता ॥

पुरां भिन्दुर्युवा कविरमितौजा अजायत ।
इन्द्रो विश्वस्य कर्मणो धर्ता वज्री पुरुष्टुतः ॥८॥

उसी इन्द्र की करें प्रशंसा, जो सब कोषों का वेत्ता है ।
सदा युवा वह क्रांतिकारी, रक्षा कामों का नेता है ॥

इति सप्तमो दशतिः (प्रथमः खण्डः) ।

प्र प्र वस्त्रिष्टुभमिषं वन्दद्वीरायेन्दवे ।
धिया वो मेधसातये पुरन्ध्या विवासति ॥१॥

आत्मवीर हैं जिसे भोगते, पाओ वो ही परमानंद ।
प्रेरणा प्रभु देता है, जाग्रत, स्वप्न सोने में सानंद ॥

कश्यपस्य स्वर्विदो यावाहुः सयुजाविति ।
ययोर्विश्वमपि व्रतं यज्ञं धीरा निचाय्य ॥२॥

साधक के सहयोगी हैं सब, सुखमार्ग पर ले जाते ।
प्राण अपान की समान क्रिया सम, यज्ञ सदा ही सुख लाते ॥

अर्चत प्रार्चत नरः प्रियमेधासो अर्चत ।
अर्चन्तु पुत्रका उत पुरमिद् धृष्णवर्चत ॥३॥
मोक्ष का जो दान करता, उस इन्द्र का पूजन करो ।
देह बंधन से छुड़ाता, उस का सभी अर्चन करो ॥

उक्थमिन्द्राय शंस्यं वर्धनं पुरुनिष्षिधे ।
शक्रो यथा सुतेषु णो रारणत् सख्येषु च ॥४॥
मोक्षदाता इन्द्र को निज ज्ञान यज्ञों से रिझाएं ।
उसके ही सत् सहयोग को, सम्पूर्ण कर्मों में जगाएं ॥

विश्वानरस्य वस्पतिमनानतस्य शवसः ।
एवैश्च चर्षणीनामूती हुवे रथानाम् ॥५॥
ज्ञान कर्म के साधन मेरे, आगे ही बढ़ते जाएं ।
सर्वविजेता सब में व्यापक, इन्द्र रथ को हम बुलाएं ॥

स घा यस्ते दिवो नरो धिया मर्त्तस्य शमतः ।
ऊती स बृहतो दिवो द्विषो अंहो न तरति ॥६॥
जो मरणशील नर इन्द्रज्ञान का, बुद्धि से भक्षण करता ।
द्वेषभाव को दूर भगाकर, उस का इन्द्र रक्षण करता ॥

विभोष्ट इन्द्र राधसो विभ्वी रातिः शतक्रतो ।
अथा नो विश्वचर्षणे द्युम्नं सुदत्र मंहय ॥७॥
भिन्न भिन्न कामों को करता, तेरे दानगुण अपरम्पार ।
अपना ज्ञानधन हम को दे दे, तू दानी सब देखनहार ॥

वयश्चित्ते पतत्रिणो द्विपाच्चतुष्पादर्जुनि ।
उषः प्रारन्नृतूंरनु दिवो अन्तेभ्यस्परि ॥८॥
सुंदर सुंदर किरणों वाली, उषे ज्ञान बरसाती जा ।
प्रकाशलोक से सीधी आकर, मधुर सुधा सरसाती जा ॥

अमी ये देवा स्थन मध्य आ रोचने दिवः ।
कद्व ऋतं कदमृतं का प्रत्ना व आहुतिः ॥९॥
प्रकाशलोक के बीचों बीच, कौन देव नित वास करे ।
अमर सत्य है कौन पुरातन, तर्पण किस का दास करे ॥

ऋचं साम यजामहे याभ्यां कर्माणि कृण्वते ।
वि ते सदसि राजतो यज्ञं देवेषु वक्षतः ॥१०॥
सामवेद, ऋग्वेद ज्ञान से, सारे कर्मों के जाल बुने ।
विद्वान् उन्हीं से यज्ञ कराते, बैठ सभा उपदेश सुनें ॥

इति अष्टमी दशतिः (द्वितीयः खण्डः) ।

विश्वाः पृतना अभिभूतरं नरः सजूस्ततक्षुरिन्द्रं जजनुश्च राजसे ।
क्रत्वे वरे स्थेमन्यामुरीमुतोग्रमोजिष्ठं तरसं तरस्विनम् ॥१॥
उत्तम शोभा देता सब को, क्रियाशील बनाता है ।
आलसरहित इन्द्र को पाओ, जो दुष्टों को मार भगाता है ॥

श्रत्ते दधामि प्रथमाय मन्यवेऽहन् यद् दस्युं नर्यं विवेरपः ।
उभे यत्त्वा रोदसी धावतामनु भ्यसात्ते शुष्मात् पृथिवी चिदद्रिवः ॥२॥
तेरे बल पर धरा खड़ी, द्यौलोक तेरा अनुगामी है ।
तुझ ओजस्वी का मुझे सहारा, तू कर्मशक्ति का स्वामी है ॥
हिंसक वृत्तियों का नाश करे, तू कर्मशक्ति उपजाता है ।
तू सर्वश्रेष्ठ, तू सर्वजीत है, तेरा सब से ही नाता है ॥

समेत विश्वा ओजसा पतिं दिवो य एक इद् भूरतिथिर्जनानाम् ।
स पूर्व्यो नूतनमाजिगीषन्तं वर्तनीरनु वावृत एक इत् ॥३॥
प्रकाशलोक का एक है स्वामी, उसकी शरण हम जाएं ।
अनादि नई वृत्तियों को जीतें, उसके पीछे हम जाएं ॥

इमे त इन्द्र ते वयं पुरुष्टुत ये त्वारभ्य चरामसि प्रभूवसो ।
न हि त्वदन्यो गिर्वणो गिरः सघत् क्षोणीरिव प्रति तद्धर्य नो वचः ॥४॥
तेरी सभी प्रशंसा करते, तेरी ओर हम करें प्रयाण ।
हम सब साधक तुझे ध्यावें, विनय हमारी पर कर ध्यान ॥

चर्षणीधृतं मघवानमुक्थ्यमिन्द्रं गिरो बृहतीरभ्यनूषत ।
वावृधानं पुरुहूतं सुवृक्तिभिरमर्त्यं जरमाणं दिवेदिवे ॥५॥
प्रजापालक वह सबका ईश्वर, सब जन उसको नमन करें ।
आगे बढ़ते गीत हमारे, अविनाशी तक गमन करें ॥

अच्छा व इन्द्रं मतयः स्वर्युवः सध्रीचीर्विश्वा उशतीरनूषत ।
परि ष्वजन्त जनयो यथा पतिं मर्यं न शुन्ध्युं मघवानमूतये ॥६॥
पत्नी निज स्वामी को चाहे, जो उसका पालन करता ।
मेरी वृत्तियाँ तुझ को चाहें, तू परमानन्द धारण करता ॥

अभि त्यं मेषं पुरुहूतमृग्मियमिन्द्रं गीर्भिर्मदता वस्वो अर्णवम् ।
यस्य द्यावो न विचरन्ति मानुषं भुजे मंहिष्ठमभि विप्रमर्चत ॥७॥
प्रिय स्तोत्रों से मुग्ध करो, उस वेदगम्य सुखकारी को ।
मानव शक्ति पहुंच न पाती, भाग्यहित पूजो महिमाधारी को ॥

त्यं सु मेषं महया स्वर्विदं शतं यस्य सुभुवः साकमीरते ।
अत्यं न वाजं हवनस्यदं रथमिन्द्रं ववृत्यामवसे सुवृक्तिभिः ॥८॥
अपनी शक्ति मिले किरणों से. उसी इन्द्र का मान करो ।
जल्दी जल्दी यात्रा करने को, उसी अश्व का ध्यान करो ॥

घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी मधुदुघे सुपेशसा ।
द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा ॥९॥
टिके हुए हैं उसी शक्ति पर, बड़े बड़े ये अद्भुत लोक ।
आनन्ददात्री धरती माता, अंतरिक्ष द्यौलोक अशोक ॥

उभे यदिन्द्र रोदसी आपप्राथोषा इव ।
महान्तं त्वा महीनां सम्राजं चर्षणीनाम् ।
देवी जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥१०॥
हे इन्द्र उषा सम फैल रहा, तेरा प्रकाश सब ओर ।
पृथ्वी से द्यौलोक तक, छाया प्रताप तेरा घोर ॥

प्र मन्दिने पितुमदर्चता वचो यः कृष्णगर्भा निरहन्नृजिश्वना ।
अवस्यवो वृषणं वज्रदक्षिणं मरुत्वन्तं सख्याय हवेमहि ॥११॥
सरल ज्ञान से पापभाव का, निजशक्ति से नाश करो ।
प्रतिभाशाली साधन वाले, मित्र इन्द्र की आश करें ॥

इति नवमी दशतिः (तृतीयः खण्डः) ।

इन्द्र सुतेषु सोमेषु क्रतुं पुनीष उक्थ्यम् ।
विदे वृधस्य दक्षस्य महाँ हि षः ॥१॥
सिद्ध किए आनन्दरसों से, शुद्ध ज्ञान पा सुख पाता ।
हे इन्द्र तू ही है यशभागी, सब से तू ऊंचा कहलाता ॥

तमु अभि प्र गायत पुरुहूतं पुरुष्टुतम् ।
इन्द्रं गीर्भिस्तविषमा विवासत ॥२॥
करें प्रशंसा उसी इन्द्र की, जिसका भक्त जन गान करें ।
शीघ्र चले वह बल का स्वामी, उसका दर्शन ध्यान धरें ॥

तं ते मदं गृणीमसि वृषणं पृक्षु सासहिम् ।
उ लोककृत्नुमद्रिवो हरिश्रियम् ॥३॥
हे अदम्य तेरे परमानन्द का, सदा सदा ही करें बखान ।
संघर्षों में विजयी होकर, ज्ञानी जन का तू तन प्राण ॥

यत् सोममिन्द्र विष्णवि यद्वा घ त्रित आप्त्ये ।
यद्वा मरुत्सु मन्दसे समिन्दुभिः ॥४॥
आनन्द-मग्न हो रहता उनमें, जो हैं तेरे भक्त सुजान ।
तीन अवस्था पार करूं मैं, जो हैं तेरे भक्त सुजान ॥

एदु मधोर्मदिन्तरं सिञ्चाध्वर्यो अन्धसः ।
एवा हि वीरस्तवते सदावृधः ॥५॥
भक्तिरस से सींच-सींचकर, साधक तू हर्षाता है ।
उन्नति करने वाला वीर ही, सदा तेरे गुण गाता है ॥

एन्दुमिन्द्राय सिञ्चत पिबाति सोम्यं मधु ।
प्र राधांसि चोदयते महित्वना ॥६॥
उसे बढ़ाओ शक्ति देकर, जो सब को धन देता है ।
शांतिदायक रस को पी ले, हे इन्द्र बड़ा तू नेता है ॥

एतो न्विन्द्रं स्तवाम सखायः स्तोम्यं नरम् ।
कृष्टीर्यो विश्वा अभ्यस्त्येक इत् ॥७॥
कर्मशील प्रजा का स्वामी, सब पर शासन करने वाला ।
उसी इन्द्र की करें प्रशंसा, जो नेता दुःख हरने वाला ॥

इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते बृहत् ।
ब्रह्मकृते विपश्चिते पनस्यवे ॥८॥
भक्तो गुण गाओ उसके, जो वेदों का उपदेश करे।
वही इन्द्र है वही ज्ञानी, देता वह सम संतोष अरे॥

य एक इद्विदयते वसु मर्ताय दाशुषे ।
ईशानो अप्रतिष्कुत इन्द्रो अङ्ग ॥९॥
हे शिष्य वही है इन्द्र अकेला, जो विजयी अधिष्ठाता है।
जो अपना सब कुछ अर्पण कर दे, वही सब धन पाता है॥

सखाय आ शिषामहे ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे ।
स्तुष ऊ षु वो नृतमाय धृष्णवे ॥१०॥
हे मित्रो हम गुण गाएं, विजयी इन्द्र बलवान् के।
वेदमंत्रों से गीत सुनाएं, पुरुषोत्तम भगवान् के॥

इति दशमी दशतिः (चतुर्थः खण्डः) ।

॥ इति चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः ॥

अथ पञ्चमः प्रपाठकः

(प्रथमोऽर्धः)

गृणे तदिन्द्र ते शव उपमां देवतातये। यद्धंसि वृत्रमोजसा शचीपते ॥१॥

ज्ञान की किरणें, तुझे सजातीं, हे इन्द्र तू बाधा नाश करे।
तेरे बल की करूं प्रशंसा, तू अपना दिव्य प्रकाश करे॥

यस्य त्यच्छम्बरं मदे दिवोदासाय रन्धयन्। अयं स सोम इन्द्र ते सुतः पिब ॥२॥

जिस रस को पी के तूने विघ्नासुर को भगाया है।
दिव्य गुणों से भरी सुधा, भक्त तेरे दर लाया है॥

एन्द्र नो गधि प्रिय सत्राजिदगोह्य। गिरिर्न विश्वतः पृथुः पतिर्दिवः ॥३॥

सब के प्यारे, सब को जीतो, कभी न छिपने पाते हो।
आओ हमारे पास आलोक पति, सब से ऊंचे जाते हो॥

य इन्द्र सोमपातमो मदः शविष्ठ चेतति। येना हंसि न्या३त्रिणं तमीमहे ॥४॥

जब तू मेरे इन्द्र जागता, अन्यायियों का नाश करे।
तेरे परमानन्द को पाएं, तू आनन्द शक्ति विकास करे॥

तुचे तुनाय तत्सु नो द्राघीय आयुर्जीवसे। आदित्यासः समहसः कृणोतन ॥५॥

हे आदित्यो तेजवन्त तुम, विनय हमारी कान करो।
वंश हमारा बना रहे, संतान को आयुवान करो॥

वेत्था हि निर्ऋतीनां वज्रहस्त परिवृजम्। अहरहः शुन्ध्युः परिपदामिव ॥६॥

शोध लगाने वाला जैसे, पदचिह्नों को पहिचानता।
हे वज्रहस्त ! जो करे बुराई, उसके मनोभाव तू जानता॥

अपामीवामप स्रिधमप सेधत दुर्मतिम् । आदित्यासो युयोतना नो अंहसः ॥७॥

हे आदित्यो रोग हटाओ, दुर्भावों को दूर करो।
पाप हटा मेरी आत्मा के, धर्मभाव भरपूर करो॥

पिबा सोममिन्द्र मन्दतु त्वा यं ते सुषाव हर्यश्वाद्रिः । सोतुर्बाहुभ्यां सुयतो नार्वा ॥८॥

साधक ने सधे अश्व सम, आनन्दामृत तैयार किया।
पीले इन्द्रियों के स्वामी, इसने धर्म मेघ आधार लिया॥

इति प्रथमा दशतिः (पञ्चमः खण्डः) ।

अभ्रातृव्यो अना त्वमनापिरिन्द्र जनुषा सनादसि । युधेदापित्वमिच्छसे ॥१॥

तू सदा स्वतन्त्र तू अजय इन्द्र, तेरा न कोई नेता है।
बन्धु बन सब संघर्षों में, सदा साथ तू देता है॥

यो न इदमिदं पुरा प्र वस्य आनिनाय तमु वः स्तुषे । सखाय इन्द्रमूतये ॥२॥

हे मित्रो जो हमें बसाता, जो सारे सुख दान करे।
उन्नतिपथ पर बढ़ने के हित, हम उसका आह्वान करें॥

आ गन्ता मा रिषण्यत प्रस्थावानो माप स्थात समन्यवः । दृढा चिद्यमयिष्णवः ॥३॥

मेरे संकल्पो मेरे मित्रो, दुःख मत मानो बढ़ो बढ़ो।
क्रोध करो मत बन के शासक, दृढ़ता से उन्नति शिखर चढ़ो॥

आ याह्ययमिन्दवेऽश्वपते गोपत उर्वरापते । सोमं सोमपते पिब ॥४॥

ज्ञान कर्म की सभी इन्द्रियाँ, जिसके बश में सदा रहें।
सिद्ध भक्त सोमरस पीता, सुखधारा में सदा बहें॥

त्वया ह स्विद्युजा वयं प्रति श्वसन्तं वृषभ ब्रुवीमहि। संस्थे जनस्य गोमतः ॥५॥

ज्ञान की वर्षा करने वाले, इन्द्र तुम्हें हम मित्र बनावें।
ज्ञानी जनों में बैठ बैठ, तेरे गुण दिन रात ही गावें॥

गावश्चिद् घा समन्यवः सजात्येन मरुतः सबन्धवः। रिहते ककुभो मिथः ॥६॥

हे संकल्पो इन्द्रियगण से, सदा तुम्हारा मेल है।
विस्तृत दिशाओं से आकर, ही होता तुम्हारा खेल है॥

त्वं न इन्द्रा भर ओजो नृम्णं शतक्रतो विचर्षणे। आ वीरं पृतनासहम् ॥७॥

शत बुद्धि वाले, सब का द्रष्टा, दीनता को दूर कर।
शत्रु विजेता हम सब को ही, वीर्य से भरपूर कर॥

अधा हीन्द्र गिर्वण उप त्वा काम ईमहे ससृग्महे। उदेव ग्मन्त उदभिः ॥८॥

पानी जैसे पानी में मिल, उस जैसा हो जाता है।
तुझ तक आके तुझ को पावें, लक्ष्य सफलता पाता है॥

सीदन्तस्ते वयो यथा गोश्रीते मधौ मदिरे विवक्षणे। अभि त्वामिन्द्र नोनुमः ॥९॥

हे इन्द्र गगनचारी पक्षी सम, हम भी ऊंचे गमन करें।
परमानन्द की आशा से, भक्त तुझे ही नमन करें॥

वयमु त्वामपूर्व्य स्थूरं न कच्चिद्भरन्तोऽवस्यवः। वज्रिञ्चित्रं हवामहे ॥१०॥

हे अद्‌भुत हे शक्तिशाली, अपनी रक्षा हित तुझे बुलावें।
बली बैल को जैसे पालें, तेरे निशदिन हम गुण गावें॥

इति द्वितीया दशतिः (षष्ठः खण्डः)।

स्वादोरित्था विषूवतो मधोः पिबन्ति गौर्यः। या इन्द्रेण सयावरीर्वृष्णा मदन्ति शोभथा वस्वीरनु स्वराज्यम् ॥१॥

सिद्ध परमानन्द रस को, इन्द्रियां जब पान करतीं।
इन्द्र के संग मोद भरतीं, तेजयुत निज राज्य करतीं॥

इत्था हि सोम इन्मदो ब्रह्म चकार वर्धनम् । शविष्ठ वज्रिन्नोजसा पृथिव्या निः शशा अहिमर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥२॥

हे वज्रधारी इन्द्र तू ने, सोम में आनन्द बसाया।
विघ्न बाधा नष्ट कर के, तूने अपना तेज पाया ॥

इन्द्रो मदाय वावृधे शवसे वृत्रहा नृभिः । तमिन्महत् स्वाजिषूतिमर्भे हवामहे स वाजेषु प्र नोऽविषत् ॥३॥

विघ्ननाशक निज मित्रों संग, परमानन्द को जो पाता।
हम उस को ही याद करते, कष्टों में वह त्राणदाता ॥

इन्द्र तुभ्यमिदद्रिवोऽनुत्तं वज्रिन् वीर्यम् । यद्ध त्यं मायिनं मृगं तव त्यन्मायायावधीरर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥४॥

हे वीर साधनशील इन्द्र, तेरा बल है सदा महान्।
निज युक्ति से नाश किया है, सारा भ्रम का जाल महान् ॥

प्रेह्यभीहि धृष्णुहि न ते वज्रो नि यंसते । इन्द्र नृम्णं हि ते शवो हनो वृत्रं जया अपोऽर्चन्ननु स्वराज्यम् ॥५॥

हे इन्द्र अमोघ वज्र से शत्रुओं को विनसाइये।
वज्र अरु बल से हमारी धन वृद्धि को विकसाइये ॥

यदुदीरत आजयो धृष्णवे धीयते धनम् । युङ्क्ष्वा मदच्युता हरी कं हनः कं वसौ दधोऽस्माँ इन्द्र वसौ दधः ॥६॥

जीवन पथ में सब बाधाएं, जिस से जीती जाती हैं।
हे इन्द्र इन्द्रियां तेरे वश हो, सुख सम्पत्ति को पाती हैं ॥

अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत । अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी ॥७॥

ज्ञान शक्ति और कर्म शक्ति, संकल्पों के संग मिल जाती।
दुष्ट भावना नाश करे वह, जन की प्रतिभा चमकाती ॥

उपो षु शृणुही गिरो मघवन्मातथा इव । कदा नः सूनृतावतः कर इदर्थयास इद्योजा न्विन्द्र ते हरी ॥८॥

हे ईश मेरो विनय को, सफल कब बनाओगे ।
इन्द्रियां वश में करें, तभी हमें अपनाओगे ॥

चन्द्रमा अप्स्वा३न्तरा सुपर्णो धावते दिवि। न वो हिरण्यनेमयः पदं विन्दन्ति विद्युतो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥९॥

प्रकाश लोक को यह मन मेरा, सुख से ऊपर जाता है।
सदा ज्ञान और कर्म शक्ति से, तेरी ज्योति को पाता है॥

प्रति प्रियतमं रथं वृषणं वसुवाहनम्। स्तोता वामश्विनावृषि स्तोमेभिर्भूषति प्रति माध्वी मम श्रुतं हवम् ॥१०॥

ज्ञान कर्म की दिव्य शक्तियो, सुख सम्पत्ति बरसाती हो।
मधुदाताओ, स्तुति सुनो तुम, जन-जन में क्रांति दिखाती हो॥

इति तृतीया दशतिः (सप्तमः खण्डः)।

आ ते अग्न इधीमहि द्युमन्तं देवाजरम्। यद्ध स्या ते पनीयसी समिद् दीदयति द्यवीषं स्तोतृभ्य आ भर ॥१॥

हे ज्योतिर्मय! तू अविनाशी है, तुझ को दीप्तिमान करे।
प्रकाशलोक में चमक तुम्हारी, भक्तों को प्रेरणा दान करे॥

अग्निं न स्ववृक्तिभिर्होतारं त्वा वृणीमहे। शीरं पावकशोचिषं वि वो मदे यज्ञेषु स्तीर्णबर्हिषं विवक्षसे ॥२॥

तुझे मानते हैं हम अग्नि, तू पापों का नाश करे।
यज्ञों में बैठा तू महान्, आनन्दज्योति प्रकाश करे॥

महे नो अद्य बोधयोषो राये दिवित्मती। यथा चिन्नो अबोधय सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते ॥३॥

आज ज्ञान की उषा जगाए, आलस्य छोड़ आनन्द पाए।
सुन्दर सच्ची वाणी तेरी, सब के अन्दर ज्ञान जगाए॥

भद्रं नो अपि वातय मनो दक्षमुत क्रतुम्। अथा ते सख्ये अन्धसो वि वो मदे रणा गावो न यवसे विवक्षसे ॥४॥

हे सोम मेरे चतुर मन को, विचार दो, कर्म को कल्याण दो।
गऊएं जैसे पातीं चारे में, हम को आनन्द महान् दो॥

क्रत्वा महाँ अनुष्वधं भीम आ वावृते शवः। श्रिय ऋष्व उपाकयोर्नि शिप्री हरिवान् दधे हस्तयोर्वज्रमायसम् ॥५॥

महान् कर्मी भयप्रदाता, इन्द्र बल का करे प्रकाश।
ज्ञान कर्म की शक्ति धारे, शत्रुओं का करे विनाश ॥

स घा तं वृषणं रथमधि तिष्ठाति गोविदम्। यः पात्रं हारियोजनं पूर्णमिन्द्र चिकेतति योजा न्विन्द्र ते हरी ॥६॥

जो ज्ञान कर्म का योग जानता, पाता पद कल्याण का।
इन्द्रियों को जीत बनता, स्वामी सुखद देह मान का ॥

अग्नि तं मन्ये यो वसुरस्तं यं यन्ति धेनवः। अस्तमर्वन्त आशवोऽस्तं नित्यासो वाजिन इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥७॥

घोड़े गऊएं जैसे रहते, अपने निश्चित स्थान में।
ज्ञानी ध्यानी लीन हैं रहते, तेरे ईश्वर-रूप महान में ॥

न तमंहो न दुरितं देवासो अष्ट मर्त्यम्। सजोषसो यमर्यमा मित्रो नयति वरुणो अति द्विषः ॥८॥

न्याय मैत्री दिव्य शक्तियां, जिनकी बाधा पार करें।
पाप ताप उनको नहीं व्यापे, दुःखसागर से शीघ्र तरें ॥

इति चतुर्थी दशतिः (अष्टमः खण्डः)।

परि प्र धन्वेन्द्राय सोम स्वादुर्मित्राय पूष्णे भगाय ॥१॥

आनन्ददायक सोम मिल जा, इन्द्र को आनन्द दे।
मित्र बनकर पाल; सुख गुणवान् को निश्छन्द दे ॥

पर्यू षु प्र धन्व वाजसातये परि वृत्राणि सक्षणिः। द्विषस्तरध्या ऋणया न ईरसे ॥२॥

ऐश्वर्यदाता इन्द्र सारी, कार्य-बाधा दूर कर।
शत्रुनाशक शक्ति देकर, प्रेरणा से पूर कर ॥

पवस्व सोम महान्त्समुद्रः पिता देवानां विश्वाभि धाम ॥३॥

हे सोम, सारे आनन्दों का, इक तू ही भण्डार है।
सब के हृदयों में हो प्रकाशित, शुभ गुण आधार है ॥

पवस्व सोम महे दक्षायाश्वो न निक्तो वाजी धनाय ॥४॥

परिपुष्ट बल वाला घोड़ा, जैसे धन का दाता है।
वैसे सोम हमारी सारी, महती शक्ति बनाता है॥

इन्दुः पविष्ट चारुर्मदायापामुपस्थे कविर्भगाय ॥५॥

हर्षप्रद और श्रेष्ठ सुख को, उत्तम ज्ञान कर्म पालता।
ज्ञान सहित शुभ कर्म मन में, आनन्द रस को ढालता॥

अनु हि त्वा सुतं सोम मदामसि महे समर्यराज्ये। वाजाँ अभि पवमान प्र गाहसे ॥६॥

आनन्द पाते सोम तेरा, मिलेगा इन्द्रियों का राज।
तू ही घूमता सब लोगों में, सजते सारे सुख के साज॥

क ईं व्यक्ता नरः सनीडा रुद्रस्य मर्या अथा स्वश्वाः ॥७॥

कौन हैं वे शस्त्रधारी, करते जो सब का कल्याण।
आनन्द लोक के वासी हैं, या होता उनका नाश निदान॥

अग्ने तमद्याश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रं हृदि स्पृशम्। ऋध्यामा त ओहैः ॥८॥

हे अग्ने कल्याणमार्ग पर, तू ले जाता अश्व समान।
सुन्दर सुन्दर गीतों से नित, हम करते तेरा आह्वान॥

आविर्मर्य्या आ वाजं वाजिनो अग्मन् देवस्य सवितुः सवम्। स्वर्गाँ अर्वन्तो जयत ॥९॥

प्रकाशरूप सृष्टिकर्त्ता का, ज्ञानी जन पाते आदेश।
उसकी ओर ही बढ़ते जाते, परमानन्द में कर प्रवेश॥

पवस्व सोम द्युम्नी सुधारो महाँ अवीनामनुपूर्व्यः ॥१०॥

ज्ञानकाँति से शोभित सोम, तू रखता चेतन शक्ति ज्ञान।
आ जा मेरे हृदयघट में, तू कहलाता श्रेष्ठ महान॥

इति पञ्चमी दशतिः (नवमः खण्डः)।

इति पञ्चमप्रपाठकस्य प्रथमोऽर्धः॥

अथ द्वितीयोऽर्धः

विश्वतोदावन् विश्वतो न आ भर यं त्वा शविष्ठमीमहे ॥१॥
हे इन्द्र दान बरसाते हो, हम को भी भरपूर कर।
तू बलशाली पथ दिखलाता, हम को न निज से दूर कर ॥

एष ब्रह्मा य ऋत्विय इन्द्रो नाम श्रुतो गृणे ॥२॥
इन्द्र प्रभु की महती शक्ति, अनुशासन से आती है।
इसकी ही नित करूं प्रशंसा, यह ही मुझ को भाती है ॥

ब्रह्माण इन्द्रं महयन्तो अर्कैरवर्धयन्नहये हन्तवा उ ॥३॥
ब्रह्मज्ञानियों ने भक्ति गीतों से, अपनी शक्ति बढ़ाई है।
ज्ञान विनाशक विघ्न हटाकर, सुख सम्पत्ति सजाई है ॥

अनवस्ते रथमश्वाय तक्षुस्त्वष्टा वज्रं पुरुहूत द्युमन्तम् ॥४॥
साधकों ने साधना को, लक्ष्य सिद्धि साधन बनाया।
विघ्ननाशक चमचमाते, शस्त्रों को फिर रचाया ॥

शं पदं मघं रयीषिणे न काममव्रतो हिनोति न स्पृश-द्रयिम् ॥५॥
दान को शुभ भावना से, धन की करे जो कामना।
आनन्द पाता है वही जन, कर्महीन जो नहीं बना ॥

सदा गावः शुचयो विश्वधायसः सदा देवा अरेपसः ॥६॥
सब का पालन करने वाली, गऊएं पावन होती हैं।
दिव्य शक्तियों से वे सब की प्यारी, पाप पंक को धोती हैं ॥

आ याहि वनसा सह गावः सचन्त वर्तनिं यदूधभिः ॥७॥
ज्ञान प्रभा के उदयकाल, तू सारा तेज संभाले जा।
बनी पुष्ट ये मेरी इन्द्रियाँ, इनको मार्ग दिखा ले आ ॥

उप प्रक्षे मधुमति क्षियन्तः पुष्येम रयिं धीमहे त इन्द्र ॥८॥
हे इन्द्र परमानन्द भवन में, ऐश्वर्य वाला दान करें।
शक्ति लाभ को करते करते, निशदिन तेरा ध्यान धरें ॥

अर्चन्त्यर्कं मरुतः स्वर्का आ स्तोभति श्रुतो युवा स इन्द्रः ॥९॥
सदा प्रशंसक चतुर मानव, उसका पूजन करते हैं।
वही विख्यात बलवान् इन्द्र ही, उसका रक्षण करते हैं ॥

प्र व इन्द्राय वृत्रहन्तमाय विप्राय गाथं गायत यं जुजोषते ॥१०॥
सब से उत्तम विघ्नविनाशक, इन्द्र प्रभु का गान करें।
ज्ञानप्रभा से चमचम करता, हो प्रसन्न कल्याण करे ॥

इति षष्ठी दशतिः (दशमः खण्डः)।

अचेत्यग्निश्चिकितिर्हव्यवाड् न सुमद्रथः ॥१॥
जगाने वाला भौतिक अग्नि, मन में जब से जाग चुका।
ज्ञान का धारक संकल्प आया, अज्ञान कभी का भाग चुका ॥

अग्ने त्वं नो अन्तम उत त्राता शिवो भुवो वरूथ्यः ॥२॥
हे अग्ने तू सदा पास है, रक्षा करनेहारा है।
तू ही वरण के लायक है, करता कल्याण हमारा है ॥

भगो न चित्रो अग्निर्महोनां दधाति रत्नम् ॥३॥
बड़ी दिव्य शक्तियों में, जैसे रवि प्रकाश भरे।
उपभोग की शक्तिदाता इन्द्र, सुख सम्पत्ति विकास करे ॥

विश्वस्य प्र स्तोभ पुरो वा सन् यदि वेह नूनम् ॥४॥
हे इन्द्र तू विघ्नों का नाशक, तू ही मेरे साथ था।
अब भी मेरा तू ही सहारा, पहले भी मेरा नाथ था ॥

उषा अप स्वसुष्टमः सं वर्तयति वर्तनिं सुजातता ॥५॥
ज्ञान उदय के काल में, उषा अज्ञान नसाती है।
अपना उत्तम बल देकर, साधक को आगे लाती है ॥

इमा नु कं भुवना सीषधेमेन्द्रश्च विश्वे च देवाः ॥६॥
इन्द्र शक्ति के हम साथी हैं, दिव्य गुणों को भी पाते।
अपने शक्ति साधन लेकर, दिव्य लोकों में जाते ॥

वि स्रुतयो यथा पथा इन्द्र त्वद्यन्तु रातयः ॥७॥
नदियां जैसे मार्ग पाकर, जोर जोर से गमन करें।
तेरी दानशीलता वैसे, सभी दिशा में रमन करे ॥

अया वाजं देवहितं सनेम मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥८॥

सभी अलौकिक गुण वाले, सुख संपत्ति का पाएं अधिकार।
वीर मिलें सौ सौ वर्षों तक, जीवन में हो आनन्द प्रचार॥

ऊर्जा मित्रो वरुणः पिन्वतेडाः पीवरीमिषं कृणुही न इन्द्रः ॥९॥

मन का कर्म से मेल हो, हम यत्नपूर्वक काम करें।
हे इन्द्र हमें वह प्रतिभा दो, अन्तरज्ञान का धाम वरें॥

इन्द्रो विश्वस्य राजति ॥१०॥

हे राजा हे सब के स्वामी, तू ही करता हम पर शासन।
नियम नियन्ता तू इस जग का, करता पालन और रक्षण॥

इति सप्तमो दशतिः (एकादशः खण्डः)।

त्रिकद्रुकेषु महिषो यवाशिरं तुविशुष्मस्तृम्पत् सोममपिबद् विष्णुना सुतं यथावशम्। स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुं सैनं सश्चद्देवो देवं सत्य इन्दुः सत्यमिन्द्रम् ॥१॥

जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति में, जो आनन्द जीव यह पाता है।
यज्ञ कर्म के करने से ही, उसको परमानन्द बनाता है॥
यह आह्लादक इन्द्र शक्ति, जीव जभी है पा लेता।
जग में रह वह दिव्य आत्मा, ऊंचे काम बना लेता॥

अयं सहस्रमानवो दृशः कवीनां मतिर्ज्योतिर्विधर्म। ब्रध्नः समीचीरुषसः समैरयदरेपसः सचेतसः स्वसरे मन्युमन्तश्चिता गोः ॥२॥

यह प्रेरक रवि दूर-दूर तक, विविध दृष्टि का दान करे।
जो है नवदर्शन का साधक, परम ज्योति आधान करे॥
जीवन दिन में घुसकर सब को, शुद्ध चेतना है दे देता।
तेजस्वी इन्द्रियों की ज्ञान-प्रदाता, जनशक्ति का है यह नेता॥

एन्द्र याह्युप नः परावतो नायमच्छा विदथानीव सत्पतिरस्ता राजेव सत्पतिः। हवामहे त्वा प्रयस्वन्तः सुतेष्वा पुत्रासो न पितरं वाजसातये मंहिष्ठं वाजसातये ॥३॥

हे इन्द्र तू आ पास हमारे, दिव्य शक्तियां दिखाता जा।
परमानन्द के साधक मांगें, पिता बन ज्ञान सिखाता जा॥

तमिन्द्रं जोहवीमि मघवानमुग्रं सत्रा दधानमप्रतिष्कुतं श्रवाꣳसि भूरि। मंहिष्ठो गीर्भिरा च यज्ञियो ववर्त राये नो विश्वा सुपथा कृणोतु वज्री ॥४॥

मैं याद करता उसी इन्द्र को, जो ईश्वर तेजधारी है।
सज्जनों को दे त्राण अजेता, उसकी कीर्ति भारी है॥
यज्ञ करें हम उसी को ध्यावें, उसका करते आवाहन।
हमारे पथ को सुगम बना के, दे हम को दान योग्य धन॥

अस्तु श्रौषट् पुरो अग्निं धिया दध आ नु त्यच्छर्द्धो दिव्यं वृणीमह इन्द्रवायू वृणीमहे। यद्ध क्राणा विवस्वते नाभा सन्दाय नव्यसे। अध प्र नूनमुप यन्ति धीतयो देवाꣳ अच्छ न धीतयः ॥५॥

ध्यान बल से संकल्प करके, शक्तियां बुद्धि की वरण करें।
कर्म हमारे इस से चमकें, ज्ञान मार्ग पर गमन करें॥
हे अग्ने हम तुम को ध्यावें, तुझ से नाता जोड़ेंगे।
कर्म हमारे ज्ञान भरे हों, तेरा प्रकाश न छोड़ेंगे॥

प्र वो महे मतयो यन्तु विष्णवे मरुत्वते गिरिजा एवयामरुत्। प्र शर्धाय प्र यज्यवे सुखादये तवसे भन्ददिष्टये धुनिव्रताय शवसे ॥६॥

हमारी शक्तियां जो गीत गातीं, प्रेरतीं जो प्राण को।
दिव्य गुण भण्डार हो, करें विघ्नरहित कल्याण को॥

अया रुचा हरिण्या पुनानो विश्वा द्वेषाꣳसि तरति सयुग्वभिः सूरो न सयुग्वभिः। धारा पृष्ठस्य रोचते पुनानो अरुषो हरिः। विश्वा यद्रूपा परियास्यृक्वभिः सप्तास्येभिर्ऋक्वभिः ॥७॥

साथियों के साथ योद्धा, समर को है जीत लेता।
इन्द्र दिव्यानन्द पाकर, दुर्भावनाएं त्याग देता॥
इन्द्रियों में व्याप्त होकर, शक्तियां विस्तार करता।
जीवन पथ पर विविध स्तर पर, विघ्न बाधा पार करता॥

अभि त्यं देवं सवितारमोण्योः कविक्रतुमर्चामि सत्यसवꣳ रत्नधामभि प्रियं मतिम्। ऊर्ध्वा यस्यामतिर्भा अदिद्युतत् सवीमनि हिरण्यपाणिरमिमीत सुक्रतुः कृपा स्वः ॥८॥

दिव्य प्रेरक शक्ति वाले, ज्ञानरूप का करते ध्यान।
दर्शन, कर्म का वही विधाता, सारे ही रत्नों की खान॥

उन्नतिपथ को जगमग करती, उसकी ज्ञानप्रभा द्युतिमान ।
तेज भरी जो ज्ञान रश्मियां, परमानन्द का करें निर्माण ।।

अग्निं होतारं मन्ये दास्वन्तं वसोः सूनुं सहसो जातवेदसं विप्रं न जातवेदसम् । य ऊर्ध्वया स्वध्वरो देवो देवाच्या कृपा । घृतस्य विभ्राष्टिमनु शुक्रशोचिष आजुह्वानस्य सर्पिषः ।।९।।

हवन करे जो वह भी अग्नि, सब से ऊंचा मानिए ।
दिव्य कर्म का करने वाला, ज्ञानी वैसा जानिए ।।
तभी जागता है वह अग्नि, जब हम सब कुछ वारते ।
हम को वह है राह दिखाता, कभी नहीं हम हारते ।।

तव त्यन्नर्यं नृतोऽप इन्द्र प्रथमं पूर्व्यं दिवि प्रवाच्यं कृतम् । यो देवस्य शवसा प्रारिणा असु रिणन्नपः । भुवो विश्वमभ्यदेवमोजसा विदेदूर्जं शतक्रतुर्विदेदिषम् ।।१०।।

दिव्य बल को प्रेरता तू, कर्म के हित प्राण को ।
दिव्य बल से कर्म तेरा, विख्यात जन कल्याण को ।।
दुष्ट भावों को हटा कर, शक्ति का विस्तार कर ।
कर्म के हित शक्ति देकर, भोग्य पर अधिकार कर ।।

इति अष्टमी दशतिः (द्वादशः खण्डः) ।

इति चतुर्थोऽध्यायः इत्यैन्द्रं काण्डं पर्व वा समाप्तम् ।।

अथ पावमानकाण्डम् । अथ पञ्चमोऽध्यायः ।।

उच्चा ते जातमन्धसो दिवि सद्भूम्या ददे । उग्रं शर्म महि श्रवः ।।१।।

हे सोम तू ही है अन्न रूप, मैं पाता तुझ से ज्ञान संगीत ।
प्रकाश लोक में तू रहता है, कल्याण करे तू सदा अभीत ।।

स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया । इन्द्राय पातवे सुतः ।।२।।

हे सोम तू रस से भरी, आनन्द की धारा बहा ।
इन्द्र के ही पान को, सब ज्ञानियों ने तुझे दुहा ।।

वृषा पवस्व धारया मरुत्वते च मत्सरः। विश्वा दधान ओजसा ॥३॥

ज्ञानी जनों के हर्ष के हित, सोम तू बहता रहे।
बल वीर्य से तू पुष्ट कर, जन कष्ट सब सहता रहे॥

यस्ते मदो वरेण्यस्तेना पवस्वान्धसा। देवावीरघशंसहा ॥४॥
हे सोम तू आनन्ददाता, अन्न का ही रूप है।
पाप भावों का विनाशक, शुभ गुणों का भूप है॥

तिस्रो वाच उदीरते गावो मिमन्ति धेनवः। हरिरेति कनिक्रदत् ॥५॥

ओ३म् की ये तीन मात्रा, ईश का आह्वान करतीं।
ज्यों वत्स को गाय बुलाती, सोम दे कल्याण करती॥

इन्द्रायेन्दो मरुत्वते पवस्व मधुमत्तमः। अर्कस्य योनिमासदम् ॥६॥

हे आह्लादक ज्ञानी जन हित, परम मधुर रस धार बहा।
परम पूज्य मिल जाए इस को, इस के लिए तू प्यार बढ़ा॥

असाव्यंशुर्मदायाप्सु दक्षो गिरिष्ठाः। श्येनो न योनिमासदत् ॥७॥

वाणी में जो रहता है, कर्मशक्ति का दान किया।
प्रकाश रूप सुन्दर चमकीले, सोम ने मन में स्थान लिया॥

पवस्व दक्षसाधनो देवेभ्यः पीतये हरे। मरुद्भ्यो वायवे मदः ॥८॥

हे मनोहर सोम सारे, काम तुम्हीं से होते हैं।
दिव्य शक्ति युत इन्द्र प्रभु ही, सब सुख देते हैं॥

परि स्वानो गिरिष्ठाः पवित्रे सोमो अक्षरत्। मदेषु सर्वधा असि ॥९॥

पहले वाणी में आता है, फिर मन भीतर स्थान करे।
वह सोम परमानन्द देकर, सब का ही कल्याण करे॥

परि प्रिया दिवः कविर्वयांऽसि नप्त्योर्हितः। स्वानैर्याति कविक्रतुः ॥१०॥

यह सोम बंधा है, पृथ्वी द्यौ से, प्यारी चालें चलता है।
प्रकाश लोक में गर्जन करता, कर्मशक्ति में ढलता है॥

इति नवमी दशतिः (प्रथमः खण्डः)

प्र सोमासो मदच्युतः श्रवसे नो मघोनाम्। सुता विदथे अक्रमुः ॥१॥

ज्ञान-यज्ञ में आनन्द बहाता, सब को सुख देने हारा।
ऐश्वर्यों के हम स्वामी हैं, ज्ञान धनों से भरे भण्डारा॥

प्र सोमासो विपश्चितोऽपो नयन्त ऊर्मयः। वनानि महिषा इव ॥२॥

बड़े बड़े बैलों पर लद कर, भोग्य पदार्थ आते हैं।
ज्ञान भरे आनन्द के साधक, कर्मों को पहुंचाते हैं॥

पवस्वेन्दो वृषा सुतः कृधी नो यशसो जने। विश्वा अप द्विषो जहि ॥३॥

बहो बहो आनन्द धाराओ, सब को ही यश दान करो।
तू पूरा है पूर कामना, द्वेष भाव अभिमान हरो॥

वृषा ह्यसि भानुना द्युमन्तं त्वा हवामहे। पवमान स्वर्दृशम् ॥४॥

हे पावक हे सोम हमारे, मन में तुम आह्लाद भरो।
तुम सुखदाता सारे जग के, दे ज्ञान-ज्योति अवसाद हरो॥

इन्दुः पविष्ट चेतनः प्रियः कवीनां मतिः। सृजदश्वं रथीरिव ॥५॥

क्रांतदर्शियों की बुद्धि सब को, शुभ मार्ग दिखाती है।
आनन्द बढ़ाती प्रतिभा हम को, घोड़े सम ले जाती है॥

असृक्षत प्र वाजिनो गव्या सोमासो अश्वया। शुक्रासो वीरयाशवः ॥६॥

शुद्ध परमानन्द शक्ति, वीर रस की खान है।
शक्ति देता ज्ञान भी देता, विजयशील महान है॥

पवस्व देव आयुषगिन्द्रं गच्छतु ते मदः। वायुमा रोह धर्मणा ॥७॥

हे दिव्य रस तू बहता जा, तेरा इन्द्र को आह्लाद है।
जीवन प्राण शक्ति के स्वामी, तेरी शक्ति जयनाद है॥

पवमानो अजीजनद् दिवश्चित्रं न तन्यतुम्। ज्योतिर्वैश्वानरं बृहत् ॥८॥

दिव्य लोक से बह कर आता,
वह विचित्र भव्य पवमान।
बिजली सा वह चमचम करता,
उपजाए सब में ज्योति महान्॥

परि स्वानास इन्दवो मदाय बर्हणा गिरा। मधो अर्षन्ति धारया ॥९॥

वेदगिरा से जो रस बनता, देता वह आनन्द महान।
मधु धारा संग लिये, उस को तू उत्पादक जान॥

परि प्रासिष्यदत् कविः सिन्धोरूर्मावधिश्रितः। कारुं बिभ्रत् पुरुस्पृहम् ॥१०॥

क्रान्त दर्शक सोमरस, साधक मन में बहता।
सुन्दर शिल्पी के गुण लेकर, सभी ओर है रहता॥

इति दशमी दशतिः (द्वितीयः खण्डः)।

इति द्वितीयोऽर्धः।

इति पञ्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

अथ षष्ठः प्रपाठकः

(प्रथमोऽर्धः)

उपो षु जातमप्तुरं गोभिर्भङ्गं परिष्कृतम्। इन्दुं देवा अयासिषुः ॥१॥

गीत गाए जब स्तुति के, आनन्द रस को पा लिया।
दिव्य इन्द्रियों ने इसे पी, कर्ममय जीवन जिया॥

पुनानो अक्रमीदभि विश्वा मृधो विचर्षणिः। शुम्भन्ति विप्रं धीतिभिः ॥२॥

कई रूपों में सोम बहता, विघ्न बाधा करके पार।
मेधावी का स्तुतियों से, होता अभिनन्दन हर बार॥

आविशन् कलशं सुतो विश्वा अर्षन्नभि श्रियः। इन्दुरिन्द्राय धीयते ॥३॥

मन मन्दिर में जब यह आता, सोम रस भरकर आनन्द।
सुख सम्पत्ति चहुं ओर से, इन्द्र प्रभु पाता स्वच्छन्द॥

असर्जि रथ्यो यथा पवित्रे चम्वोः सुतः। कार्ष्मन् वाजी न्यक्रमीत् ॥४॥

रथ में जुता बलवान् घोड़ा, रणभूमि में बल दिखाए।
प्राणापान से सधा सोम यह, जीवन रण में साहस लाए॥

प्र यद्गावो न भूर्णयस्त्वेषा अयासो अक्रमुः। घ्नन्तः कृष्णामप त्वचम् ॥५॥

भ्रमणशील यह गतिशील ये, किरणों के संग ज्योति लाए।
अंधकार का पर्दा फाड़ा, अद्भुत ही पराक्रम दिखलाए॥

अपघ्नन् पवसे मृधः क्रतुवित् सोम मत्सरः। नुदस्वादेवयुं जनम् ॥६॥

मेरे हर कामों में भरा, हर्ष पारावार है तू।
पाप पापी नष्ट करके, बहाये शुद्धता की धार तू॥

अया पवस्व धारया यया सूर्यमरोचयः। हिन्वानो मानुषीरपः ॥७॥

हे सोम जिस धारा से तू ने, रविमण्डल को दिया प्रकाश।
उससे प्रेरित कर मानव को, पावनता का करो विकास ॥

स पवस्व य आविथेन्द्रं वृत्राय हन्तवे। वव्रिवांसं महीरपः ॥८॥
हे सोम सहायक सदा इन्द्र के, अमिट शक्ति के भण्डार।
बाधाएं सब नष्ट भ्रष्ट कर, बहा दे कर्मशक्ति रसधार ॥

अया वीती परि स्रव यस्त इन्द्रो मदेष्वा। अवाहन्नवतीर्नव ॥९॥

आनन्ददाता तेरे रसों से, नौ नौ वर्ष हुए हैं पार।
उसी आनन्द की लहरें लेकर, भर दे जीवन का हर तार ॥

परि द्युक्षं सनद्रयिं भरद्वाजं नो अन्धसा। स्वानो अर्ष पवित्र आ ॥१०॥

हे सोम मेरे मन भवन में, जीवन शक्ति भरने आ।
शोर मचाता सुख सम्पत्ति से, दान भावना भरने आ ॥

इति प्रथमा दशतिः (तृतीयः खण्डः)।

अचिक्रदद् वृषा हरिर्महान् मित्रो न दर्शतः। सं सूर्येण दिद्युते ॥१॥

मित्र के सम प्यारा सुन्दर, सोम सुख बरसाता है।
यही गरजता यही चमकता, कर्म शक्ति का दाता है ॥

आ ते दक्षं मयोभुवं वह्निमद्या वृणीमहे। पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥२॥

सभी चाहते जिस शक्ति को, जो सभी सुखों का साधन है।
कल्याण बनाती सब को भाती, उसको मांग रहे जन हैं ॥

अध्वर्यो अद्रिभिः सुतं सोमं पवित्र आ नय। पुनाहीन्द्राय पातवे ॥३॥

हे यज्ञ कर्त्ता ज्ञान कर्मों से, बहती आ रही आनन्द धारा।
शुद्ध कर उसको हृदय से, इन्द्र उसका पीने हारा ॥

तरत् स मन्दी धावति धारा सुतस्यान्धसः। तरत् स मन्दी धावति ॥४॥

प्राणदाता सोमरस की, धार पा मदमस्त होता।
सानन्द उन्नति पथ में जाता, भवसागर पार होता॥

आ पवस्व सहस्रिणं रयिं सोम सुवीर्य्यम्। अस्मे श्रवांसि धारय ॥५॥

परमानन्द को देने वाले, शक्ति भरा ऐश्वर्य बहा।
दिव्य ज्ञान की ज्योति देकर, हम को तू बलवान् बना॥

अनु प्रत्नास आयवः पदं नवीयो अक्रमुः। रुचे जनयन्त सूर्यम् ॥६॥
नया प्रवेश जीवन में पाकर सोमरस जो सिद्ध करते।
प्रेरणा पाकर उसी की, नया स्थान जीवन में धरते॥

अर्षा सोम द्युमत्तमोऽभि द्रोणानि रोरुवत्। सीदन् योनौ वनेष्वा ॥७॥

हे प्रकाशक सोम, मेरी इन्द्रियों में आ।
गर्जता गाता हुआ, सानन्द भक्तों को बना॥

वृषा सोम द्युमाँ असि वृषा देव वृषव्रतः। वृषा धर्माणि दध्रिषे ॥८॥
हे परमानन्द रस तू, ज्योतिवाली शक्ति धारण करता।
हे दिव्य मेघ तू, धर्म कर्म से दुःख को हरता॥

इषे पवस्व धारया मृज्यमानो मनीषिभिः। इन्दो रुचाभि गा इहि ॥९॥

हे आह्लादक तुझे विज्ञ जन, ज्ञान से हैं शुद्ध करते।
होकर प्रकट अपनी चमक से, अंगों में आलोक भरते॥

मन्द्रया सोम धारया वृषा पवस्व देवयुः। अव्या वारेभिरस्मयुः ॥१०॥
हे आनन्दरस तू धर्ममेघ से, दिव्य गुणों को धारण करता।
चेतना के फाड़ पर्दे, धाराओं में वर्षण करता॥

अया सोम सुकृत्यया महान्त्सन्नभ्यवर्धथाः । मन्दान इद् वृषायसे ॥११॥

हे सोम शुभ कर्मों से ही, तू आगे है बढ़ा।
सानन्द तू बहता हुआ, ज्ञान की वर्षा करा॥

अयं विचर्षणिर्हितः पवमानः स चेतति । हिन्वान आप्यं बृहत् ॥१२॥

दूरदर्शक सोम देता, मित्रता का संदेश।
पावक बन्धु सोम से, पाते विश्वप्रेम संदेश॥

प्र न इन्दो महे तु न ऊर्मिं न बिभ्रदर्षसि । अभि देवाँ अयास्यः ॥१३॥

हे आनन्ददाता संपत्ति लेकर, तू लहराता आ रहा।
दिव्य गुण पाने को, भक्त गान तेरा गा रहा॥

अपघ्नन् पवते मृधोऽप सोमो अराव्णः । गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम् ॥१४॥

सुंदर सजीले शुद्ध घर, सोम जन प्रवेश पाता।
नाशकारी कृपण वृत्ति, अपनी शक्ति से नशाता॥

इति द्वितीया दशतिः (चतुर्थः खण्डः)।

पुनानः सोम धारयापो वसानो अर्षसि ।
आ रत्नधा योनिमृतस्य सीदस्युत्सो देवो हिरण्ययः ॥१॥
सोम तू धारा रूप में आकर, मेरे कर्मों में वास करे।
ऋत से तू चमकीला होकर, रत्नों का प्रकाश करे॥

परीतो षिञ्चता सुतं सोमो य उत्तमं हविः ।
दधन्वान् यो नर्यो अप्स्वाऽन्तरा सुषाव सोममद्रिभिः ॥२॥
सींच दो उस सोमरस को, खींच साधक जो लाया।
परहितकारी कामों से, जो है अंग अंग समाया॥

आ सोम स्वानो अद्रिभिस्तिरो वाराण्यव्यया ।
जनो न पुरि चम्वोर्विशद्धरिः सदो वनेषु दध्रिषे ॥३॥
वीर जन सम आनन्दरस, इन्द्रियों में आता है ।
भक्त के प्रकाशित मन में, अपना स्थान बनाता है ॥

प्र सोम देववीतये सिन्धुर्न पिप्ये अर्णसा ।
अंशोः पयसा मदिरो न जागृविरच्छा कोशं मधुश्चुतम् ॥४॥
दिव्यता के दान को तू, सागर बन हमें बढ़ाता है ।
साधक को दे ज्ञानचक्षु, मधु का कोष सजाता है ॥

सोम उ ष्वाणः सोतृभिरधि ष्णुभिरवीनाम् ।
अश्वयेव हरिता याति धारया मन्द्रया याति धारया ॥५॥
हे सोम तुझको साधक, ज्ञानशक्ति से लाते हैं ।
जीवन में गतिशील बनें, आनन्द की धारा पाते हैं ॥

तवाहं सोम रारण सख्य इन्दो दिवेदिवे ।
पुरूणि बभ्रो नि चरन्ति मामव परिधीँ रति ताँ इहि ॥६॥
हे इन्द्र तेरी मित्रता से, सानन्द मैं रमता रहूँ ।
देह सोमा पार करके, ऊँचाई में जमता रहूं ॥

मृज्यमानः सुहस्त्या समुद्रे वाचमिन्वसि ।
रयिं पिशङ्गं बहुलं पुरुस्पृहं पवमानाभ्यर्षसि ॥७॥
चतुर हाल से शुद्ध किया तू, मन सागर में गुंजार करे ।
हे पवमान तू लोकप्रिय, सुंदर संपत्ति प्रचार करे ॥

अभि सोमास आयवः पवन्ते मद्यं मदम् ।
समुद्रस्याधि विष्टपे मनीषिणो मत्सरासो मदच्युतः ॥८॥
मनीषाशाली सौम्यजन, आनन्द को बरषा रहे ।
आनन्द की ऊँची तरंगें, सब ओर हैं बहा रहे ॥

पुनानः सोम जागृविरव्या वारैः परि प्रियः ।
त्वं विप्रो अभवोऽङ्गिरस्तम मध्वा यज्ञं मिमिक्ष णः ॥९॥
चेतन भावों से छन कर जो परमानन्द रस आता है ।
ज्ञानी उसको सदा तू रखता, इसीलिए तू भाता है ॥

इन्द्राय पवते मदः सोमो मरुत्वते सुतः।
सहस्रधारो अत्यव्यमर्षति तमीं मृजन्त्यायवः ॥१०॥
प्राणशक्ति सम्पन्न इन्द्र को, सोम है आनन्द देता।
भक्तजन उसको बनाते, चिति पार कर शतधार लेता॥

पवस्व वाजसातमोऽभिविश्वानि वार्या।
त्वं समुद्रः प्रथमे विधर्मन् देवेभ्यः सोम मत्सरः ॥११॥
हे सोम सब बाधाएं हर, ज्ञान बल से आता जा।
आनन्द का तू स्रोत पावन, दिव्य गुण बहाता जा॥

पवमाना असृक्षत पवित्रमति धारया।
मरुत्वन्तो मत्सरा इन्द्रिया हया मेधामभि प्रयांसि च ॥१२॥
प्राणशक्ति पा हर्ष से, इन्द्रियों ने रस धार बहाई।
मुक्त सोम आनन्द लहर से, मेधा बुद्धि उन तक आई॥

इति तृतीया दशतिः (पञ्चमः खण्डः)।

प्र तु द्रव परि कोशं नि षीद नृभिः पुनानो अभि वाजमर्ष।
अश्वं न त्वा वाजिनं मर्जयन्तोऽच्छा बर्ही रशनाभिर्नयन्ति ॥१॥
हे परमानन्द तू आगे बढ़कर मन में आता जा।
बलशाली अश्वों सम, भक्तों से शुभ कर्म कराता जा॥

प्र काव्यमुशनेव ब्रुवाणो देवो देवानां जनिमा विवक्ति।
महिव्रतः शुचिबन्धुः पावकः पदा वराहो अभ्येति रेभन् ॥२॥
परमानन्दी क्रांतिकारी, सोम प्रतिभा दान करे।
दिव्य गुणों की शक्ति देता, प्रिय धर्ममेघ बन गान करे॥

तिस्रो वाच ईरयति प्र वह्निर्ऋतस्य धीतिं ब्रह्मणो मनीषाम्।
गावो यन्ति गोपतिं पृच्छमानाः सोमं यन्ति मतयो वावशानाः ॥३॥
सोम हमारी तीन वाणियां, आगे सदा चलाता है।
सत्य दिखाता, सत्य सुनाता, सच्चे काम कराता है॥
गौएं जैसे अपना स्वामी, खोज-खोज कर पाती हैं।
शुद्ध बुद्धियां सुंदर बनकर, परमानंद खोजने जाती हैं॥

अस्य प्रेषा हेमना पूयमानो देवो देवेभिः समपृक्त रसम् ।
सुतः पवित्रं पर्येति रेभन् मितेव सद्म पशुमन्ति होता ॥४॥
दिव्य सोम ने इन्द्रिय रस से, मेल कराया ।
परमानन्द गर्जता आया, मन मंदिर को शुद्ध बनाया ॥

सोमः पवते जनिता मतीनां जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः ।
जनिताग्नेर्जनिता सूर्यस्य जनितेन्द्रस्य जनितोत विष्णोः ॥५॥
अग्नि, सूर्य, इन्द्र और विष्णु, शक्ति रचने हारा है ।
धारणा शक्ति की उत्पादक, बहती सोम की धारा है ॥

अभि त्रिपृष्ठं वृषणं वयोधामङ्गोषिणमवावशन्त वाणीः ।
वना वसानो वरुणो न सिन्धुर्वि रत्नधा दयते वार्याणि ॥६॥
त्रिलोक के स्वामी वर्षक सोम को सभी वाणियां मांग रहीं ।
साधक की प्यारी विघ्ननाशक रत्नों की बन खान रहीं ॥

अक्रान्त्समुद्रः प्रथमे विधर्मञ्जनयन् प्रजा भुवनस्य गोपाः ।
वृषा पवित्रे अधि सानो अव्ये बृहत् सोमो वावृधे स्वानो अद्रिः ॥७॥
इस उमड़े रस ने सभी जनों को प्रजा रक्षक बनाया है ।
उच्च स्थान से आया सोम यह बादल बन बरसाया है ॥

कनिक्रन्ति हरिरा सृज्यमानः सीदन् वनस्य जठरे पुनानः ।
नृभिर्यतः कृणुते निर्णिजं गामतो मतिं जनयत स्वधाभिः ॥८॥
साधक मन में बसा सोम, सब अंगों को शुद्ध करता ।
धारणा शक्ति से सिद्ध होकर, सामने आ ही शब्द करता ॥

एष स्य ते मधुमाँ इन्द्र सोमो वृषा वृष्णः परि पवित्रे अक्षाः ।
सहस्रदाः शतदा भूरिदावा शश्वत्तमं बर्हिरा वाज्यस्थात् ॥९॥
हे इन्द्र मेरे मन मंदिर में, तेरा मधुर रस आया है ।
अनगिन दान का देने वाला, बल को मैंने पाया है ॥

पवस्व सोम मधुमाँ ऋतावापो वसानो अधि सानो अव्ये ।
अव द्रोणानि घृतवन्ति रोह मदिन्तमो मत्सरः इन्द्रपानः ॥१०॥
ज्ञानकर्म की वृत्तियों वाला, परम सत्य का दाता है ।
ज्ञान चमक से आ अंगों में, इन्द्र को रस पिलाता है ॥

इति चतुर्थी दशतिः (षष्ठः खण्डः) ।

प्र सेनानीः शूरो अग्रे रथानां गव्यन्नेति हर्षते अस्य सेना।
भद्रान् कृण्वन्निन्द्रहवान्त्सखिभ्य आ सोमो वस्त्रा रभसानि दत्ते ॥१॥
दिग् विजय का ग्राहक नेता, आगे आगे चलता है।
ज्ञान प्रकाश से तम के पर्दे को, सोम शक्ति से हटाता है॥

प्र ते धारा मधुमतीरसृग्रन् वारं यत्पूतो अत्येष्यव्यम्।
पवमान पवसे धाम गोनां जनयन्त्सूर्यमपिन्वो अर्कैः॥२॥
शुद्ध हुआ, निष्पन्न हुआ, जाता है तू उस पार।
तेरी धाराएँ ज्ञान कर्म का, देती हैं सब को अधिकार॥

प्र गायताभ्यर्चाम देवान्त्सोमं हिनोत महते धनाय।
स्वादुः पवतामति वारमव्यमा सीदतु कलशं देव इन्दुः॥३॥
गीत गाओ सोम रस का, सम्पत्ति हित पूजन करें।
मधुर चेतना पार कर जो, मन भवन सिंचन करें॥

प्र हिन्वानो जनिता रोदस्यो रथो न वाजं सनिषन्नयासीत्।
इन्द्रं गच्छन्नायुधा संशिशानो विश्वा वसु हस्तयोरादधानः॥४॥
धरा आकाश को नया बनाके, उस सम्पत्ति का दाता।
वीर बना दोनों हाथों से, धन धान्य बांटने आता॥

तक्षद्यदी मनसो वेनतो वाग् ज्येष्ठस्य धर्मं द्युक्षोरनीके।
आदीमायन् वरमा वावशाना जुष्टं पतिं कलशे गाव इन्दुम्॥५॥
विघ्नकाल में सभी इन्द्रियां, उसी प्रभु को बुलातीं।
प्यारी पत्नी सुख पाने, अपने पति ढिग जाती॥

साकमुक्षो मर्जयन्त स्वसारो दश धीरस्य धीतयो धनुत्रीः।
हरिः पर्यद्रवज्जाः सूर्यस्य द्रोणं ननक्षे अत्यो न वाजी॥६॥
परमानन्द ने धीर पुरुष की, इच्छाओं को घेर लिया।
तेज अश्व सम दौड़-दौड़, मन में प्रवेश किया॥

अधि यदस्मिन् वाजिनीव शुभः स्पर्धन्ते धियः सूरे न विशः।
अपो वृणानः पवते कवीयान् व्रजं न पशुवर्धनाय मन्म॥७॥
शूरवीर राजा को जैसे, जनता चाहे पाना।
वेगवान और बलशाली, सब चाहें सोम बनाना॥

इन्दुर्वाजी पवते गोन्योघा इन्द्रे सोमः सह इन्वन्मदाय ।
हन्ति रक्षो बाधते पर्यराति वरिवस्कृण्वन् वृजनस्य राजा ॥८॥
इन्द्र को बलशाली बना, सोम ज्ञानधारा बहाता ।
शक्ति हर्ष बढ़ा कर सबका, कृपणता का नाश कराता ॥

अया पवा पवस्वैना वसूनि माँश्चत्व इन्द्रो सरसि प्र धन्व ।
ब्रध्नश्चिद्यस्य वातो न जूतिं पुरुमेधाश्चित्तकवे नरं धात् ॥९॥
हे आह्लादक हृदय सर को, पावनता से भर दे ।
संयमी जन को अपनी, तीव्र शक्ति वाला कर दे ॥

महत् तत् सोमो महिषश्चकारापां यद्गर्भोऽवृणीत देवान् ।
अदधादिन्द्रे पवमान ओजोऽजनयत् सूर्ये ज्योतिरिन्दुः ॥१०॥
सोम मेघ ने दिव्य गुणों को अपने में है धार लिया ।
बलशाली कर इन्द्र प्रभु को, ज्योति का आकार दिया ॥

असर्जि वक्वा रथ्ये यथाजौ धिया मनोता प्रथमा मनीषा ।
दश स्वसारो अधि सानो अव्ये मृजन्ति वह्निं सदनेष्वच्छ ॥११॥
रथवाली सेना को सेनापति सम, जीवन युद्ध का स्वामी है ।
विचार शक्ति का धारण कर्त्ता, गति शक्ति का नामी है ॥

अपामिवेदूर्मयस्तर्तुराणाः प्र मनीषा ईरते सोममच्छ ।
नमस्यन्तीरुप च यन्ति सं चाच विशन्त्युशतीरुशन्तम् ॥१२॥
जललहरी सम ज्ञान कर्म, ध्यान से सोम बुलाती है ।
सद् नारी सम यह धाराएं उनमें घुसती जाती हैं ॥

इति पञ्चमी दशतिः (सप्तमः खण्डः) ।

इति प्रथमोऽर्धः षष्ठप्रपाठकस्य ॥

अथ द्वितीयोऽर्धः

पुरोजिती वो अन्धसः सुताय मादयित्नवे ।
अप श्वानं श्नथिष्टन सखायो दीर्घजिह्व्यम् ॥१॥
आओ मेरे मित्र विचारो, जीवन दायक सोम वरें ।
उस का आनन्द बचाने को, लालच कुत्ते का नाश करें ॥

अयं पूषा रयिर्भगः सोमः पुनानो अर्षति ।
पतिर्विश्वस्य भूमनो व्यख्यद्रोदसी उभे ॥२॥
बलदायक यह दानयोग्य, और भोग्य सोम चला आता ।
ऐश्वर्य वाले पृथिवी द्यौ का यही नया जन्म दाता ॥

सुतासो मधुमत्तमाः सोमा इन्द्राय मन्दिनः ।
पवित्रवन्तो अक्षरन् देवान् गच्छन्तु वो मदाः ॥३॥
आनन्दी इन्द्र हित मधुर, पावनता वितरण करते ।
चतुर्दिशा में फैल हमारे, अंगों में दिव्य प्रभा भरते ॥

सोमाः पवन्त इन्दवोऽस्मभ्यं गातुवित्तमाः ।
मित्राः स्वाना अरेपसः स्वाध्यः स्वर्विदः ॥४॥
मार्गदर्शक आनन्ददाता, सोम हमारे हित बहता ।
मित्र बना सुन्दर गायक का, साधक स्वर्गलोक में रहता ॥

अभी नो वाजसातमं रयिमर्ष शतस्पृहम् ।
इन्दो सहस्रभर्णसं तुविद्युम्नं विभासहम् ॥५॥
प्राण भर हमारे मन में, हे आह्लादक सोम ।
इष्टपालक तेजधारी, शत्रुभावों को करता मोम ॥

अभी नवन्ते अद्रुहः प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् ।
वत्सं न पूर्व आयुनि जातं रिहन्ति मातरः ॥६॥
द्वेषभावना रहित अंग सब, सोम को करें नमस्कार ।
पहली आयु में पाए बच्चे को, माता जैसे करती प्यार ॥

आ हर्यताय धृष्णवे धनुष्टन्वन्ति पौंस्यम् ।
शुक्रा वि यन्त्यसुराय निर्णिजे विपामग्रे महीयुवः ॥७॥
बलशाली साधक चाहे, ज्ञानी, कर्मशील में पाऊं स्थान ।
प्राणदायक शुद्ध सोम को, पुरुषार्थ का करते निर्माण ॥

परि त्यं हर्यतं हरिं बभ्रुं पुनन्ति वारेण ।
यो देवान् विश्वाँ इत् परि मदेन सह गच्छति ॥८॥
सुन्दर परमानन्द जो, हम को करे सदा विभोर ।
पालक शक्ति वाला, आनन्द बहता चारों ओर ॥
भरण पोषण का करने वाला, सुन्दर परमानन्द ।
चेतन के ऊँचे स्थानों से, आता रहता सदा अमन्द ॥

प्र सुन्वानायान्धसो मर्तो न वष्ट तद्वचः ।
अप श्वानमराधसं हता मखं न भृगवः ॥९॥
सोम को वह अनहद वाणी, जीवन तत्त्व लिये रहती ।
लोभी मूर्ख उसे न सुनते, त्यागी जनों को ही कहती ॥

इति षष्ठी दशतिः (अष्टमः खण्डः) ।

अभि प्रियाणि पवते चनोहितो नामानि यह्वो अधि येषु वर्धते ।
आ सूर्यस्य बृहतो बृहन्नधि रथं विष्वञ्चमरुहद् विचक्षणः ॥१॥
अन्न शक्ति से बना सोम, दिखाता अपने नाना रूप ।
विश्वरथ पर चढ़े सूर्य सम, क्रांति दिखाता प्रेरक भूप ॥

अचोदसो नो धन्वन्त्विन्दवः प्र स्वानासो बृहद् देवेषु हरयः ।
वि चिदश्नाना इषयो अरातयोऽर्यो नः सन्तु सनिषन्तु नो धियः ॥२॥
आकर्षक परमानन्द रस, सब अंगों में रमण करे ।
दुष्ट भाव कभी न फूलें, मन शुभ संकल्पों में गमन करे ॥

एष प्र कोशे मधुमाँ अचिक्रददिन्द्रस्य वज्रो वपुषो वपुष्टमः ।
अभ्यृ३तस्य सुदुघा घृतश्चुतो वाश्रा अर्षन्ति पयसा च धेनवः ॥३॥
वज्ररूप यह सोम इन्द्र के, मन मन्दिर में नाद बजाता ।
सौंदर्य बढ़ाता मधुरस देता, उसके संकट दुःख मिटाता ॥
गउएँ जैसे दूध लिये, बछड़ों के ढिग रंभाती जातीं ।
परमानन्दयुक्त ज्ञान रश्मियाँ, साधक के घट में आतीं ॥

प्रो अयासीदिन्दुरिन्द्रस्य निष्कृतं सखा सख्युर्न प्र मिनाति सङ्गिरम् ।
मर्य इव युवतिभिः समर्षति सोमः कलशे शतयामना पथा ॥४॥
सोम इन्द्र का मित्र बना है, सानन्द उसके घर आता ।
मित्र मित्र के दिये वचन को, सच्चे मन से है निभाता ॥
बलशाली बर युवतिजनों को, देते हैं जैसे सहयोग ।
सोम लिये निज ज्ञानशक्तियाँ, साधक को है देता भोग ॥

वर्ता दिवः पवते कृत्व्यो रसो दक्षो देवानामनुमाद्यो नृभिः ।
हरिः सृजानो अत्यो न सत्वभिर्वृथा पाजांसि कृणुषे नदीष्वा ॥५॥

प्रकाशलोक को रखने वाला, दिव्य गुणों के बल से आता ।
भक्तों को आनन्दित करता, आनन्दरस है सोम बहाता ॥
आकर्षक रस जब बन जाता है, नस नस का बल व्यर्थ हो जाता ।
उनमें सतोगुणी बल भरकर, साधक के मन मोद भराता ॥

वृषा मतीनां पवते विचक्षणः सोमो अह्नां प्रतरीतोषसां दिवः ।
प्राणा सिन्धूनां कलशाँ अचिक्रददिन्द्रस्य हार्दिमाविशन्मनीषिभिः ॥६॥

दिव्य लोक से क्रांतिकारी, सोम ज्ञान की उषा लाता ।
दिन चमकाता नर-काया में, नस-नस में जीवन प्रकटाता ॥
चिति शक्तियाँ साथ लिये यह, इन्द्र के मन अधिकार जमाता ।
उसको रस से पूर्ण करके, अन्दर अन्दर नाद बजाता ॥

त्रिरस्मै सप्त धेनवो दुदुह्रिरे सत्यामाशिरं परमे व्योमनि ।
चत्वार्यन्या भुवनानि निर्णिजे चारूणि चक्रे यदृतैरवर्धत ॥७॥

परमानन्द का साधक जब, सब से ऊँचे पथ पर जाता ।
जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति में यह, सात गउओं का दूध है पाता ॥
मस्तिष्क के सातों छिद्रों में, ज्ञान की गउएँ रहती हैं ।
सत्य दूध को दोहन करके, ज्ञान की गंगा बहती है ॥
धीरे-धीरे शुद्ध बना यह, अन्नकोष का त्याग करे ।
प्राणमय से मनोमय में, ज्ञानानन्द अनुराग भरे ॥

इन्द्राय सोम सुषुतः परि स्रवापामीवा भवतु रक्षसा सह ।
मा ते रसस्य मत्सत द्वयाविनो द्रविणस्वन्त इह सन्त्विन्दवः ॥८॥

सुन्दर बने हो सोम तुम, इन्द्रहित सुखदान करो ।
रोग पाप सब दूर करके, सज्जन को ऐश्वर्यवान करो ॥

असावि सोमो अरुषो वृषा हरी राजेव दस्मो अभि गा अचिक्रदत् ।
पुनानो वारमत्येष्यव्ययं श्येनो न योनिं घृतवन्तमासदत् ॥९॥

चमकीला सुखवर्षक सोम, इन्द्रियों का करता आह्वान ।
चिति शक्तियों से शुद्ध होकर, ज्ञानी घट में पाता स्थान ॥

प्र देवमच्छा मधुमन्त इन्दवोऽसिष्यदन्त गाव आ न धेनवः ।
बर्हिषदो वचनावन्त ऊधभिः परिस्रुतमुस्रिया निर्णिजं धिरे ॥१०॥
जैसे गउएँ दूध लिये, सप्रेम वत्सों को पाती हैं।
मधुरानन्द की शुद्ध धाराएँ, इन्द्र को गाती जाती हैं ॥

अञ्जते व्यञ्जते समञ्जते क्रतुं रिहन्ति मध्वाभ्यञ्जते ।
सिन्धोरुच्छ्वासे पतयन्तमुक्षणं हिरण्यपावाः पशुमप्सु गृभ्णते ॥११॥
ज्ञानी साधक घट में बरसे, सोम से काम किया करते ।
उसको देखें उसे बनायें, उससे ही कर्मरस पिया करते ॥

पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते प्रभुर्गात्राणि पर्येषि विश्वतः ।
अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते शृतास इद् वहन्तः सं तदाशत ॥१२॥
आत्मज्ञान के स्वामी तेरो, शुद्धि हेतु सभी साधन हैं।
ज्ञान से चमके परमानन्द को, पाने को खड़े सभी सुजन हैं ॥
थका हुआ जब आता है तू, अंग-अंग में रम जाता।
त्यागी जन उस रस को पाकर, जीवनदायक बन जाता ॥

इति सप्तमो दशतिः (नवमः खण्डः) ।

इन्द्रमच्छ सुता इमे वृषणं यन्तु हरयः ।
श्रुष्टे जातास इन्दवः स्वर्विदः ॥१॥
उत्पन्न हुआ कल्याण के हित, परमानन्द जो देता है।
सुखवर्षक वह सोम मनोहर, इन्द्र ही उसको लेता है ॥

प्र धन्वा सोम जागृविरिन्द्रायेन्दो परि स्रव ।
द्युमन्तं शुष्ममा भर स्वर्विदम् ॥२॥
सदा प्राप्त सतर्क सोम तू, इन्द्र को पहुंचा आह्लाद ।
प्रकाशपूर्ण बलवान बनाकर, परमानन्द का दे स्वाद ॥

सखाय आ नि षीदत पुनानाय प्र गायत ।
शिशुं न यज्ञैः परि भूषत श्रिये ॥३॥
आओ मित्रो पास हमारे, मधुर सोम रस पान करो ।
अपने बालक के सम इसको, कर्मों से शोभावान करो ॥

तं वः सखायो मदाय पुनानमभि गायत ।
शिशुं न हव्यैः स्वदयन्त गूर्तिभिः ॥४॥
मित्रो यदि आनन्द चाहो, बाल सोम का गान करो।
प्रिय स्तुतियों की हवि बनाकर, उसको तुम बलवान करो॥

प्राणा शिशुर्महीनां हिन्वन्नृतस्य दीधितिम् ।
विश्वा परि प्रिया भुवदध द्विता ॥५॥
प्राणभृत यह सोम शिशु, सत्य ज्ञान चमकाता है।
समष्टि व्यष्टि स्थूल सूक्ष्म, सबका विवेक करवाता है॥

पवस्व देववीतय इन्दो धाराभिरोजसा ।
आ कलशं मधुमान्त्सोम नः सदः ॥६॥
पूरे बल से आकर तू, मेरे अंगों को दिव्य बना।
मधुर सोम मेरे मन मंदिर में, आकर स्थान को पा॥

सोमः पुनान ऊर्मिणाव्यं वारं वि धावति ।
अग्रे वाचः पवमानः कनिक्रदत् ॥७॥
परमानन्द रस जब छन-छनकर, चित् की छलनी से आता।
अनहद नाद संगीत सुनाता, वाणी को है शुद्ध बनाता॥

प्र पुनानाय वेधसे सोमाय वच उच्यते ।
भृतिं न भरा मतिभिर्जुजोषते ॥८॥
चेतन शक्ति से सब अंगों में, प्रीति से जो बहता।
हे साधक तू सेवा कर, उसको जो बुद्धि में रहता॥

गोमन्न इन्दो अश्ववत् सुतः सुदक्ष धनिव ।
शुचिं च वर्णमधि गोषु धारय ॥९॥
हे आह्लादक सोम हमारे, ज्ञान कर्म बलवान बना।
सब इन्द्रियाँ शुभ कर्म करें, हमको यश की खान बना॥

अस्मभ्यं त्वा वसुविदमभि वाणीरनूषत ।
गोभिष्टे वर्णमभि वासयामसि ॥१०॥
हे ऐश्वर्यदाता तेरी प्रशंसा, वेदवाणी कर रही।
सुख सम्पत्ति तुझ से लेकर, कीर्ति है भर रही॥

पवते हर्यतो हरिरति ह्वरांसि रंह्या ।
अभ्यर्ष स्तोतृभ्यो वीरवद्यशः ॥११॥
प्यारे सुन्दर सोम आओ, कुटिल भावों को करके पार ;
वीरों का सा यश देने को, भक्तों तक पहुंचे रस धार ॥

परि कोशं मधुश्चुतं सोमः पुनानो अर्षति ।
अभि वाणीर्ऋषीणां सप्तानूषत ॥१२॥
शुद्ध किया मधु भरा रस, हृदय कलश में आ रहा ।
सात वाणियाँ ज्ञान के गीत, का प्रवाह उसी को गा रहा ॥

इति अष्टमी दशतिः (दशमः खण्डः) ।

पवस्व मधुमत्तम इन्द्राय सोम क्रतुवित्तमो मदः । महि द्युक्षतमो मदः ॥१॥
सब से मीठा शक्तिशाली, ज्ञान कर्म को देने वाला ।
बहता आ तेजस्वी प्यारे, तू सब का दुःख लेने वाला ॥

अभि द्युम्नं बृहद्यश इषस्पते दिदीहि देव देवयुम् । वि कोशं मध्यमं युव ॥२॥
हे प्रेरक हे दिव्य सोम; तू सबका यश फैलाता है ।
मन विज्ञान के कोषों के, सब आवरण हटाता है ॥

आ सोता परि षिञ्चताश्वं न स्तोममप्तुरं रजस्तुरम् । वन-प्रक्षमुदप्रुतम् ॥३॥
धूल उड़ाते, दौड़े जाते, घोड़े को लोग सजाते हैं ।
ज्ञान रसीला सोम सजा कर, अविद्या नाश कराते हैं ॥

एतमु त्यं मदच्युतं सहस्रधारं वृषभं दिवोदुहम् । विश्वा वसूनि बिभ्रतम् ॥४॥
आनन्द बहाता, रूप दिखाता, सम्पत्ति बरसाता है ।
ऐसा परमानन्द तो मुझ तक, प्रकाशलोक से आता है ॥

स सुन्वे यो वसूनां यो रायामानेता य इडानाम्। सोमो यः सुक्षितीनाम् ॥५॥

गीत गाऊँ उसी सोम के, जो ज्ञान का प्रकाश देता।
धनवान करता दान की, शुभ भावनाएँ मन में जगाता ॥

त्वं ह्या३ङ्ग दैव्यं पवमान जनिमानि द्युमत्तमः। अमृतत्वाय घोषयन् ।६॥

सब से सुन्दर शोभा वाले, सोम बहाता दिव्य धारा।
मेरे जन्म जन्म को देता, अमरता सन्देश प्यारा ॥

एष स्य धारया सुतोऽव्या वारेभिः पवते मदिन्तमः। क्रीळन्नूर्मिरपामिव ॥७॥

चेतना आवरण में से, सोम छनता आ रहा।
आनन्द देता, ज्ञान देता, कर्म को लहरा रहा ॥

य उस्रिया अपि या अन्तरश्मनि निर्गा अकृन्तदोजसा।
अभि व्रजं तत्निषे गव्यमश्व्यं वर्मीव धृष्णवा रुज ॥८॥

ज्ञान और कर्म की किरणें, अन्तःकरण से आ रहीं।
गर्जतीं और बल दिखातीं, मेघ सो हैं छा रहीं ॥
रोक इसको शीघ्र ही तू, बना कर्म ज्ञान दीवार को।
विघ्नबाधा नष्ट कर तू, लेकर वीर की तलवार को ॥

इति नवमी दशतिः (एकादशः खण्डः)

इति पञ्चमोऽध्यायः। षष्ठश्च प्रपाठकः समाप्तः ॥

इति सौम्यं पावमानं काण्डम् ॥

अथ तृतीयोऽर्धः

इन्द्र ज्येष्ठं न आ भर ओजिष्ठं पुपुरि श्रवः।
यद्दिधृक्षेम वज्रहस्त रोदसी उभे सुशिप्र पप्राः ॥१॥

हे इन्द्र हम को तू, श्रेष्ठ बलयुत ज्ञान दे।
धारण करें हम इसको, तू ऐसी शक्ति दान दे ॥
हे तेजधारी तेज से, दोनों लोक तू भरपूर कर।
साधनों का कोष है तू, अल्पता हमारी काफूर कर ॥

इन्द्रो राजा जगतश्चर्षणीनामधि क्षमा विश्वरूपं यदस्य।
ततो ददाति दाशुषे वसूनि चोदद्राध उपस्तुतं चिदर्वाक् ॥२॥
सारी धरती का ही, जब वह बन जाता राजा।
दानशील जन सब पाता, जब वह कहता उसको आ जा॥

यस्येदमा रजोयुजस्तुजे जने वनं स्वः। इन्द्रस्य रन्त्यं बृहत् ॥३॥
इन्द्र प्रभु का कितना धन है, कितना सुन्दर और महान।
उसको परमानन्द है देता, जो है दानी ज्योतिमान॥

उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय।
अथादित्य व्रते वयं तवानागसो अदितये स्याम ॥४॥
उत्तम मध्यम निम्न दोषों से, हे सर्वगत करो उद्धार।
तेरे राज्य में पाप रहित हों, पायें तेरी ज्योति अपार॥

त्वया वयं पवमानेन सोम भरे कृतं वि चिनुयाम शश्वत्।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥५॥
हे सोम तेरी ही कृपा से, कर्तव्य अपना हम निभाते।
मित्र वरुण, द्यौ, सागर, धरती, अदिति सदा गौरव बढ़ाते॥

इमं वृषणं कृणुतैकमिन्माम् ॥६॥
परमेश्वर के दिव्य गुणो, मेरे मन में आ जाओ।
अपने जैसा हो सुखवर्षक, हम को अभी बनाओ॥

स न इन्द्राय यज्यवे वरुणाय मरुद्भ्यः। वरिवोवित् परि-स्रव ॥७॥
परमानन्द तू मेरे मन को, ज्ञानी और यजमान बना।
मन से चित्त में बहता आ, मुझ को शक्तिमान बना॥

एना विश्वान्यर्य आ द्युम्नानि मानुषाणाम्। सिषासन्तो वनामहे ॥८॥
उन्नतिपथ के नेता सोम, करते हैं हम तेरा ध्यान।
सुख सम्पत्ति भाग मांगते, तुझ को अपना दाता जान॥

अहमस्मि प्रथमजा ऋतस्य पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य नाम।
यो मा ददाति स इदेवमावदहमन्नमन्नमदन्तमद्मि ॥६॥
परम सत्य और अमर, अन्न सदा कहलाया हूं।
सब देवों से पहले मैं इस, जगती तल पर आया हूं॥
सारे जग से बड़ा ब्रह्म, मैं सृष्टिकर्ता कहलाता।
दान न देता मुझ को खाता, मैं उसको खा जाता॥

इति दशमी दशतिः (प्रथमः खण्डः)।

त्वमेतदधारयः कृष्णासु रोहिणीषु च। परुष्णीषु रुशत् पयः ॥१॥
हे इन्द्र तेरा तेज सुन्दर, चमकता ज्ञान नाड़ियों में।
इड़ा पिंगला में भी रहता, सदा ध्यान धारियों में॥

अरूरुचदुषसः पृश्निरग्रिय उक्षा मिमेति भुवनेषु वाजयुः।
मायाविनो ममिरे अस्य मायया नृचक्षसः पितरो गर्भमादधुः ॥२॥
उषा की पहली किरण सम, सोम है यह चमक रहा।
ऐश्वर्य देकर प्राणदाता, ऐश्वर्य से है दमक रहा॥
इसकी ज्ञान क्रिया से मन में, चेतनता भरती जाती।
साधक क्रांतिकारी में यह, पितृ-भावना धरती जाती॥

इन्द्र इद्धर्योः सचा सम्मिश्ल आ वचोयुजा। इन्द्रो वज्री हिरण्ययः ॥३॥
अपने बल से इन्द्र ही, सब अंगों में मेल करे।
अपने सत्य तेज से हो, वह जग में मारग खेल करे॥

इन्द्र वाजेषु नोऽव सहस्रप्रधनेषु च। उग्र उग्राभिरूतिभिः ॥४॥
हे तेजधारी इन्द्र सभी, झगड़ों में मेरी रक्षा करते रहना।
अपनी उग्र शक्तियों से, कर्मों में ज्ञान प्रभा भरते रहना॥

प्रथश्च यस्य सप्रथश्च नामानुष्टुभस्य हविषो हविर्यत्।
धातुर्द्युतानात् सवितुश्च विष्णो रथन्तरमा जभारा वसिष्ठः ॥५॥
जो वाणी दो नामों वाली, छोटी बड़ी कहाती है।
मिलती प्रेरक सोम प्रभु से, चतुर भक्त को आती है॥

नियुत्वान् वायवा गह्ययं शुक्रो अयामि ते। गन्तासि सुन्वतो गृहम् ॥६॥

प्राण नियम से बंधकर रहता, साधक के घर आता है।
वीर्य प्रदाता वश में होता, सब के मन को भाता है॥

यज्जायथा अपूर्व्य मघवन् वृत्रहत्याय।
तत् पृथिवीमप्रथयस्तदस्तभ्ना उतो दिवम् ॥७॥
हे ईश तू अज्ञान के, आवरण हटाने आता है।
धरती का फैलाव दिखाता, अंतरिक्ष चमकाता है॥

इति एकादशी दशतिः (द्वितीयः खण्डः)।

मयि वर्चो अथो यशोऽथो यज्ञस्य यत्पयः।
परमेष्ठी प्रजापतिर्दिवि द्यामिव दृंहतु ॥१॥
हे स्वामी तू ने जैसे, सूर्य द्यौ को धारा है।
मुझ में यज्ञ भावना भर दे, जिसमें ही यश सारा है॥
ऐसी कृपा करो हे भगवन्, तुझ से विमुख कभी न होऊँ।
तेरे में ही लीन रहूँ मैं, तुझ से परमानन्द को पाऊँ॥

सं ते पयांसि समु यन्तु वाजाः सं वृष्ण्यान्यभिमातिषाहः।
आप्यायमानो अमृताय सोम दिवि श्रवांस्युत्तमानि धिष्व ॥२॥
अभिमान विनाशक सोम, तुरहो से बल और आनन्द पायें।
पोषक शक्ति पाकर तुम से, अमर पथ को ज्योति जगायें॥

त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वास्त्वमपो अजनयस्त्वं गाः।
त्वमातनोरुर्वा३न्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ॥३॥
हे सोम तू ने सब से पहले, धरती को चीजें उपजायीं।
जल वाली फिर सृष्टि बनाकर, तेजमयी लहरें लहरायीं॥

अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम् ॥४॥
सब से बड़े देव को ध्याऊँ, जिस ने यज्ञ बनाये हैं।
त्याग भाव से ठीक समय पर, यजमानों को रत्न दिलाये हैं॥

ते मन्वत प्रथमं नाम गोनां त्रिः सप्त परमं नाम जानन् ।
ता जानतीरभ्यनूषत क्षा आविर्भुवन्नरुणीर्यशसा गावः ॥५॥
भक्तों ने गायत्री गाई, उसके गीतों का ध्यान किया।
उस का भेद उन्होंने जाना, जिन्होंने उनका गान किया ॥

समन्या यन्त्युपयन्त्यन्याः समानमूर्वं नद्यस्पृणन्ति ।
तमू शुचिं शुचयो दीदिवांसमपान्नपातमुप यन्त्यापः ॥६॥
सागर को कुछ नदियां भरतीं, कुछ पास ही उसके जाती हैं।
जनधारक सुन्दर गुण को, कुछ ज्ञान शक्तियाँ पाती हैं ॥

आ प्रागाद्भद्रा युवतिरह्नः केतून्त्समीर्त्सति ।
अभूद्भद्रा निवेशनी विश्वस्य जगतो रात्री ॥७॥
कल्याणी निशा ने आकर, जग के श्रम का नाश किया।
नई नवेली उषा ने जगकर, कण-कण को प्रकाश दिया ॥

प्रक्षस्य वृष्णो अरुषस्य नू महः प्र नो वचो विदथा जातवेदसे ।
वैश्वानराय मतिर्नव्यसे शुचिः सोम इव पवते चारुरग्नये ॥८॥
ज्ञान यज्ञ में, ज्ञान के दाता, सुखदाता का उपदेश है।
नर नर को उत्तम अग्नि में, शुभ संकल्पों का सन्देश है ॥

विश्वे देवा मम शृण्वन्तु यज्ञमुभे रोदसी अपां नपाच्च मन्म ।
मा वो वचांसि परिचक्ष्याणि वोचं सुम्नेष्विद्वो अन्तमा मदेम ॥९॥
सब लोकों के देव, मेरे यज्ञकर्मों पर ध्यान दें।
तेरे विरोधी वचन न बोलूं, परमानन्द का दान दें ॥

यशो मा द्यावापृथिवी यशो मेन्द्रबृहस्पती ।
यशो भगस्य विदन्तु यशो मा प्रति मुच्यताम् ।
यशसाऽस्याः संसदोऽहं प्रवदिता स्याम् ॥१०॥
सारे लोक इन्द्र बृहस्पति के, ऐश्वर्यशाली यश पाऊँ।
सदा यशस्वी बनकर मैं, विद्वानों में वक्ता बन जाऊँ ॥

इन्द्रस्य नु वीर्याणि प्रवोचं यानि चकार प्रथमानि वज्री ।
अहन्नहिमन्वपस्ततर्द प्र वक्षणा अभिनत् पर्वतानाम् ॥११॥
वीर इन्द्र के कर्म बताऊं, जिस ने विघ्नों को टारा है।
अपनी शक्ति से मार्ग बना, बहाई ज्ञान कर्म जलधारा है ॥

अग्निरस्मि जन्मना जातवेदा घृतं मे चक्षुरमृतं म आसन् ।
त्रिधातुरर्को रजसो विमानोऽजस्रं ज्योतिर्हविरस्मि सर्वम् ॥१२॥
मैं अग्नि हूं मैं अमृत हूं, निर्मल ज्ञान सदा फैलाऊँ ।
सब में रहकर हवि बना, सत्चित् आनन्द रूप कहाऊँ ॥

पात्यग्निर्विपो अग्रं पदं वेः पाति यह्वश्चरणं सूर्य्यस्य ।
पाति नाभा सप्तशीर्षाणमग्निः पाति देवानामुपमादमृष्वः ॥१३॥
ज्ञानभरा यह श्रेष्ठ अग्नि, धरा गगन में राह बनाता ।
अन्तरिक्ष में मनन कराता, दिव्य ज्ञान दे हर्ष बढ़ाता ॥

इति द्वादशो दशतिः (तृतीयः खण्डः) ।

आजन्त्यग्ने समिधान दीदिवो जिह्वा चरत्यन्तरासनि ।
स त्वं नो अग्ने पयसा वसुविद्रयिं वर्चो दृशेऽदाः ॥१॥
हे अग्ने जब तू जगता है, अन्तःकरण में ज्योति जगाता ।
अपने बल से मार्ग दिखाता, दिव्य धनों से ओज बढ़ाता ॥

वसन्त इन्नु रन्त्यो ग्रीष्म इन्नु रन्त्यः ।
वर्षाण्यनु शरदो हेमन्तः शिशिरः इन्नु रन्त्यः ॥२॥
षड् ऋतु जैसे हमें बसातीं, हम सब के दुःख नष्ट करें ।
प्रभु के सारे कर्म हमें भी, सदा सदा आनन्द भरें ॥

सहस्रशीर्षाः पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं सर्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥३॥
जिस के हजारों सिर, आंखें पैर चारों ओर हैं ।
ब्रह्माण्ड सारे में फैला, वही जगत् का सिरमौर है ॥

त्रिपादूर्ध्व उदैत् पुरुषः पादोऽस्येहाभवत् पुनः ।
तथा विष्वङ् व्यक्रामदशनानशने अभि ॥४॥
परमपिता का एक अंश ही, सारा जग चमकाता है ।
उच्च स्थिति में पहुंचे नर को, बाकी तीनों भाग दिखाता है ॥

पुरुष एवेदं सर्वं यद् भूतं यच्च भाव्यम् ।
पादोऽस्य सर्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥५॥
वर्तमान और भूत भविष्यत्, परम प्रभु का अंग कहाता ।
शेष भाग अमृत वह पाता, जो जन दिव्य लोक को जाता ॥

तावानस्य महिमा ततो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥६॥
तीन काल से ऊपर है वह, विराट् जगत् का स्वामी है ।
अन्न की शक्ति से भी बढ़कर, वह अमरलोक का गामी है ॥

ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद् भूमिमथो पुरः ॥७॥
परम पुरुष से हुआ विराट्, परम पुरुष है अधिष्ठाता ।
विराट् पुरुष ही सारे जग के, आगे पीछे बढ़ता जाता ॥

मन्ये वां द्यावापृथिवी सुभोजसौ ये अप्रथेथाममितमभि योजनम् ।
द्यावापृथिवी भवतं स्योने ते नो मुञ्चतमंहसः ॥८॥
हे पृथिवी हे द्यौ पिता, तुम सब का पालन करते हो ।
सुख से रखते अपने ऊपर, सब पापों को हरते हो ॥
जो सुख चाहे इस धरती पर, द्युलोक का प्रिय आनन्द ।
पाप कर्म से दूर रहे वह, कर्म करे शुभ सदा स्वच्छन्द ॥

हरी त इन्द्र श्मश्रूण्युतो ते हरितौ हरी ।
तं त्वा स्तुवन्ति कवयः पुरुषासो वनर्गवः ॥९॥
मेधावी जो प्रभु को गाते, चाहते तेरा ज्ञानालोक ।
अपने मन को साध-साधकर, शुभ कर्मों से हरते शोक ॥

यद्वर्चो हिरण्यस्य यद्वा वर्चो गवामुत ।
सत्यस्य ब्रह्मणो वर्चस्तेन मा सं सृजामसि ॥१०॥
हे इन्द्र मुझ को सम्पदा दे, कर्मबल प्रदान कर ।
सत्य रूप शुद्ध ब्रह्म का, तेज मुझ को दान कर ॥

सहस्तन्न इन्द्र दद्ध्योज ईशे ह्यस्य महतो विरप्शिन् ।
क्रतुं न नृम्णं स्थविरं च वाजं वृत्रेषु शत्रून्त्सहना कृधी नः ॥११॥
हे प्रभु तू इन्द्र है, तू शासक इस संसार का ।
काम क्रोध नाश कर, पायें ज्ञान कर्म आधार का ॥

सहर्षभाः सहवत्सा उदेत विश्वा रूपाणि बिभ्रतीद्व्यूध्नी ।
उरुः पृथुरयं वो अस्तु लोक इमा आपः सुप्रपाणा इह स्त ॥१२॥
हे इन्द्रियो मन साथ ले, ज्ञान कर्म बरसाती जाना ।
सारा लोक तुम्हारा ही है, ज्ञान कर्म रस पाती जाना ॥

इति चतुर्थी दशतिः (चतुर्थः खण्डः) ।

अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः । आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥१॥
हे अग्ने तू आयु देता, अन्न बल से पूर कर ।
नाश कर दे दुष्ट वृत्ति, मुझ से दुर्गुण दूर कर ॥

विभ्राड् बृहत् पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविह्रुतम् ।
वातजूतो यो अभिरक्षति त्मना प्रजाः पिपर्ति बहुधा वि राजति ॥२॥
जीवन रस का पान करायें, सारे जग में दीप्तमान ।
प्राणशक्ति से उसे बढ़ाता, जीवन यज्ञ का यजमान ॥

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ।
आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥३॥
उदय हुआ यह अद्भुत शक्तियुत, मित्र वरुण अग्नि दर्शाता ।
दिव्य सूर्य नभ धरा शून्य, जड़ चेतन का जीवनदाता ॥

आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः । पितरं च प्रयन्त्स्वः ॥४॥
धरा रवि का चक्कर काट, उस माता के सम्मुख जाती ।
ज्ञान कर्म ले साथ इन्द्रियां, सुखरूप ज्योति को पातीं ॥

अन्तश्चरति रोचनास्य प्राणादपानती । व्यख्यन्महिषो दिवम् ॥५॥
दिव्य सूर्य की प्राणशक्ति विश्व में गतिमान है ।
अपान रूपी शुभ्र शक्ति, करती प्रकाश महान है ॥

त्रिंशद्धाम वि राजति वाक् पतङ्गाय धीयते । प्रति वस्तोरह द्युभिः ॥६॥
अपना दिव्य प्रकाश लिये, तीसों घड़ी प्रभु का राज है ।
गीत गावें हम उसी के, जिसका यह सारा साज है ॥

अप त्ये तायवो यथा नक्षत्रा यन्त्यक्तुभिः। सूराय विश्वचक्षसे ॥७॥

सूर्य को लख रात्रिवासी, तारे ज्यों छिप जाते हैं।
सर्वदर्शक दिव्य ज्ञान से, काम क्रोध भग जाते हैं॥

अदृश्रन्नस्य केतवो वि रश्मयो जनाँ अनु। भ्राजन्तो अग्नयो यथा ॥८॥

अग्नि लपटों सम ज्ञान की किरणें, दिव्य रवि दिखलाती हैं।
चारों ओर चमकती सब को, उत्तम मार्ग बताती हैं॥

तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य। विश्वमाभासि रोचनम् ॥९॥

हे दिव्य सूर्य तू पार लगाता, सब ज्योति का दाता है।
सारा जग तू ही दिखलाता, सुन्दरता की माता है॥

प्रत्यङ् देवानां विशः प्रत्यङ्ङुदेषि मानुषान्। प्रत्यङ् विश्वं स्वर्दृशे ॥१०॥

हे रवि तेरा शुभ दर्शन, प्रातः प्रजाओं को मिलता।
है वही तेरा दिव्य दर्शन, मानवों को सुख दिलाता॥

येना पावक चक्षसा भुरण्यन्तं जनाँ अनु। त्वं वरुण पश्यसि ॥११॥

अपने नियमों से शुद्ध बना, दिव्य ज्ञान दिलाता तू।
कृपा दृष्टि से भक्तों को, देख देख हर्षाता तू॥

उद् द्यामेषि रजः पृथ्वहा मिमानो अक्तुभिः। पश्यञ्जन्मानि सूर्य ॥१२॥

हे सूर्य सारे जीवों पर, तू कृपा दृष्टि बरसाता है।
दिन रात बना अपने भक्तों के, हृदय गगन चमकाता है॥

अयुक्त सप्त शुन्ध्युवः सूरो रथस्य नप्त्यः। ताभिर्याति स्वयुक्तिभिः ॥१३॥

सब के प्रेरक दिव्य रवि ने, सात घोड़े बना दिए।
स्वयं बनकर चालक, सब के देहरथ चला दिए॥

सप्त त्वा हरितो रथे वहन्ति देव सूर्य । शोचिष्केशं विचक्षण ॥१४॥
हे क्रांतदर्शी दिव्य सूर्य, तेरा ज्ञान शोभा खान है।
इन्द्रियाँ हैं सात घोड़े, तू मेरा रथवान है॥
देहरथ में बैठ के वश, इन्द्रियों के घोड़े चला रहा।
इनको वश में रख कर, ज्ञान पथ पर तीव्रता से जा रहा॥

इति षष्ठः प्रपाठकः।

इति षष्ठोऽध्यायः। इत्यारण्यकं काण्डम्।

इति सामवेदसंहितायां पूर्वार्चिकः समाप्तः॥

अथ महानाम्न्यार्चिकः

(१) विदा मघवन् विदा गातुमनुशंसिषो दिशः ।
(२) शिक्षा शचीनां पते पूर्वीणां पुरूवसो ॥१॥
हे ईश तू सर्वज्ञ है, हम को उचित मार्ग दिखा ।
सर्वव्यापक सर्वज्ञानी, लक्ष्य पर हम को चला ॥

आभिष्ट्वमभिष्टिभिः (३) स्वा३ऽन्नांशुः ।
प्रचेतन प्रचेतये(४ न्द्रद्युम्नाय न इषे ॥२॥
आनन्द ज्योति से चमकता, ज्ञान तेरा रूप है ।
ज्ञानघन पा के बढ़े, तू हो प्रेरक भूप है ॥

(५) एवा हि शक्रो (६) राये वाजाय वज्रिवः ।
शविष्ठ वज्रिन्नृञ्जसे मंहिष्ठ वज्रिन्नृञ्जस (७)
आ याहि पिब मत्स्व ॥३॥
हे इन्द्र तू है शक्तिशाली, तेरी पूजा हम करें ।
ज्ञान परमानन्द वाले, हर्ष पा तुझ को वरें ॥

(१) विदा राये सुवीर्यं भवो वाजानां पतिर्वशाँ अनु ।
(२) मंहिष्ठ वज्रिन्नृञ्जसे यः शविष्ठः शूराणाम् ॥४॥
तीन लोक के स्वामी हो, तुम्हारा पापनाशक नाम है ।
शक्ति और सम्पत्ति देना, पूजनीय समर्थ तेरा काम है ॥

यो मंहिष्ठो मघोनाम् (३) अंशुर्न शोचिः ।
चिकित्वो अभि नो नये(४)न्द्रो विदे तमु स्तुहि ॥५॥
सब से सुन्दर सब से ऊँचा, ज्ञान धन का स्वामी है ।
तुझ को ध्याएँ तुझ को पाएँ, तू ही ज्ञानी नामी है ॥

(५) ईशे हि शक्रस् (६) तमूतये हवामहे जेतारमपराजितम् ।
स नः स्वर्षदति द्विषः (७) क्रतुश्छन्द ऋतं बृहत् ॥६॥
परम सत्य वह परम शक्ति है, विजयी सदा महान् ।
द्वेषभाव को नाश करे, उसका ज्ञानकर्म बलवान् है ॥

(१) इन्द्रं धनस्य सातये हवामहे जेतारमपराजितम् ।
(२) स नः स्वर्षदति द्विषः स नः स्वर्षदति द्विषः ॥७॥
उस अपराजित देव इन्द्र को, धन के लिए बुलाते हैं ।
वही हमारे मन के सारे, दुष्ट भाव विनसाते हैं ॥

पूर्वस्य यत्ते अद्रिवों(३)ऽशुर्मदाय ।
सुम्न आ धेहि नो वसो (४) पूर्तिः शविष्ठ शस्यते ।
(५) वशी हि शक्रो (६) नूनं तन्नव्यं संन्यसे ॥८॥
तेरी किरण आनन्ददायक, सब को बसाने वाले ।
धारण करें उसी को, शुभ कर्म कराने वाले ॥
काम सब पूरण करें, ऐसा हमें वरदान दो ।
गीत तेरे ही गाया करें, ऐसी शक्ति दान दो ॥

प्रभो जनस्य वृत्रहन्त्समर्येषु ब्रवावहै ।
(७) शूरो यो गोषु गच्छति सखा सुशेवो अद्वयुः ॥९॥
हे विघ्ननाशक तुझ को ध्याकर, उन्नति पथ पर जाते हैं ।
शूरवीर और मित्र हमारे, तेरी अनुपम सेवा पाते हैं ॥

एवाह्योऽ३ऽ३ऽ३व । एवा ह्यग्ने । एवाहीन्द्र । एवा हि पूषन् । एवा हि देवाः ॥१०॥
अग्ने श्रेष्ठ वरों के दाता, ऐश्वर्यों की खान हो ।
पूषा, इन्द्र महान् हो, पालक सुखधाम हो ॥

इति महानाम्न्यार्चिकः समाप्तः ।

॥ ओ३म् ॥

सामवेद-संहिता

उत्तरार्चिकः

अथ प्रथमः प्रपाठकः

(प्रथमोऽर्धः)

उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे । अभि देवाँ इयक्षते ॥
अभि ते मधुना पयोऽथर्वाणो अशिश्रयुः । देवं देवाय देवयुः ॥
स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते । शं राजन्नोषधीभ्यः ॥१॥

करो प्रशंसा उस रस की, जो परमानन्द कहाता है ।
इन्द्रियों में चेतनता लाकर, शक्ति रस सरसाता है ॥
हे दिव्य गुणी तेरा गुण, मन में लाने के लिए ।
आनन्दरस मधुर करते, भक्तजन भक्ति पाने के लिए ॥
परमानन्द के स्रोत तुम, गउएँ घोड़े दान करो ।
विजय ऐश्वर्य और तेज देकर, सब जन कल्याण करो ॥

दविद्युतत्या रुचा परिष्टोभन्त्या कृपा । सोमाः शुक्रा गवाशिरः ॥
हिन्वानो हेतृभिर्हित आ वाजं वाज्यक्रमीत् । सीदन्तो वनुषो यथा ॥
ऋधक्सोम स्वस्तये संजग्मानो दिवा कवे । पवस्व सूर्यो दृशे ॥२॥

ज्ञानप्रकाश से भरा सोम यह, जग मन ज्योति दिखाता है ।
स्तुति भक्ति से शक्ति पा, सब को बलवान बनाता है ॥
कोड़ों से डर कर जैसे, घोडा युद्ध में जाता है ।
भक्तिभाव से भरा सोम, भक्तों का ध्यान लगाता है ॥
हे क्रान्तिकारी सोम तू आ, कल्याण करने के लिए ।
सूर्य के सम शक्ति दे, सब में प्राण भरने के लिए ॥

पवमानस्य ते कवे वाजिन्त्सर्गा असृक्षत । अर्वन्तो न श्रवस्यवः ॥
अच्छा कोशं मधुश्चुतमसृग्रं वारे अव्यये । अवावशन्त धीतयः ॥
अच्छा समुद्रमिन्दवोऽस्तं गावो न धेनवः । अग्मन्नृतस्य योनिमा ॥३॥

जब हम तेरी महिमा गाते, परम ज्ञान पाने के लिए ।
अश्व सम हैं भागतीं, यह सोम धारा पाने के लिए ॥
दूध दुहाने घर में जैसे, गउएँ भगी आती हैं ।
आनन्दधारा मन में आके, परम सत्य-प्रभा पाती हैं ॥

इति प्रथमः खण्डः ।

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये । नि होता सत्सि बर्हिषि ॥
तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्धयामसि । बृहच्छोचा यविष्ठय ॥
स नः पृथु श्रवाय्यमच्छा देव विवाससि । बृहदग्ने सुवीर्यम् ॥४॥

हे प्रेरक हे अज्ञान विनाशक, मेरे हृदय मे स्थान ले ।
त्यागभाव से कर्म करूँ, ऐसा मुझ को ज्ञान दे ॥
हे ऊपर ले जाने वाले, अंग अंग में तू समाया ।
ज्ञान विचार से तुझे बढ़ायें, तू युवक सम जगमगाया ॥
हे अग्निदेव तू है महान, तू अनन्त शक्तिवाला है ।
सब के अन्दर रहकर सदा, ज्ञान प्रेरणा वाला है ॥

आ नो मित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम् । मध्वा रजांसि सुक्रतू ॥
उरुशंसा नमोवृधा मह्ना दक्षस्य राजथः । द्राघिष्ठाभिः शुचिव्रता ॥
गृणाना जमदग्निना योनावृतस्य सीदतम् । पातं सोममृतावृधा ॥५॥

हे मित्र हे वरुण सींचो, प्रकाश-पथ को तुम हमारे ।
दिव्यानन्द मधु व्यवहार से, भरे हों कर्म हमारे ॥
वरुण शक्तियां मित्र विनय से, हमें बढ़ाते हैं बलवान ।
शुभ कर्मों की करें प्रेरणा, बल के स्वामी हैं मतिमान ॥
दृढ़ संकल्पों वाले वर के, मन में मित्र वरुण ही रहते ।
सोम पान कर दिव्य शक्ति से, परम सत्य को कहते ॥

आ याहि सुषुमा हि त इन्द्र सोमं पिबा इमम् । एदं बर्हिः सदो मम ॥

आ त्वा ब्रह्मयुजा हरी वहतामिन्द्र केशिना । उप ब्रह्माणि नः शृणु ॥

ब्रह्माणस्त्वा युजा वयं सोमपामिन्द्र सोमिनः । सुतावन्तो हवामहे ॥६॥

हे इन्द्र आ तेरे लिए, आनन्दरस तैयार किया ।
इसको पी उस मन में आ, जिसने तुझको प्यार किया ॥
तपस्वी नर की इन्द्रियां मन, तप का साधन करती हैं ।
उन्नति पथ की ओर ले जातीं, वेदज्ञान तम हरती हैं ॥
ज्ञान भरे सुन्दर मन वाली, सोम का संचय करती हैं ।
यही इन्द्रियां शुभ कर्मों से, इन्द्र को बुलाया करती हैं ॥

इन्द्राग्नी आ गतं सुतं गीर्भिर्नभो वरेण्यम् । अस्य पातं धियेषिता ॥

इन्द्राग्नी जरितुः सचा यज्ञो जिगाति चेतनः । अया पातमिमं सुतम् ॥

इन्द्रमग्निं कविच्छदा यज्ञस्य जूत्या वृणे । ता सोमस्येह तृम्पताम् ॥७॥

हे इन्द्र हे अग्नि शक्ति, परमानन्द रस पान करो ।
भक्तिगीतों से जिसे बनाया, विचारशक्ति प्रदान करो ॥
विचारशक्ति से ही कवि ने, भक्ति गीत निर्माण किया ।
उसी मनोहर रस को आकर, इन्द्र अग्नि ने पान किया ॥
हे इन्द्र हे अग्ने तुम से, यज्ञ भाव को पाया है ।
पान करो इस अमृत रस का, जो तुम से आया है ॥
मेधावी रक्षक इन्द्र अग्नि को, यज्ञभाव से अपनाऊँ ।
दिव्य शक्तियां भर भर, परमानन्द रस पान कराऊँ ॥

इति द्वितीयः खण्डः ।

उच्चा ते जातमन्धसो दिवि सद्भूम्या ददे । उग्रं शर्म महि श्रवः ॥

स न इन्द्राय यज्यवे वरुणाय मरुद्भ्यः । वरिवोवित् परि स्रव ॥

एना विश्वान्यर्य आ द्युम्नानि मानुषाणाम् । सिषासन्तो वनामहे ॥८॥

हे सोम तेरे अन्न में, कल्याणकारी ज्ञान है।
उसको खा मैं पा रहा, जो अमृतरूप महान है॥
हे सोमरस तू बरस बरस, मेरे मन को ज्ञान दे।
चिति शक्ति जो ले सकती, उस ही धन का दान दे॥
उन्नति पथ के नेता सोम, ध्यान तेरा हम करते हैं।
सोने जैसी वस्तु पाने को, गान तेरा हम करते हैं॥

पुनानः सोम धारयापो वसानो अर्षसि।
आ रत्नधा योनिमृतस्य सीदस्युत्सो देवो हिरण्ययः॥
दुहान ऊधर्दिव्यं मधु प्रियं प्रत्नं सधस्थमासदत्।
आपृच्छ्यं धरुणं वाज्यर्षसि नृभिर्धौतो विचक्षणः॥९॥
हे सोम तेरी धाराएँ, सब कर्मों में रहती हैं।
सारी शोभाओं के संग, दिव्य सुखों से बहती हैं॥
भक्त लोग हैं उसे बनाते, स्वयं प्रकट हो देख रहा।
शक्तिशाली मधु का साथी, सोम दिव्यता से दुहा॥

प्र तु द्रव परि कोशं नि षीद नृभिः पुनानो अभि वाजमर्ष।
अश्वं न त्वा वाजिनं मर्जयन्तोऽच्छा बर्ही रशनाभिर्नयन्ति॥
स्वायुधः पवते देव इन्दुरशस्तिहा वृजना रक्षमाणः।
पिता देवानां जनिता सुदक्षो विष्टम्भो दिवो धरुणः पृथिव्याः॥
ऋषिर्विप्रः पुरएता जनानामृभुर्धीर उशना काव्येन।
स चिद्विवेद निहितं यदासामपीच्यां३ गुह्यं नाम गोनाम्॥१०॥
हे परमानन्द तू आगे बढ़कर, मेरे मन में आता जा।
भक्त जन ही तुझे साधते, उन के ऊपर छाता जा॥
शक्तिशाली घोड़े को जैसे, बांध काम करवाते हैं।
ज्ञान शक्ति से तुझे शुद्ध कर, संयम से अंदर लाते हैं॥
दिव्य गुणों का दाता, इन्द्र ही पालन करता है।
विघ्नविनाशक ज्योतिवाला, साधन में पावनता भरता है॥
इन्द्रियों के ऊपर ज्ञानी, नेता धीर मनस्वी होता है।
वही वेदवाणी का ज्ञाता, अज्ञान अंधेरा खोता है॥

इति तृतीयः खण्डः।

अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धा इव धेनवः।
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः ॥
न त्वावाँ अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते।
अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे ॥११॥
बिना दुहाई गउएँ जैसे बछड़े के ढिग गमन करें।
सबके ज्ञाता सबके दर्शक, तुझको हो हम बरण करें॥
हे इन्द्र तू है ईश अनुपम, तू दिव्य, भौतिक से परे।
हे ज्ञानसाधक, इन्द्रिय जय को, तेरा आह्वान करें॥

कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता॥
कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्सदन्धसः। दृढा चिदारुजे वसु॥
अभी षु णः सखीनामविता जरितॄणाम्। शतं भवास्यूतये ॥१२॥
किस ज्ञान और वैराग्य से, अग्नि मेरा सहयोग दे।
कौन रक्षा शक्ति बल से, हमारी उन्नति में योग दे॥
इन्द्र को प्रसन्न करता, कौन सत्यानन्द है।
आनन्द पाने के लिए, कौन धन उत्तम अमन्द है॥
हे इन्द्र है तू मित्र हमारा, भक्तों की रक्षा करता है।
उन्नति पथ को ले जाने को, शत शत रूप तू धरता है॥

तं वो दस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः।
अभि वत्सं न स्वसरेषु धेनव इन्द्रं गीर्भिर्नवामहे॥
द्युक्षं सुदानुं तविषीभिरावृतं गिरिं न पुरुभोजसम्।
क्षुमन्तं वाजं शतिनं सहस्रिणं मक्षू गोमन्तमीमहे ॥१३॥
उस सुन्दर शत्रुनाशक को, स्तुति गीतों से बुलाते हैं।
गौएँ जैसे बछड़े को पातीं, हम ज्ञान मस्त को पाते हैं॥
हम चाहे सुख सम्पत्ति, जो दिव्य गुणों का दान करे।
गो आदि सम पालन करती आश्रय दे बलवान करे॥

तरोभिर्वो विदद्वसुमिन्द्रं सबाध ऊतये।
बृहद्गायन्तः सुतसोमे अध्वरे हुवे भरं न कारिणम्॥
न यं दुध्रा वरन्ते न स्थिरा मुरो मदेषु शिप्रमन्धसः।
य आदृत्या शशमानाय सुन्वते दाता जरित्र उक्थ्यम् ॥१४॥

यज्ञ परमानन्द हित में, जो विघ्नकारी आएगा।
उस से इन्द्र बचाएगा, जो गीत प्रभु के गाएगा॥
ज्ञान ज्योति से चमकता, इन्द्र तम से दूर है।
भक्त हृदय का अज्ञान हर के, ज्ञान देता पूर है॥

इति चतुर्थ खण्डः।

स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया। इन्द्राय पातवे सुतः॥
रक्षोहा विश्वचर्षणिरभि योनिमयोहते। द्रोणे सधस्थमासदत्॥
वरिवोधातमो भुवो मंहिष्ठो वृत्रहन्तमः। पर्षि राधो मघोनाम्॥१५॥

हे सोम परमानन्द रस की, तू सदा धारा बहा।
इन्द्रहित तुझ को बताया, पान तू उस को करा॥
विघ्ननाशक दूरदर्शी सोम, मूल को नहीं त्यागता।
शुभकर्म वाले घर में बसा, इन्द्र की है भागता॥
हे इन्द्र वरणे योग्य तू ही, ज्ञान धन का सार है।
कामादि राक्षस नाश कर, घनशील धन आधार है।

पवस्व मधुमत्तम इन्द्राय सोम क्रतुवित्तमो मदः। महि द्युक्षतमो मदः॥
यस्य ते पीत्वा वृषभो वृषायतेऽस्य पीत्वा स्वर्विदः।
स सुप्रकेतो अभ्यक्रमीदिषोऽच्छा वाजं नैतशः॥१६॥

ज्ञान कर्म की शक्ति वाले, परमानन्द तू आता जा।
महान तेजस्वी शक्ति वाले, शक्ति को बरसाता जा॥
परम सुखदाता तुझ को पीकर, शक्तिवाला शक्ति बढ़ाता।
वह ज्ञानी बन अश्व वेग सम, इष्ट लाभ करता जाता॥

इन्द्रमच्छ सुता इमे वृषणं यन्तु हरयः।
श्रुष्टे जातास इन्दवः स्वर्विदः॥
अयं भराय सानसिरिन्द्राय पवते सुतः।
सोमो जैत्रस्य चेतति यथा विदे॥
अस्येदिन्द्रो मदेष्वा ग्राभं गृभ्णाति सानसिम्।
वज्रं च वृषणं भरत् समप्सुजित्॥१७॥

कल्याण हित उत्पन्न हुआ, सुख का दिलाने वाला।
सोम इन्द्र को है मिला, मनहर कहाने वाला।।
सब का पालन करने को, इन्द्र के हित सोम बनता।
सत्य ज्ञान का देने वाला, विजयी भक्त में ज्योति तनता।।
परमानन्द का लाभ लेने, इन्द्र सोम को साथ लेता।
ज्ञान क्रिया विश्वास शक्ति, साथ ले सुख सोम देता।।

पुरोजिती वो अन्धसः सुताय मादयित्नवे।
अप श्वानं श्नथिष्टन सखायो दीर्घजिह्वयम्।।
यो धारया पावकया परिप्रस्यन्दते सुतः। इन्दुरश्वो न कृत्व्यः।।
तं दुरोषमभी नरः सोमं विश्वाच्या धिया।
यज्ञाय सन्त्वद्रयः।।१८।।
मेरे विचारों में अन्नमय, जीवन विजय का देने हारा।
लोभ का कर नाश बचाओ, सोम के आनन्द द्वारा।।
कुत्ता जीभ दिखाकर जैसे, घर घर शोर मचाता है।
ऐसे लोभ को मार भगाओ, तब विजय सोम से पाता है।।
परमानन्द से सिद्ध किया जो, पावन झर-झर झरता है।
शीघ्र गति घोड़े जैसा, विजय लाभ वह करता है।।
विश्वव्यापी बुद्धि पा जो, पावन यज्ञ भावों से भरा।
सोम को वह भक्त पाता, जो उदार पर्वत सम खड़ा।।

अभि प्रियाणि पवते चनोहितो नामानि यह्वो अधि येषु वर्धते।
आ सूर्यस्य बृहतो बृहन्नधि रथं विष्वञ्चमरुहद्विचक्षणः।।
ऋतस्य जिह्वा पवते मधु प्रियं वक्ता पतिर्धियो अस्या अदाभ्यः।
दधाति पुत्रः पित्रोरपीच्यां३ नाम तृतीयमधि रोचने दिवः।।
अव द्युतानः कलशाँ अचिक्रदन्नृभिर्येमाणः कोश आ हिरण्यये।
अभी ऋतस्य दोहना अनूषताधि त्रिपृष्ठ उषसो वि राजसि।।१९।।
अन्न की संजीवनी शक्ति वाला, सोम जिन से आगे जाता।
उन्हीं रूपों में दर्शन देकर, सूर्य-रथ में स्थान पाता।।
परम सत्य से मधु पाता है, इस का पालक सब का स्वामी।
सोम उस से जन्म पाकर, कांति लोक का बनता गामी।।

यह चमकता सोम गाता, भक्त हृदय मैं समाता।
परम सत्य हित प्रण, उषा में भक्त गीत गीता॥

इति पञ्चमः खण्डः।

यज्ञायज्ञा वो अग्नये गिरागिरा च दक्षसे।
प्रप्र वयममृतं जातवेदसं प्रियं मित्रं न शंसिषम्॥
ऊर्जो नपातं स हिनायमस्मयुर्दाशेम हव्यदातये।
भुवद्वाजेष्वविता भुवद्वृध उत त्राता तनूनाम्॥२०॥
यज्ञ अग्नि के लिए हो, स्तुति गीत उस का बल बढायें।
हम अमर सर्वज्ञ प्रभु को, अपना प्यारा मित्र बनायें॥
बल को कभी न घटने देता, हम सब का सदा हितकारी।
उस अग्नि के सब कुछ अर्पण, जो संघर्षों में रक्षाकारी॥

एह्यू षु ब्रवाणि तेऽग्न इत्थेतरा गिरः। एभिर्वर्धास इन्दुभिः॥
यत्र क्व च ते मनो दक्षं दधस उत्तरम्। तत्र योनिं कृणवसे॥
न हि ते पूर्तमक्षिपद्भुवन्नेमानां पते। अथा दुवो वनवसे॥२१॥
हे नेता तेरे स्वागत के, सुन्दर गीत सदा मैं गाती।
आता है तू मधुर वचन से, उन से ही हूं तुझे बुलाती॥
हे अग्ने यह मन की शक्ति, जब साधक की बढ़ जाती।
रहता है तू वहीं जहां, संकल्प-शक्ति दृढ़ हो जाती॥
हे इन्द्र तू पूर्ण बना, इन अंगों को कभी हटाता।
मन शक्ति विकसित करने, वाले साधक को अपनाता॥

वयमु त्वामपूर्व्य स्थूरं न कच्चिद्भरन्तोऽवस्यवः।
वज्रिञ्चित्रं हवामहे॥
उप त्वा कर्मन्नूतये स नो युवोग्रश्चक्राम यो धृषत्।
त्वामिध्यवितारं ववृमहे सखाय इन्द्र सानसिम्॥२२॥
हे अद्भुत हे शक्तिशाली, इन्द्र तुम्हें हम गाते हैं।
बैल पालता कोई जसे, रक्षा हित तव यश गाते हैं॥
तू अजर, तू वीर्यशाली, दुर्भावना का नाशकारी।
हम मित्र तेरी रक्षा को, बनते उन्नति हित कर्मकारी॥

अधा हीन्द्र गिर्वण उप त्वा काम ईमहे ससृग्महे।
उदेव ग्मन्त उदभिः॥
वार्ण त्वा यव्याभिर्वर्धन्ति शूर ब्रह्माणि।
वावृध्वांसं चिदद्रिवो दिवेदिवे॥
युञ्जन्ति हरी इषिरस्य गाथयोरौ रथ उरुयुगे वचोयुजा।
इन्द्रवाहा स्वर्विदा॥२३॥
पानी मिलता ज्यों पानी में, हम तुझ में होवें लीन।
तू ही लक्ष्य मनोहर सब का, तुझ में बसें ज्यों जलमीन॥
तुझ को गाते प्रेम बढ़ाते, ब्रह्मज्ञान से तुझ को पायें।
नदियां सागर में मिल जातीं, हम तुझ में मिल जायें॥
इन्द्र बैठता देहगाड़ी पर, ज्ञान कर्म घोड़ों के साथ।
ईशस्तुति से शक्ति पाकर, परमानन्द का ले हाथ॥
ज्ञान कर्म के घोड़ों वाले, रथ को इन्द्र चलाता है।
ईशस्तुति से मस्ती पाकर, परमानन्द रस पाता है।

इति षष्ठः खण्डः। इति प्रथमोऽर्धः॥

अथ द्वितीयोऽर्धः।

पान्तमा वो अन्धस इन्द्रमभि प्र गायत।
विश्वासाहं शतक्रतुं मंहिष्ठं चर्षणीनाम्॥
पुरुहूतं पुरुष्टुतं गाथान्यां३ सनश्रुतम्। इन्द्र इति ब्रवीतन॥
इन्द्र इन्नो महोनां दाता वाजानां नृतुः। महाँ अभिज्ञ्वा यमत्॥१॥
हे नरो दिव्यानन्द भोगो, इन्द्र के तुम गीत गाओ।
पूजनीय कर्मकर्ता राजा की प्रजा तुम बन जाओ॥
इन्द्रियाँ हैं जिस को गातीं, और बुलाती हैं सदा।
जो हमारे शब्द सुनता, उसी को इन्द्र गाती हैं सदा॥
इन्द्र ही महान् है, इन्द्र शक्ति दान करता।
सब को चलाता, सर्वज्ञाता सभी पर राज करता॥

प्र व इन्द्राय मादनं हर्यश्वाय गायत। सखायः सोमपाव्ने॥
शंसेदुक्थं सुदानव उत द्युक्षं यथा नरः। चकृमा सत्यराधसे॥
त्वं न इन्द्र वाजयुस्त्वं गव्युः शतक्रतो। त्वं हिरण्ययुर्वसो॥२॥

हे साथियो उस सोम के, आनन्ददायी गान गाओ।
अंग सारे जिसके साधन, उस आत्मा के पास जाओ।।
श्रेष्ठ दानी की स्तुति से, श्रेष्ठ धन का लाभ होता।
उस सत्य धन इन्द्र से हो, सत्य धन का लाभ होता।।
हे इन्द्र तू ही ज्ञान प्रदाता, सारे काम बनाता है।
सुन्दर सुख ऐश्वर्य का दानी, सब में आलोक फैलाता है।।

वयमु त्वा तदिदर्था इन्द्र त्वायन्तः सखायः।
कण्वा उक्थेभिर्जरन्ते।।
न घेमन्यदा पपन वज्रिन्नपसो नविष्टौ। तवेदु स्तोमैश्चिकेत।।
इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहयन्ति।
यन्ति प्रमादमतन्द्राः।।३।।
हे ज्योति वाली बुद्धि, तुझ को पाने का यत्न करें।
स्तुति भरे सुन्दर गीतों से, नित नित तेरा स्तवन करें।।
शुभ काम के प्रारम्भ में, हे इन्द्र तुझ को मैं बुलाता।
तेरे प्रशंसा गीत गाकर, मैं तुझे पहिचान पाता।।

इन्द्राय मद्वने सुतं परि ष्टोभन्तु नो गिरः। अर्कमर्चन्तु कारवः।।
यस्मिन् विश्वा अधि श्रियो रणन्ति सप्त संसदः।
इन्द्रं सुते हवामहे।।
त्रिकद्रुकेषु चेतनं देवासो यज्ञमत्नत। तमिद्वर्धन्तु नो गिरः।।४।।
आनन्द में भर अंग मेरे, इन्द्र सम्मुख गीत गायें।
लक्ष्य को जो सिद्ध करते, सरस सोम वे ही पायें।।
सात छेद में रहने वाली, इन्द्रियों का सुखदाता है।
योद्धा यश में ऋतंभरा पा के, इन्द्र के गुण गाता है।।
जब अलौकिक अंग बनते, ज्ञान यश का यजन करें।
उसी यज्ञ में मिलकर सारे, उसी प्रभु का भजन करें।।

इति प्रथमः खण्डः।

अयं त इन्द्र सोमो निपूतो अधि बर्हिषि। एहीमस्य द्रवा पिब।।
शाचिगो शाचिपूजनायं रणाय ते सुतः। आखण्डल प्र हूयसे।।
यस्ते शृङ्गवृषो णपात् प्रणपात् कुण्डपाय्यः।
न्यस्मिन् दध्र आ मनः।।५।।

हे इन्द्र आकर पान कर ले, दिव्यानन्द तेरा भाग है।
अन्तःकरण में जन्म पाया, इसमें तेरा अनुराग है॥
विचार शक्ति तुझ को पाती तू पूज्य माना जा रहा।
अज्ञानहारी परमानन्द पीने, तुझ को बुलाया जा रहा॥
सब से उत्तम वर्षा करता, तुझे न गिरने देता।
उसको मन से पी ले स्वामी, जिस में तू रुचि लेता॥

आ तू न इन्द्र क्षुमन्तं चित्रं ग्राभं सं गृभाय।
महाहस्ती दक्षिणेन॥
विद्मा हि त्वा तुविकूर्मिं तुविदेष्णं तुवीमघम्। तुविमात्रमवोभिः॥
न हि त्वा शूर देवा न मर्तासो दित्सन्तम्।
भीमं न गां वारयन्ते॥६॥

हे ज्ञान और ऐश्वर्यदाता, तू हमारा साथ दे।
रक्षा हमारी के लिए, तू अपना शक्ति हाथ दे॥
वह भयानक सांड जैसे, उथल-पुथल कर नाश करता।
इन्द्र तू दुर्जय बना, दुर्भावना का नाश करता॥
तेरा भयंकर रूप लख, कम्पित सभी संसार है।
तेरे सम्मुख नर क्यों टिके, देव भी लाचार है॥

अभि त्वा वृषभा सुते सुतं सृजामि पीतये। तृम्पा व्यश्नुही मदम्॥
मा त्वा मूरा अविष्यवो मोपहस्वान आ दभन्।
मा कीं ब्रह्मद्विषं वनः॥
इह त्वा गोपरीणसं महे मन्दन्तु राधसे।
सरो गौरो यथा पिब॥७॥

हे सुखवर्षक दिव्यानन्द को, तेरे लिए बनाता हूँ।
इस को पीकर मस्त रहो, हे आत्म तुझे बुलाता हूँ॥
भोग विलासी तुझे न जानें, तेरा नाश न कर पायें।
ज्ञान शत्रु तेरी सेवा का, अवसर कभी न ले पायें॥
सब अंगों में रहता है तू, ऐश्वर्य आनन्द का दान करें।
गोरा हिरण सरोवर पर पीता, तू आनन्द-रस पान करे॥

इदं वसो सुतमन्धः पिबा सुपूर्णमुदरम्। अनाभयिन् ररिमा ते॥
नृभिर्धौतः सुतो अश्नैरव्या वारैः परिपूतः।
अश्वो न निक्तो नदीषु॥

तं ते यवं यथा गोभिः स्वादुमकर्म श्रीणन्तः ।
इन्द्र त्वास्मिन्त्सधमादे ॥८॥

हे इन्द्र बसाने वाला तू है, परमानन्द रस हुआ तैयार ।
तू निर्भय है तेरे पीने को, देते हैं इसका उपहार ॥
योग शक्तियों से निकला है, ज्ञान भावना ने धोया ।
आत्म ज्योति से दान इसी का, तम प्रमाद है खोया ॥
अब यह काम की शक्ति देगा, इसका निर्मल रूप है ।
नदी नहाए सुन्दर घोड़े सा, आत्म नगर का भूप है ॥
जौ में हम ने दूध मिलाया, इस को स्वादु बनाया है ।
ज्ञान रसों में तेरे सोम को, हम ने इन्द्र पकाया है ॥

इति द्वितीयः खण्डः ।

इदं ह्यन्वोजसा सुतं राधानां पते । पिबा त्वा३स्य गिर्वणः ॥
यस्ते अनु स्वधामसत् सुते नि यच्छ तन्वम् ।
स त्वा ममत्तु सोम्य ॥
प्र ते अश्नोतु कुक्ष्योः प्रेन्द्र ब्रह्मणा शिरः ।
प्र बाहू शूर राधसा ॥९॥

दिव्य रस हम ने बनाया, हे पूज्य तप और जाप से ।
आप स्वामी सिद्धियों के, कह रहे हम आप से ॥
हे इन्द्र तू है लीन, यज्ञीय परमानन्द में ।
पात्र हो तुम अमर रस के, बना ज्ञान अमन्द से ॥
ज्ञान कर्म तुझे आनन्द दें, हे इन्द्र दोनों ओर से ।
ब्रह्मज्ञान सिर में रहे, ऐश्वर्य करों की कोर से ॥
दिव्यानन्द जो भोगता, अपने पावन ज्ञान से ।
कर्म उसको मदमस्त करता, आनन्द के अनुदान से ॥

आ त्वेता नि षीदतेन्द्रमभि प्र गायत । सखाय स्तोमवाहसः ॥
पुरूतमं पुरूणामीशानं वार्याणाम् । इन्द्र सोमे सचा सुते ॥
स घा नो योग आ भुवत् स राये स पुरन्ध्या ।
गमद् वाजेभिरा स नः ॥१०॥

आओ भक्तो मिल कर बैठें, गुण गायें उस ईश के।
सुख सम्पत्ति के देने वाले, तमहारो जगदोश के॥
सब धनियों में बड़ा धनी, दुष्ट भाव का नाश करे।
उसी इन्द्र को सोम मिले, जो बुद्धि प्रकाश करे॥
उसी इन्द्र से ज्ञान मिले, दान भाव से धन लावें।
वही शरीर को शक्ति देता, सारे बल उस से पावें॥

योगेयोगे तवस्तरं वाजेवाजे हवामहे। सखाय इन्द्रमूतये॥
अनु प्रत्नस्यौकसो हुवे तुविप्रतिं नरम्। यं ते पूर्वं पिता हुवे॥
आ घा गमद्यदि श्रवत्सहस्रिणोभिरूतिभिः।
वाजेभिरुप नो हवम्॥११॥

जीवन पथ पर आगे बढ़ने, जब मिल कर जाते हैं।
ज्ञान शक्ति को जब चाहे, इन्द्र बली को हम बुलाते हैं॥
सदा सदा सत्य रूप तक, जो इन्द्र हमें पहुंचाता है।
उसी इन्द्र को सदा पुकारूं, हम से पहलों का त्राता है॥
इन्द्र हमारी पुकार सुने, निकट हमारे आ जाए।
अपनी हजारों शक्ति लेकर, ज्ञान मेघ सा छाए॥
हे साधक तू निर्भय होगा, भय न तुझे सताएगा।
मन अपना बलवान बना ले, सबसे आगे आएगा॥

इन्द्र सुतेषु सोमेषु क्रतुं पुनीष उक्थ्यम्।
विदे वृधस्य दक्षस्य महाँ हि षः॥
स प्रथमे व्योमनि देवानां सदने वृधः।
सुपारः सुश्रवस्तमः समप्सुजित्॥
तमु हुवे वाजसातय इन्द्रं भराय शुष्मिणम्।
भवा नः सुम्ने अन्तमः सखा वृधे॥१२॥

हे इन्द्र तू सिद्ध, परमानन्द से ज्ञान लेता छान है।
ज्ञान सम्पत्ति दान करता, जो प्रशंसनीय महान है॥
वह श्रेष्ठ इन्द्र दिव्यशक्तियों में, शक्ति बल दिखलाता।
दुःखसागर से पार करता, यश ज्ञान कर्म में सफल बनाता॥
मैं पुकारूं उसी इन्द्र को, उस से ज्ञान बल पाऊँ।
अपने सुख और उन्नति पथ में, उसको अपना मित्र बनाऊँ॥

इति तृतीयः खण्डः।

एना वो अग्निं नमसोर्जो नपातमा हुवे ।
प्रियं चेतिष्ठमरतिं स्वध्वरं विश्वस्य दूतममृतम् ॥
स योजते अरुषा विश्वभोजसा स दुद्रवत् स्वाहुतः ।
सुब्रह्मा यज्ञः सुशमी वसूनां देवं राधो जनानाम् ॥१३॥
अपना आपा अर्पण करके, अग्निरूप प्रभु को ध्याऊँ ।
विश्वदूत प्रिय अमर चेतन को, अपने शुभ कर्मों में पाऊँ ॥
प्रभु अग्नि सब भोग पदार्थ, शक्ति से दिलवाता ।
सच्चे मन से उसे बुलाऊँ, तो वह दया दिखाता ॥
उत्तम ज्ञान का देने वाला, ज्ञानी हमें बनाएगा ।
अपने भक्तों मित्रों को, सुख सम्पत्ति दिलवाएगा ॥

प्रत्यु अदर्श्यायत्यू३च्छन्ती दुहिता दिवः ।
अपो मही वृणुते चक्षुषा तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी ॥
उदुस्त्रियाः सृजते सूर्यः सचा उद्यन्नक्षत्रमर्चिवत् ।
तवेदुषो व्युषि सूर्यस्य च सं भक्तेन गमेमहि ॥१४॥
प्रकाश लोक से आकर, चेतना अन्धकार को काट रही ।
प्रकाश फैला कर चारों ओर, नेत्री बन तम को छांट रही ॥
तेजभरा भानु जब नभ से, ज्ञान प्रकाश फैलाता है ।
किरणें संग ज्ञान शक्ति से, प्रेरक कर्म कराता है ॥

इमा उ वां दिविष्टय उस्रा हवन्ते अश्विना ।
अयं वामह्वेऽवसे शचीवसू विशंविशं हि गच्छथः ॥
युवं चित्रं ददथुर्भोजनं नरा चोदेथां सूनृतावते ।
अर्वाग्रथं समनसा नि यच्छतं पिबतं सोम्यं मधु ॥१५॥
अश्विद्यो ज्ञान को जगती किरण, तुम्हारा करती आवाहन ।
तुम हो रक्षक स्तुति करूँ मैं, करते तुम शक्ति का दान ॥
हे वीर नेता अश्विद्यो, तुम भोगों के धारक हो ।
परमानन्द को भोगो प्यारे, मेरे जीवन के चालक हो ॥

इति चतुर्थः खण्डः ।

अस्य प्रत्नामनु द्युतं शुक्रं दुदुह्रे अह्रयः । पयः सहस्रसामृषिम् ॥
अयं सूर्य इवोपदृगयं सरांसि धावति । सप्त प्रवत आ दिवम् ॥

अयं विश्वानि तिष्ठति पुनानो भुवनोपरि ।
सोमो देवो न सूर्यः ॥१६॥

सोम कांति से आकर्षित, भक्त जन हो जाते रहे ।
दृढ़ चित्त हो शक्तिशाली, सद् ज्ञान को पाते रहे ॥
सूर्य सम सोम दर्शक, हमारे हृदय सर में आ रहा ।
मानों हमारी इन्द्रियों को, आलोक पथ दिखला रहा ॥
यह दिव्य देखो सोम, रवि सम चमचमाता आ रहा ।
लोक लोकान्तर का बन के शासक, शीघ्र बढ़ता जा रहा ॥

एष प्रत्नेन जन्मना देवो देवेभ्यः सुतः । हरिः पवित्रे अर्षति ॥
एष प्रत्नेन मन्मना देवो देवेभ्यस्परि । कविर्विप्रेण वावृधे ॥
दुहानः प्रत्नमित्पयः पवित्रे परि षिच्यसे ।
क्रन्द देवाँ अजीजनः ॥१७॥

सदा से यह दिव्य मनोहर, प्रकाशरूप दिखा रहा ।
इन्द्रियों में प्रकट होकर, शुद्ध मन में आ रहा ॥
मनन शक्ति से दिव्य सोम, अगों में छा जाता है ।
कर्मकारिणी मनीषा से, नित नित बढ़ता जाता है ॥
हे सोम सदा तू ज्ञान दूध से, अन्तःकरण को तरल करे ।
सारे जग के काम करा के, जीवन पथ को सरल करे ॥

उप शिक्षापतस्थुषो भियसमा धेहि शत्रवे । पवमान विदा रयिम् ॥
उपो षु जातमप्तुरं गोभिर्भङ्गं परिष्कृतम् ।
इन्दुं देवा अयासिषुः ॥
उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे । अभि देवाँ इयक्षते ॥१८॥

हे पवित्र सोम तू, पतितों को ऊपर ले जाता ।
द्वेषभाव को दूर भगा, ऐश्वर्य हमें है दिलवाता ॥
सुन्दर रची कर्म की कर्ता स्तुतियों का जब गान किया ।
दिव्य इन्द्रियों ने मेरी, तब परमानन्द का पान किया ॥
हे वीरो तुम पान करो, इस बहती रस की धारा का ।
त्याग भाव की शिक्षा देकर, गुण गाती प्राणधारा का ॥

इति पञ्चमः खण्डः ।

प्र सोमासो विपश्चितोऽपो नयन्त ऊर्मयः । वनानि महिषा इव ॥
अभि द्रोणानि बभ्रवः शुक्रा ऋतस्य धारया ।
वाजं गोमन्तमक्षरन् ॥
सुता इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः ।
सोमा अर्षन्तु विष्णवे ॥१६॥

बड़े बड़े वाहन जैसे, खाना पीना सब को देते ।
ज्ञान भरी आनन्द लहर से, सभी काम हम कर लेते ॥
कुछ कुछ धूमिल परम सत्य को, सोम की धारा बहती है ।
शोभाशाली इन्द्रियों में, ज्ञान की आभा छा रहती है ॥
भक्त अपनी साधना से, सोम का जब पान करता ।
इन्द्र वायु वरुण, विष्णु, मरुत् शक्ति दान करता ॥

प्र सोम देववीतये सिन्धुर्न पिप्ये अर्णसा ।
अंशोः पयसा मदिरो न जागृविरच्छा कोशं मधुश्चुतम् ॥
आ हर्यतो अर्जुनो अत्के अव्यत प्रियः सूनुर्न मर्ज्यः ।
तमीं हिन्वन्त्यपसो यथा रथं नदीष्वा गभस्त्योः ॥२०॥

हे सोम सागर है भरता, दिव्य गुण पाने को ।
सोमपायी भक्त है तत्पर, परमानन्द रस लाने को ॥
वह पवित्र सोम सुत सम, पालने से ही बढ़े ।
साधकों पर ज्ञान लहरें, कर्म प्रेरक हो चढ़ें ॥

प्र सोमासो मदच्युतः श्रवसे नो मघोनाम् । सुता विदथे अक्रमुः ॥
आदीं हंसो यथा गणं विश्वस्यावीवशन्मतिम् ।
अत्यो न गोभिरज्यते ॥
आदीं त्रितस्य योषणो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः ।
इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥२१॥

ज्ञान यज्ञ में सिद्ध किया रस, परमानन्द बहाता है !
ऐश्वर्यशाली सारे जनों को, ज्ञान का धन पहुंचाता है ॥
सोम सब का प्राण बनकर, ज्ञानसाधन में बसा है ।
शीघ्रगामी घोड़े सम, इन्द्रियों में भी रमा है ॥
इन्द्र के हित इस रस को, भक्त परम सत्य से पाते हैं ।
साधन सदा पक्के हैं उनके, जो तीन लोक दर्शाते हैं ॥

परम सत्य तीनों लोकों का, उस से आनन्द रस आता।
प्रेमो दृढ़ साधन वाला, उसे इन्द्र के हित है लाता॥

अया पवस्व देवयू रेभन् पवित्रं पर्येषि विश्वतः।
मधोर्धारा असृक्षत॥
पवते हर्यतो हरिरति ह्वरांसि रंह्या।
अभ्यर्ष स्तोतृभ्यो वीरवद्यशः॥
प्र सुन्वानायान्धसो मर्तो न वष्ट तद्वचः।
अप श्वानमराधसं हता मखं न भृगवः॥२२॥

दिव्य गुणों के स्वामी सोम, मधुर रसधारा बन के आ।
अनाहत ध्वनि को गुंजाता, हृदयघट में छन के आ॥
मेरा प्यारा सुन्दर सोम. पाप ताप का नाश करे।
भक्तजनों को वीर मानकर, सच्चा यश प्रकाश करे॥
अनाहत सोम का रस वाणी, संजीवन तत्त्व बनाती है।
कुत्ता-वृत्ति दूर भगा कर, त्यागभाव सिखलाती है॥
हे भक्तो तुम दूर भगाओ कुत्ते सम लालच भावों को।
प्राप्त करो तुम सोम से उत्पन्न, त्यागभरे सद् भावों को॥

इति द्वितीयोऽर्धः।

इति प्रथमः प्रपाठकः।

अथ द्वितीयः प्रपाठकः

(प्रथमोऽर्धः)

पवस्व वाचो अग्रियः सोम चित्राभिरूतिभिः।
अभि विश्वानि काव्या ॥
त्वं समुद्रिया अपोऽग्रियो वाच ईरयन्। पवस्व विश्वचर्षणे ॥
तुभ्येमा भुवना कवे महिम्ने सोम तस्थिरे।
तुभ्यं धावन्ति धेनवः ॥१॥

हे सोम रक्षा शक्तिवाली, वाणी का प्रचार कर।
कांति भरी रचनाओं से, साहित्य का भण्डार भर ॥
सब को दिखाने वाले, वाणियों में ओज भर दे।
श्रेष्ठ कर्मों के लिए, श्रेष्ठ ग्रन्थ प्रकाश कर दे ॥
हे सोम तेरी शक्ति से ही, भुवन खड़े आकाश में।
तेरी महिमा ला रही है, दौड़ नदियाँ प्रकाश में ॥

पवस्वेन्दो वृषा सुतः कृधी नो यशसो जने।
विश्वा अप द्विषो जहि ॥
यस्य ते सख्ये वयं सासह्याम पृतन्यतः। तवेन्दो द्युम्न उत्तमे ॥
या ते भीमान्यायुधा तिग्मानि सन्ति धूर्वणे।
रक्षा समस्य नो निदः ॥२॥

हे वर्षक तू यश दे हम को, इस सारे संसार में।
द्वेष भाव को दूर भगा कर, लगें प्रेम-प्रसार में ॥
आनन्ददाता सोम तेरी, मित्रता हम को मिले।
जीत लें आक्रमणकारी, उत्तम बल से हम खिलें ॥
तू भयंकर शस्त्र वाला, अस्त्र तेरे बलवान हैं।
समाज रिपुओं से बचाओ, तू समर्थ भगवान है ॥

वृषा सोम द्युमाँ असि वृषा देव वृषव्रतः। वृषा धर्माणि दध्रिषे ॥
वृष्णस्ते वृष्ण्यं शवो वृषा वनं वृषा सुतः। स त्वं वृषन् वृषेदसि ॥

अश्वो न चक्रदो वृषा सं गा इन्दो समर्वतः ।
वि नो राये दुरो वृधि ॥३॥
परमानन्द के देने वाले तू ही सुख बरसाता है ।
तू चमकीला सुन्दर बादल, तू सब को हर्षाता है ॥
तू ही वर्षा करे धर्म की, तू ही कर्म कराता है ।
तू ही इन को धारण करता, तू ही शक्तिदाता है ॥
सुख बर्षाने वाले तेरा, भजन सदा सुखरूप है ।
तेरा साधन सुखी बनाता, तू सुखों का भूप है ॥

वृषा ह्यसि भानुना द्युमन्तं त्वा हवामहे । पवमान स्वर्दृशम् ॥
यदद्भिः परिषिच्यसे मर्मृज्यमान आयुभिः । द्रोणे सधस्थमश्नुषे ॥
आ पवस्व सुवीर्यं मन्दमानः स्वायुध । इहो ष्विन्दवा गहि ॥४॥
हे पावक हे सोम, मनोरथ पूरा करने वाला तू ।
तुझे बुलायें सुखलोक के दर्शक, सत्यज्ञान की ज्वाला तू ॥
जीवनसाधक बार बार, तुझे कर्म जल से धोते हैं ।
अन्तःकरण में तू रमता, तुझ से मिल दुःख खोते हैं ॥
हे उत्तम शास्त्रों के धारक, सोम तू बल का दान कर ।
हे आह्लादक मन में आकर, मुझ को शोभावान कर ॥

पवमानस्य ते वयं पवित्रमभ्युन्दतः । सखित्वमा वृणीमहे ॥
ये ते पवित्रमूर्मयोऽभिक्षरन्ति धारया । तेभिर्नः सोम मृडय ॥
स नः पुनान आ भर रयिं वीरवतीमिषम् ।
ईशानः सोम विश्वतः ॥५॥
तू है सोम तू भर शक्ति से, अन्तःकरण में आता है ।
तुझ को हम सब मित्र बनावें, तू ही मन को भाता है ॥
हे सोम तेरी आनन्द लहरें, मन मन्दिर में आती हैं ।
हम को भर दे उन से ही, हम को तो वे भाती हैं ॥
हे सोम हमें ऐश्वर्य भी दे दो, तू ही उसका दाता है ।
तेरी प्रेरणा ही प्रभुता है, तू सब का अधिष्ठाता है ॥

इति प्रथमः खण्डः ।

तेजस्वी इन्द्र संघर्षों में, सदा सदा रक्षा करना।
ज्ञान भरे हो काम करें, सारे विघ्नों को तू हरना॥
वह इन्द्र तम का नाश कर, ज्ञान किरण चमकाता।
दीर्घ दृष्टि हम को देकर, सदा सुकर्मों में है लगाता॥

इन्द्रे अग्ना नमो बृहत् सुवृक्तिमेरयामहे। धिया धेना अवस्यवः॥
ता हि शश्वन्त ईडत इत्था विप्रास ऊतये। सबाधो वाजसातये॥
ता वां गीर्भिर्विपन्यवः प्रयस्वन्तो हवामहे।
मेधसाता सनिष्यवः॥६॥
अंगों भरना ज्ञान का रस हो, इन्द्र प्रभु को नमन करें।
जो ध्यान धारण से रस देता, उस अग्नि में रमन करें॥
मेधावी साधक सम्पत्ति हित, जब जब यत्न किया करता।
उसी इन्द्र अग्नि को गाता, जो सब की रक्षा धन भरता॥
पवित्र ज्ञान पाने को, भक्त जन तुम्हें पुकार रहे।
जीवन पथ में बढ़ने को, शक्ति हित सदा निहार रहे॥

इति द्वितीयः खण्डः।

वृषा पवस्व धारया। मरुत्वते च मत्सरः।
विश्वा दधान ओजसा॥
तं त्वा धर्त्तारमोण्यो३ः पवमान स्वर्दृशम्।
हिन्वे वाजेषु वाजिनम्॥
अया चित्तो विपानया हरिः पवस्व धारया।
युजं वाजेषु चोदय॥१०॥
चितिशक्ति के स्वामी हित, तू हर्ष सरोवर बना हुआ।
सोम है सब का पालन करता, धारारूप में रहे बहा॥
सोम पृथिवी अन्तरिक्ष का, तीनों काल में आधार है।
स्वलोक का दर्शन कराता, ज्ञान बल भण्डार है॥
जो जो करें हम कर्म जग में, ज्ञान ही आधार हो।
हम चाहते इस सोम को, वह मित्र जीवन सार हो॥
यह आकर्षक सोम हृदय में बहे हम पी सकें।
ज्ञान पाकर भक्त जन, योग्य जीवन जी सकें॥

वृषा शोणो अभिकनिक्रदद् गा नदयन्नेषि पृथिवीमुत द्याम् ।
इन्द्रस्येव वग्नुरा शृण्व आजौ प्रचोदयन्नर्षसि वाचमेमाम् ॥
रसाय्यः पयसा पिन्वमान ईरयन्नेषि मधुमन्तमंशुम् ।
पवमान सन्तनिमेषि कृण्वन्निन्द्राय सोम परिषिच्यमानः ॥
एवा पवस्व मदिरो मदायोदग्राभस्य नमयन् वधस्नुम् ।
परि वर्णं भरमाणो रुशन्तं गव्युर्नो अर्ष परि सोम सिक्तः ॥११॥
बलवान इन्द्रियों को गुंजाता, सोम ही है गा रहा ।
इन्द्र से आदेश पा जीवन युद्ध में भक्ति ला रहा ॥
हे रसीले सोम चंचल जन को, नीचे करके विनयी बना ।
हर्ष भरा तू सिंचित सुन्दर, अंग अंग में ज्योति जगा ॥

इति तृतीयः खण्डः ।

त्वामिद्धि हवामहे सातौ वाजस्य कारवः ।
त्वा वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं नरस्त्वां काष्ठास्ववतः ॥
स त्वं नश्चित्र वज्रहस्त धृष्णुया मह स्तवानो अद्रिवः ।
गामश्वं रथ्यमिन्द्र सं किर सत्रा वाजं न जिग्येषु ॥१२॥
हे ईश्वर ऐश्वर्यशाली, ज्ञान लाभ हित तुझे बुलाते ।
विघ्न काल में विजय हित, तुझ रक्षक को ध्यान में लाते ॥
हे पूजनीय इन्द्र तेरी भक्ति से, सब विघ्नों का नाश करें ।
विजय लाभ हित इन्द्रियों में, ज्ञान कर्म प्रकाश करें ॥

अभि प्र वः सुराधसमिन्द्रमर्च यथा विदे ।
यो जरितृभ्यो मघवा पुरूवसुः सहस्रेणेव शिक्षति ॥
शतानीकेव प्र जिगाति धृष्णुया हन्ति वृत्राणि दाशुषे ।
गिरेरिव प्र रसा अस्य पिन्विरे दत्राणि पुरुभोजसः ॥१३॥
हे भक्तो सत्य ज्ञान हित, प्रज्ञा शक्ति को पा लो ।
कई साधनों से समझाता, उसी इन्द्र का ध्यान लगा लो ॥
इन्द्र बड़ा है शक्तिशाली, सेनापति बन विजय पाता ।
भक्तों को आनन्द देकर, सब विघ्नों को मार भगाता ॥

त्वामिदा ह्यो नरोऽपीप्यन् वज्रिन् भूर्णयः ।
स इन्द्र स्तोमवाहस इह श्रुध्युप स्वसरमा गहि ॥

मत्स्वा सुशिप्रिन् हरिवस्तमीमहे त्वया भूषन्ति वेधसः ।
तव श्रवांस्युपमान्युक्थ्य सुतेष्विन्द्र गिर्वणः ॥१४॥
हे शक्तिशाली तुझे भक्तों ने गीत गा रिझाया है।
उनके घर में आकर बस जा, जिन्होंने तुझे बुलाया है॥
हे इन्द्र तेरी ज्ञान-प्रभा, सदा सदा हम मांगते ।
यज्ञों में तेरे संदेशों से, परम सत्य को चाहते ॥

यस्ते मदो वरेण्यस्तेना पवस्वान्धसा । देवावीरघशंसहा ॥
जघ्निर्वृत्रममित्रियं सस्निर्वाजं दिवे दिवे । गोषातिरश्वसा असि ॥
सम्मिश्लो अरुषो भुवः सूपस्थाभिर्न धेनुभिः ।
सीदञ्छ्येनो न योनिमा ॥१५॥
परमानन्द हम चाहते, उस को तू धारा बहा ।
दिव्य भावों को जगाकर, पाप भावों को भगा ॥
तू द्वेष असुरों को भगाकर, ज्ञान बल का दान करता ।
कर्म शक्ति को बढ़ाकर, अंग अंग बलवान करता ॥
हे सोम ! तेजस्वी बाज सम, मूल घर में तू आता ।
पूरी शोभा को दिखाता, जब भक्त तेरे गीत गाता ॥

अयं पूषा रयिर्भगः सोमः पुनानो अर्षति ।
पतिर्विश्वस्य भूमनो व्यख्यद्रोदसी उभे ॥
समु प्रिया अनूषत गावो मदाय घृष्वयः ।
सोमासः कृण्वते पथः पवमानास इन्दवः ॥
य ओजिष्ठस्तमा भर पवमान श्रवाय्यम् ।
यः पञ्च चर्षणीरभि रयिं येन वनामहे ॥१६॥
सोम बल का देने वाला, दान हित है बह रहा ।
इस ने दिया है जन्म, पृथ्वी द्यौ को भी नया ॥
परमानन्द पाने के लिए, प्रिय इन्द्रियाँ जो गान करतीं ।
सोम रस बन के जो आते, यह उसी का पान करतीं ॥
पवमान बलयुत अन्तर्ध्वनि का, आनन्द हम को दान कर ।
ज्ञानेन्द्रियों को जो दिखाता, उस ज्ञान से धनवान कर ॥

वृषा मतीनां पवते विचक्षणः सोमो अह्नां प्रतरीतोषसां दिवः ।
प्राणा सिन्धूनां कलशाँ अचिक्रदविन्द्रस्य हार्दिमाविशन्मनीषिभिः ॥

मनीषिभिः पवते पूर्व्यः कविर्नृभिर्यतः परि कोशाँ असिष्यदत् ।
त्रितस्य नाम जनयन्मधु क्षरन्निन्द्रस्य वायुं सख्याय वर्धयम् ॥
अयं पुनान उषसो अरोचयदयं सिन्धुभ्यो अभवदु लोककृत् ।
अयं त्रिः सप्त दुदुहान आशिरं सोमो हृदे पवते चारु मत्सरः ॥१७॥
बुद्धिदाता क्रान्तिकारी, सोम ज्ञान चमकाता ।
अंग अंग में भर जीवन, इन्द्र अन्तर्नाद गुंजाता ॥
क्रान्तिकारी ज्ञानभरी सोम सुधा, भक्त हृदय में लाते ।
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति में, मित्र सम मन की शक्ति बढ़ाते ॥
ज्ञानशत में सोम बरस, ज्ञान साधनों को चमकाता ।
२१ प्रकार के आनन्द उदित कर, घट का आनन्ददाता ॥

एवा ह्यसि वीरयुरेवा शूर उत स्थिरः । एवा ते राध्यं मनः ॥
एवा रातिस्तुविमघ विश्वेभिर्धायि धातृभिः ।
अधा चिदिन्द्र नः सचा ॥
मो षु ब्रह्मेव तन्द्रयुर्भुवो वाजानां पते ।
मत्स्वा सुतस्य गोमतः ॥१८॥
हे इन्द्र ! वीरता के प्रेमी, तू सारे विघ्न हटाता है ।
तू भी पक्का शूर है स्वामी, तू प्रतिभा का त्राता है ॥
हे सब सम्पत्ति के स्वामी, रक्षा शक्ति निर्माता है ।
तू ही हमारा सदा सहाई, तेरा ज्ञान सुखदाता है ॥
हे इन्द्र तू ज्ञानधनी है, तू आलस से दूर है ।
सदा सतर्क विज्ञान ज्ञानयुत, परमानन्द से पूर है ॥

इन्द्रं विश्वा अवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः ।
रथीतमं रथीनां वाजानां सत्पतिं पतिम् ॥
सख्ये त इन्द्र वाजिनो मा भेम शवसस्पते ।
त्वामभि प्र णोनुमो जेतारमपराजितम् ॥
पूर्वीरिन्द्रस्य रातयो न वि दस्यन्त्यूतयः ।
यदा वाजस्य गोमत स्तोतृभ्यो मंहते मघम् ॥१९॥
सर्वश्रेष्ठ सत्य का रक्षक, हृदय गगन में समा रहा ।
पालक रक्षक उसी इन्द्र के, भक्त गीत है गा रहा ॥
हे बली इन्द्र हम मित्र तेरे, ज्ञान से बलवान हों ।
हों विजयी हम कभी न हारें, मान से धनवान हों ॥

वह इन्द्र सदा से दानी है, भक्तों की रक्षा करता है।
अपने स्तोताओं का प्रेमी, उनके अज्ञान को हरता है॥

इति षष्ठः खण्डः। इति प्रथमोऽर्धः॥

अथ द्वितीयोऽर्धः।

एते असृग्रमिन्दवस्तिरः पवित्रमाशवः। विश्वान्यभि सौभगा॥
विघ्नन्तो दुरिता पुरु सुगा तोकाय वाजिनः।
त्मना कृण्वन्तो अर्वतः॥
कृण्वन्तो वरिवो गवेऽभ्यर्षन्ति सुष्टुतिम्।
इडामस्मभ्यं संयतम्॥१॥
यह आह्लादक आनन्दरस, हृदय में बहता आ रहा।
सुख सौभाग्य सम्पत्ति, सब बहाता ला रहा॥

राजा मेधाभिरीयते पवमानो मनावधि। अन्तरिक्षेण यातवे॥
आ नः सोम सहो जुवो रूपं न वचसे भर। सुष्वाणो देववीतये॥
आ न इन्दो शातग्विनं गवां पोष स्वश्व्यम्।
वहा भगत्तिमूतये॥२॥
यह चमकता सोम मन में, प्रतिभा से ही आता है।
रूप रसीला धरकर, अन्तरिक्ष से मार्ग बनाता है॥
हे रसीले सोम हम को, दिव्य सुख का दान कर।
शोभा पाने की शक्ति देकर, हम को कांतिमान कर॥
हे आनन्ददाता उन्नतिपथ में, ऐश्वर्य को हम पा सकें।
ज्ञान किरणें चमककर, हमें ज्ञानी कर्मशील बना सकें॥

तं त्वा नृम्णानि बिभ्रतं सधस्थेषु महो दिवः। चारुं सुकृत्ययेमहे॥
संवृक्तधृष्णुमुक्थ्यं महामहिव्रतं मदम्। शतं पुरो रुरुक्षणिम्॥
अतस्त्वा रयिरभ्ययद्राजानं सुक्रतो दिवः। सुपर्णो अव्यथी भरत्॥
अधा हिन्वान इन्द्रियं ज्यायो महित्वमानशे।
अभिष्टिकृद्विचर्षणिः॥
विश्वस्मा इत्स्वर्दृशे साधारणं रजस्तुरम्।
गोपामृतस्य विर्भरत्॥३॥

हम पुण्यकर्मों के सहारे, प्रकाशलोक में वास कर ।
ज्ञानघनों के स्वामी सुन्दर, सोम के साथ विलास करें ।।
सरस सोम है काटता, काम क्रोध को मूल से ।
है स्तुति को योग्य उन्नति-पथ से, नहीं हटाता भूल से ।।
तू ज्ञानवान तू ज्योतिवान तू सुख सम्पत्ति का दाता है ।
ज्ञान राशि से भरा सदा तू, भक्तजनों का त्राता है ।।
तू प्रेरक है सब अंगों का, तू सब का देखनहारा है ।
मनोकामना पूर्ण करता, तू सब से बड़ा सहारा है ।।
सत्य का त्राता ज्ञान विधाता, सोम मेरे मन वास करे ।
परमानन्द का देने वाला, अज्ञान अविद्या नाश करे ।।

इषे पवस्व धारया मृज्यमानो मनीषिभिः ।
इन्दो रुचाभि गा इहि ।।
पुनानो वरिवस्कृध्यूर्जं जनाय गिर्वणः । हरे सृजान आशिरम् ।।
पुनानो देववीतय इन्द्रस्य याहि निष्कृतम् ।
द्युतानो वाजिभिर्हितः ।।४।।
शुद्ध हुआ है मनन बुद्धि से, हे आह्लादक धारा बन ।
मेरे अंगों को चमका कर, शुभ कामों का सहारा बन ।।
हे मनोहर सोम मेरी, संकल्प अग्नि को जगा ।
ज्ञानशक्ति को बढ़ा कर, पाप भावों को भगा ।।
हे सोम मेरे अंगों ने है, तेरा तेज रूप है धारा ।
दिव्य गुणों का दान कर तू, पूरण करने हारा ।।

इति प्रथमः खण्डः ।

अग्निनाग्निः समिध्यते कविर्गृहपतिर्युवा । हव्यवाड् जुह्वास्यः ।।
यस्त्वामग्ने हविष्पतिर्दूतं देव सपर्यति । तस्य स्म प्राविता भव ।।
यो अग्निं देववीतये हविष्माँ आविवासति ।
तस्मै पावक मृडय ।।५।।
क्रांतदर्शक घर का रक्षक, संकल्प का अग्नि होता है ।
संकल्प की अग्नि से वह जलता, तरुण ज्ञान का सोता है ।।
हे दिव्य दान वृत्ति के धारक, तेरी पूजा जो करता ।
दिव्य संदेश के देने वाले, यजमान की तू रक्षा करता ।।

हे पावक सुखी बना, तू अपने दानी यजमान को।
मन में जो संकल्प जगाता, दृढ़ कर उसके ज्ञान को ॥

मित्रं हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादसम्। धियं घृताचीं साधन्ता ॥
ऋतेन मित्रावरुणावृतावृधावृतस्पृशा। क्रतुं बृहन्तमाशाथे ॥
कवी नो मित्रावरुणा तुविजाता उरुक्षया।
दक्षं दधाते अपसम् ॥६॥
मैं पुकारूँ वरुण मित्र को, शक्ति विवेक पाने को।
दोनों चमकते ज्ञान से, कामों को पूर्ण बनाने को ॥
परम सत्य के सत् कामों से, परम सत्य तक पहुंचाते।
मित्र वरुण संकल्पशक्ति का, उपयोग सभी से करवाते ॥
मित्र वरुण हैं क्रांतदर्शी, नाना रूप धरा करते।
बड़े महान सीमा के आगे, विवेकी बन काम किया करते ॥

इन्द्रेण सं हि दृक्षसे संजग्मानो अबिभ्युषा। मन्दू समानवर्चसा ॥
आदह स्वधामनु पुनर्गर्भत्वमेरिरे। दधाना नाम यज्ञियम् ॥
वीळु चिदारुजत्नुभिर्गुहा चिदिन्द्र वह्निभिः।
अविन्द उस्रिया अनु ॥७॥
निर्भय मनन शक्ति में, जीवन तत्त्व रहा करता।
दोनों बन समान ज्योति के, सुख का स्रोत बहा करता ॥
यज्ञ रूप बन इन्द्रियाँ, लीन बीज में हो जातीं।
परहित के काम करते-करते, सूक्ष्म रूप में खो जातीं ॥
अति गुप्त दृढ़ स्थान से, ज्ञान शिराएँ ज्ञान जगातीं।
उसी ज्ञान से इन्द्र बना, मानव को किरणें चमकातीं ॥

ता हुवे ययोरिदं पप्ने विश्वं पुरा कृतम्। इन्द्राग्नी न मर्धतः ॥
उग्रा विघनिना मृध इन्द्राग्नी हवामहे। ता नो मृळात ईदृशे ॥
हथो वृत्राण्यार्या हथो दासानि सत्पती।
हथो विश्वा अप द्विषः ॥८॥
उसी इन्द्र को मैं बुलाऊँ जिस के गीत जगत् है गाता।
कभी न होते नष्ट ये दोनों, जिन से सदा विश्व गुण पाता ॥
नाश करें हिंसक भावों का, इन्द्र अग्नि तेजधारी।
हम स्तुति उनको करें जो, जीवन रण में हों सुखारी ॥

उन्नति पथ पर ले जाते, विघ्नों का नाश किया करते।
सद्भावों की रक्षा करके, दुर्भावों को सदा हरा करते ॥

इति द्वितीयः खण्डः ।

अभि सोमास आयवः पवन्ते मद्यं मदम्।
समुद्रस्याधि विष्टपे मनीषिणो मत्सरासो मदच्युतः ॥
तरत्समुद्रं पवमान ऊर्मिणा राजा देव ऋतं बृहत्।
अर्षा मित्रस्य वरुणस्य धर्मणा प्र हिन्वान ऋतं बृहत् ॥
नृभिर्येमाणो हर्यतो विचक्षणो राजा देवः समुद्रयः ॥९॥
ये मनस्वी आनन्ददाता, आनन्द गंगा बहा रहे।
आनन्द स्थल से आते हुए, हर्षमग्न नहा रहे ॥
परम सत्य से जो सागर, उछल उछल कर आता है।
सोम मिले जो मित्र वरुण, गुण से सत् पथ दिखलाता है ॥
वीर साधकों ने दिव्य सोम, दृढ़ संयम से बनाया है।
आनन्द सागर से लहराता प्यारा, तेजस्वी हमने पाया है ॥

तिस्रो वाच ईरयति प्र वह्निर्ऋतस्य धीतिं ब्रह्मणो मनीषाम्।
गावो यन्ति गोपतिं पृच्छमानाः सोमं यन्ति मतयो वावशानाः ॥
सोमं गावो धेनवो वावशानाः सोमं विप्रा मतिभिः पृच्छमानाः।
सोमः सुत ऋच्यते पूयमानः सोमे अर्कास्त्रिष्टुभः सं नवन्ते ॥
एवा नः सोम परिषिच्यमान आ पवस्व पूयमानः स्वस्ति।
इन्द्रमा विश बृहता मदेन वर्धया वाचं जनया पुरन्धिम् ॥१०॥
वाहक सोम इडा सरस्वती, मही को आगे करता है।
मनीषा देकर ब्रह्मज्ञान से, सब के मन को भरता है ॥
गोएँ स्वामी को पाने, दौड़ दौड़ कर जाती हैं।
मन की शक्तियाँ सुधर सुधर कर, परमानंद को पाती हैं ॥
ज्ञान का दूध पिलाने वाली, ज्ञान रश्मियाँ सोम खोजतीं।
मेधावी जन को पाते ही, विचार शक्तियाँ उसे शोधतीं ॥
छना बनाया सोमरस, साधक जन जब पाता है।
इस प्रशंसा-अधिकारी के, झूम झूम गुण गाता है ॥

हे सोम ! रमकर कर पवित्र, कल्याण की धारा बहा।
चैतन्यशक्ति जगाकर इन्द्र को, वाक् शक्ति को बढ़ा ।।

इति तृतीयः खण्डः ।

यद्याव इन्द्र ते शतं शतं भूमीरुत स्युः ।
न त्वा वज्रिन्त्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी ।।
आ पप्राथ महिना वृष्ण्या वृषन् विश्वा शविष्ठ शवसा ।
अस्माँ अव मघवन् गोमति व्रजे वज्रिञ्चित्राभिरूतिभिः ।।११।।
हे इन्द्र तेरी शक्ति को, हजारों लोक पा सकते नहीं।
ये सभी ब्रह्माण्ड तुझ साधन सम्पन्न तक जा सकते नहीं ।।
हे सुखवर्षक अपने बल से, तू है सब पर छा रहा।
हमारी रक्षा करता तेरा ज्ञान, हम तक है आ रहा ।।

वयं घ त्वा सुतावन्त आपो न वृक्तबर्हिषः ।
पवित्रस्य प्रस्रवणेषु वृत्रहन् परि स्तोतार आसते ।।
स्वरन्ति त्वा सुते नरो वसो निरेक उक्थिनः ।
कदा सुतं तृषाण ओक आ गम इन्द्र स्वब्दीव वंसगः ।।
कण्वेभिर्धृष्णवा धृषद्वाजं दर्षि सहस्रिणम् ।
पिशङ्गरूपं मघवन्विचर्षणे मक्षू गोमन्तमीमहे ।।१२।।
हे विघ्ननाशक आनन्द पाने को, तेरे गीत सुनाते हैं।
पावन स्रोतों पर बैठ अन्तःकरण में तेरे गुण गाते हैं ।।
हे इन्द्र ! आनन्द यज्ञ में, साधक तुझे पुकार रहे।
प्यासे भक्त तेरे शुभागमन को मेघ समान निहार रहे ।।
इन्द्र अपनी विघ्ननाशक, शक्ति ज्ञान का दान कर।
हे क्रांतद्रष्टा ज्ञान प्रकाशयुत, ऐश्वर्य हमें प्रदान कर ।।

तरणिरित्सिषासति वाजं पुरन्ध्या युजा ।
आ व इन्द्रं पुरुहूतं नमे गिरा नेमिं तष्टेव सुद्रुवम् ।।
न दुष्टुतिर्द्रविणोदेषु शस्यते न स्रेधन्तं रयिर्नशत् ।
सुशक्तिरिन् मघवन् तुभ्यं मावते देष्णं यत्पार्ये दिवि ।।१३।।
तारक इन्द्र धारण शक्ति से, ज्ञान सभी को दान करे।
जीवन सरल बनाने को, इन्द्र प्रभु का गान करें ।।

ईश्वर की निन्दा कभी करें न, भक्तों को ही देता है।
दुःखदायी को कुछ नहीं मिलता, भक्त ज्योति से लेता है ॥

इति चतुर्थः खण्डः ।

तिस्रो वाच उदीरते गावो मिमन्ति धेनवः । हरिरेति कनिक्रदत् ॥
अभि ब्रह्मीरनूषत यह्वीर्ऋतस्य मातरः । मर्जयन्तीर्दिवः शिशुम् ॥
रायः समुद्रांश्चतुरोऽस्मभ्यं सोम विश्वतः ।
आ पवस्व सहस्रिणः ॥१४॥
दुधारु गउएँ तीन वाणियां, इडा भारती और धरा ।
जब बछड़ों सम हमें बुलातीं, आता सोम माधुर्य भरा ॥
परम सत्य सिखाने वाली, ब्रह्मगिरा है सत्य उपजाती ।
जब आता है सोम हृदय में, सारी सुख सम्पत्ति आती ॥

सुतासो मधुमत्तमाः सोमा इन्द्राय मन्दिनः ।
पवित्रवन्तो अक्षरं देवान् गच्छन्तु वो मदाः ॥
इन्दुरिन्द्राय पवत इति देवासो अब्रुवन् ।
वाचस्पतिर्मखस्यते विश्वस्येशान ओजसः ॥
सहस्रधारः पवते समुद्रो वाचमीङ्खयः ।
सोमस्पती रयीणां सखेन्द्रस्य दिवे दिवे ॥१५॥
आनन्दी इन्द्र के हित, मधुर सोम रस बह रहा ।
इन्द्रियों को दिव्य कर लें, आनन्द उन से जो पावन मिला ॥
दिव्य अंग हम को बताते, रस मन को बलवान करे ।
सारे बलों का सोम है स्वामी, इसे वही गतिमान करे ॥
हजारों धाराओं में बह कर, आता रस भण्डार है ।
उत्तम प्रेरक रक्षक मित्र, इन्द्र का सोम आधार है ॥

पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते प्रभुर्गात्राणि पर्येषि विश्वतः ।
अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते शृतास इद्वहन्तः सं तदाशत ॥
तपोष्पवित्रं विततं दिवस्पदेऽर्चन्तो अस्य तन्तवो व्यस्थिरन् ।
अवन्त्यस्य पवितारमाशवो दिवः पृष्ठमधि रोहन्ति तेजसा ॥
अरूरुचदुषसः पृश्निरग्रिय उक्षा मिमेति भुवनेषु वाजयुः ।
मायाविनो ममिरे अस्य मायया नृचक्षसः पितरो गर्भमा दधुः ॥१६॥

हे आत्मज्ञान के स्वामी, पावन छलनी तनी हुई।
परमानन्द को पाने, ज्ञानी मन इच्छा बनी हुई॥
जब तू अपने दर्शन देता, अंग अंग में छा जाता।
कच्चा घड़ा विलासी मानव, रस न इसका ले पाता॥
तपस्वी साधक अन्तर्मन से, आलोक लोक में आता।
इसका रक्षक द्युलोक ज्योति से ऊँचा है उठ जाता॥
प्रातः काल की उषा रश्मियाँ, सोम प्रकाश दिखातीं।
सम्पत्ति वाली शक्तियाँ बन, ज्ञान-प्रभा चमकातीं॥
चिति शक्तियाँ ज्ञान क्रिया से ज्ञानवती हो जातीं।
सच्चे साधक के मन-मन्दिर में, विचार बनी हैं आतीं॥

इति पञ्चमः खण्डः।

प्र मंहिष्ठाय गायत ऋताव्ने बृहते शुक्रशोचिषे।
उपस्तुतासो अग्नये॥
आ वंसते मघवा वीरवद्यशः समिद्धो द्युम्न्याहुतः।
कुविन्नो अस्य सुमतिर्भवीयस्यच्छा वाजेभिरागमत्॥१७॥
स्तुति के योग्य हो तुम भी, स्तुति जो उसकी गाते हो।
तेजस्वी दानी को गाओ, उसी से सत्य पाते हो॥
त्यागभाव से जागा अग्नि, यश बल हम को देता है।
संकल्प शक्ति को पाकर हो, नर उत्तम धन को लेता है॥

तं ते मदं गृणीमसि वृषणं पृक्षु सासहिम्।
उ लोककृत्नुमद्रिवो हरिश्रियम्॥
येन ज्योतींष्यायवे मनवे च विवेदिथ।
मन्दानो अस्य बर्हिषो वि राजसि॥
तदद्या चित्त उक्थिनोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा।
वृषपत्नीरपो जया दिवे दिवे॥१८॥
हे अदम्य इन्द्र तेरे उस, परमानन्द का गान करें।
ज्ञानी जनों का जो पोषक, संघर्षों में जय दान करे॥
जो आनन्द है जीवन देता, मनन शक्ति को चमकाता।
वही रस मन मन्दिर में आ, सब के चित्त को हर्षाता॥

तू बन गया स्तुति योग्य, तू वर्षण शक्ति वाला है।
दिन दिन तुझ को विजय मिले, तू ज्ञान कर्म को माला है॥

श्रुधी हवं तिरश्च्या इन्द्र यस्त्वा सपर्यति ।
सुवीर्यस्य गोमतो रायस्पूर्धि: महाँ असि ॥
यस्त इन्द्र नवीयसीं गिरं मन्द्रामजीजनत् ।
चिकित्विन्मनसं धियं प्रत्नामृतस्य पिप्युषीम् ॥
तमु ष्टवाम यं गिर इन्द्रमुक्थानि वावृधुः ।
पुरूण्यस्य पौंस्या सिषासन्तो वनामहे ॥१६॥
इन्द्र अपने पूजक जन की, विनय सुन लीजिए।
जितेन्द्रिय वीर मनस्वी को, महान बना दीजिए॥
हे इन्द्र ! जो ज्ञानी परम सत्य के, आलोक गीत है गा रहा।
पुकार उस को तुम सुनो, जो मनन करता आ रहा॥
उसी इन्द्र का गान करें, जो गीतों से बढ़ाया जाता है।
उस की प्रशंसा करें जिस से, पौरुष जगाया जाता है॥

इति षष्ठ: खण्ड: । इति द्वितीयोऽर्ध: ।

इति द्वितीय: प्रपाठक: ।

अथ तृतीयः प्रपाठकः

(प्रथमोऽर्धः)

प्र त आश्विनीः पवमान धेनवो दिव्या असृग्रन् पयसा धरीमणि ।
प्रान्तरिक्षात् स्थाविरीस्ते असृक्षत ये त्वा मृजन्त्यृषिषाण वेधसः ॥
उभयतः पवमानस्य रश्मयो ध्रुवस्य सतः परि यन्ति केतवः ।
यदी पवित्रे अधि मृज्यते हरिः सत्ता नि योनौ कलशेषु सीदति ॥
विश्वा धामानि विश्वचक्ष ऋभ्वसः प्रभोष्टे सतः परि यन्ति केतवः ।
व्यानशी पवसे सोम धर्मणा पतिर्विश्वस्य भुवनस्य राजसि ॥१॥

हे पवमान तेरी जो ज्ञान किरणें, समाधि मे भक्त पाता है ।
हे सोम जो ज्ञानी तुझ को भजते, उन को मन में लाता है ॥
उर की छलनी में छन छन कर, घट में तू ही समाया है ।
ज्ञान रश्मियां तुझे घेरतीं, तू अविचल चित्त में आया है ॥
हे दिव्य सोम ज्ञान रश्मियां, तेरे ही चारों ओर है ।
व्यापक बन कर बरसता, तेरा लोकों में शोर है ॥

पवमानो अजीजनद्दिवश्चित्रं न तन्यतुम् । ज्योतिर्वैश्वानरं बृहत् ॥
पवमान रसस्तव मदो राजन्नदुच्छुनः । वि वारमव्यमर्षति ॥
पवमानस्य ते रसो दक्षो वि राजति द्युमान् ।
ज्योतिर्विश्वं स्वर्दृशे ॥२॥

प्रकाशलोक से आकर, बिजली सम आनन्द भर देता ।
अद्भुत महान हितकारी, सब अन्धकार है हर लेता ॥
निष्काम भावना देने वाला, घट घट में भर जाता है ।
कांति भरा यह परमानन्द रस, परम सत्य दर्शाता है ॥

प्र यद् गावो न भूर्णयस्त्वेषा अयासो अक्रमुः ।
घ्नन्तः कृष्णामप त्वचम् ॥
सुवितस्य वनामहेऽति सेतुं दुराव्यम । साह्याम दस्युमव्रतम् ॥
शृण्वे वृष्टेरिव स्वनः पवमानस्य शुष्मिणः ।
चरन्ति विद्युतो दिवि ॥

आ पवस्व महीमिषं गोमदिन्दो हिरण्यवत् ।
अश्ववत् सोम वीरवत् ॥
पवस्व विश्वचर्षण आ मही रोदसी पृण ।
उषाः सूर्यो न रश्मिभिः ॥
परि णः शर्मयन्त्या धारया सोम विश्वतः ।
सरा रसेव विष्टपम् ॥३॥
भ्रमणशील ज्योति किरणों ने, शौर्य दिखाया है ।
अंधकार का पर्दा फाड़ा, सोमों ने अज्ञान भगाया है ॥
सिद्ध परमानन्द रस को, जो साधक अपनाता है ।
सीमानाशक कर्महीन, दुष्टों को मार भगाता है ॥
गरज रहे पवमान सोम का, भारी शब्द सुना जाता ।
प्रकाशलोक में किरणें फैला, वह सुख को बरसाता ॥
हे आह्लादक सोम, हम को ऐश्वर्य महान दे ।
कर्म शक्ति विजयशाली, हम को सदा तू ज्ञान दे ॥
उषाकाल में रवि नभ को, किरणों से है भर जाता ।
भर दे तू भी धरा द्यौ, बरस बरस हे सुखदाता ॥
ब्रह्माण्ड का ज्यों चक्र घेरे, इस को चारों ओर से ।
हे सोम बहा कल्याणकारी, आनन्द को सब ओर से ॥

इति प्रथमः खण्डः ।

आशुरर्ष बृहन्मते परि प्रियेण धाम्ना । यत्रा देवा इति ब्रुवन् ॥
परिष्कृण्वन्ननिष्कृतं जनाय यातयन्निषः । वृष्टिं दिवः परि स्रव ॥
अयं स यो दिवस्परि रघुयामा पवित्र आ । सिन्धोरूर्मा व्यक्षरत् ॥
सुत एति पवित्र आ त्विषिं दधान ओजसा ।
विचक्षाणो विरोचयन् ॥
आविवासन् परावतो अथो अर्वावतः सुतः । इन्द्राय सिच्यते मधु ॥
समीचीना अनूषत हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥४॥
इन्द्रियां तुझ को बुलातीं, सोम आ जा तेज लेकर ।
विस्तार कर दे उच्च मेरे, संकल्पशक्ति मन को देकर ॥
सोम शीघ्र ही चलता, आलोक लोक से आता है ।
जल की लहरों सा लहराता, हृदय में भर जाता है ॥

बना बनाया परमानन्द यह, वेग चमकने वाला है।
सारे तत्व दिखाकर, मन में भरता ज्योति ज्वाला है॥
सिद्ध हुआ यह दूर पास के, सभी भेद दर्शाता।
मधुर सोम यह शक्तिदाता, मन मन्दिर में आता॥
मनीषी साधक परमानन्द के, गीत प्रेम से गाते हैं।
अपने मन को दिव्य बनाकर, आनन्द भोग कराते हैं॥

हिन्वन्ति सूरमुस्रयः स्वसारो जामयस्पतिम्। महामिन्दुं महीयुवः॥
पवमान रुचारुचा देव देवेभ्यः सुतः। विश्वा वसून्या विश॥
आ पवमान सुष्टुतिं वृष्टिं देवेभ्यो दुवः। इषे पवस्व संयतम्॥५॥
अपने पालक पति को पाकर, गतिशील नारियाँ गौरव पातीं।
आनन्द प्रदाता सोम को पा त्यों, ज्ञानरश्मियाँ शोभा लातीं॥
हे पावक दिव्य स्वामी, इन्द्रियों को दिव्य कर दे।
अपना भक्ति तेज देकर, इन में सब ऐश्वर्य भर दे॥
सब को पावन करने वाले, मेरे अंग दिव्यता चाहें।
संयम सिखा उन्नत बना, सुख की वर्षा में अवगाहें॥

इति द्वितीयः खण्डः।

जनस्य गोपा अजनिष्ट जागृविरग्निः सुदक्षः सुविताय नव्यसे।
घृतप्रतीको बृहता दिविस्पृशा द्युमद्वि भाति भरतेभ्यः शुचिः॥
त्वामग्ने अङ्गिरसो गुहा हितमन्वविन्दञ्छिश्रियाणं वने वने।
स जायसे मथ्यमानः सहो महत्त्वामाहुः सहसस्पुत्रमङ्गिरः॥
यज्ञस्य केतुं प्रथमं पुरोहितमग्निं नरस्त्रिषधस्थे समिन्धते।
इन्द्रेण देवैः सरथं स बर्हिषि सीदन् नि होता यजथाय सुक्रतुः॥६॥
सदा सावधान अग्नि, भक्त के अंग बचाता है।
शुभ पाने को सदा भक्त, अग्नि स्तुति को गाता है॥
ज्ञान चमक से जगमग करता, प्रकाशलोक से आता।
उसी अग्नि को भक्त बढ़ाता, उस से शोभा पाता॥
हे अग्ने तू मन में रहता, किरण किरण में सोया है।
ज्ञानी तुझ को पा लेते हैं, तू अंग अंग में खोया है॥
बलशाली बन सब के भीतर, प्रकट सदा तू होता है।
अंग अंग को शक्ति देकर, निर्बलता को खोता है॥

नेता जन संकल्प अग्नि, जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति में पाते।
दिव्य बनें हम, दिव्य मनों में, यज्ञ भाव हैं उपजाते ॥

अयं वां मित्रावरुणा सुतः सोम ऋतावृधा। ममेदिह श्रुतं हवम् ॥
राजानावनभिद्रुहा ध्रुवे सदस्युत्तमे। सहस्रस्थूण आशाते ॥
ता सम्राजा घृतासुती आदित्या दानुनस्पती।
सचेते अनवह्वरम् ॥७॥
वरुण मित्र को शक्ति किरणो, मेरी विनय सुन लीजिए।
उन्नति पथ की ओर ले जाकर, परम सत्य को दीजिए ॥
जो सब पर हैं शासन करतीं, जड़ चेतन का मेल करो।
वरुण शक्तियो मित्र को लेकर, शुभ कर्मों का खेल करो ॥
ज्ञान के स्वामी तेजस्वी, सदा अखण्डित रहते हैं।
दान भावना की रक्षा हित, जो मित्र वरुण से कहते हैं ॥

इन्द्रो दधीचो अस्थभिर्वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। जघान नवतीर्नव ॥
इच्छन्नश्वस्य यच्छिरः पर्वतेष्वपश्रितम्। तद्विदच्छर्यणावति ॥
अत्राह गोरमन्वत नाम त्वष्टुरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमसो गृहे ॥८॥
साधक ने सिद्ध समाधि कर, निन्यानवे शक्ति भण्डार लिया।
अपने इन पैने शस्त्रों से, सब विघ्नों को मार दिया ॥
कर्मशील की प्रेरक शक्ति, मन दिव्य खोजने जाता।
दुर्गम पर्वत पर जाकर, उस की गतिशीलता पाता ॥
चन्द्रकला में रवि रश्मियां, अपना आलोक जगातीं।
दिव्य आनन्द में स्रष्टा को, ज्योति सदा दर्शातीं ॥

इयं वामस्य मन्मन इन्द्राग्नी पूर्व्यस्तुतिः। अभ्राद्वृष्टिरिवाजनि ॥
शृणुत जरितुर्हवमिन्द्राग्नी वनतं गिरः। ईशाना पिप्यतं धियः ॥
मा पापत्वाय नो नरेन्द्राग्नी माभिशस्तये।
मा नो रीरधतं निदे ॥९॥
हे इन्द्र हे अग्ने तुम्हारी, प्रशंसा मननशील हैं करते।
सुख बरसाकर मेघ समान, उस के ही दुःख को हरते ॥
हे इन्द्रियो पुकार सुनो, भक्त जन हैं गा रहे।
विचारशक्तियां साथ लेकर, तेज मान हैं पा रहे ॥

हे इन्द्र ! हे अग्ने, हम को, उन्नति पथ पर पहुंचाना।
हिंसा, निन्दा, पाप करने को, हम को धन न दे जाना ॥

इति तृतीयः खण्डः ।

पवस्व दक्षसाधनो देवेभ्यः पीतये हरे। मरुद्भ्यो वायवे मदः ॥
स देवैः शोभते वृषा कविर्योनावधि प्रियः। पवमानो अदाभ्यः ॥
पवमान धिया हितो३ऽभि योनिं कनिक्रदत्।
धर्मणा वायुमारुहः ॥१०॥
हे मनोहर सोम हम को, कर्म प्रवीण बनाते हो।
पान करें वे प्राणशक्तियां, गतिशील को सुख पहुंचाते हो ॥
दिव्य गुणों के चाहने वाले, अंगों से शोभा पाता है।
सुखवर्षक क्रांतिकारी सोम, अपने घर से आता है ॥
हे सोम धारणा बुद्धि से, तू अनहद गीत सुनाता।
अपने प्रताप से प्राणशक्ति का, पावन स्वामी बन जाता ॥

तवाहं सोम रारण सख्य इन्दो दिवे दिवे ॥
पुरूणि बभ्रो नि चरन्ति मामव परिधीँ रति ताँ इहि ॥
तवाहं नक्तमुत सोम ते दिवा दुहानो बभ्र ऊधनि।
घृणा तपन्तमति सूर्यं परः शकुना इव पप्तिम ॥११॥
हे इन्द्र तू आनन्ददाता, तेरे संग ही रहा करूँ।
पाप की ओर ले जाने वाली, सीमाओं को सदा हरूँ ॥
हे भरणकर्ता सोम तेरे से, निशदिन आनन्द पाऊँ।
तेजस्वी बन तेरे तेज से, प्रभु पक्षी तक उड़ जाऊँ ॥

पुनानो अक्रमीदभि विश्वा मृधो विचर्षणिः।
शुम्भन्ति विप्रं धीतिभिः ॥
आ योनिमरुणो रुहद्गमदिन्द्रो वृषा सुतम्। ध्रुवे सदसि सीदतु ॥
नू नो रयिं महामिन्दोऽस्मभ्यं सोम विश्वतः।
आ पवस्व सहस्रिणम् ॥१२॥
विविधरूपी दूरदर्शक, सोम बाधाएँ हरे।
मेधावी स्तुति गीतों से, उसका सत्कार करे ॥

अपने स्थान पर सिद्ध सोम, अविचल बना रहता ।
शक्तिशाली इन्द्र उसे पा, निश्चल ही खड़ा रहता ॥
हे आह्लादक सोम सदा, सुख की वर्षा करते रहना ।
चारों ओर से धारा बन, जीवन में धन भरते रहना ॥

इति चतुर्थः खण्डः ।

पिबा सोममिन्द्र मन्दतु त्वा यं ते सुषाव हर्यश्वाद्रिः ।
सोतुर्बाहुभ्यां सुयतो नार्वा ॥
यस्ते मदो युज्यश्चारुरस्ति येन वृत्राणि हर्यश्व हंसि ।
स त्वामिन्द्र प्रभूवसो ममत्तु ॥
बोधा सु मे मघवन् वाचमेमां यां ते वसिष्ठो अर्चति प्रशस्तिम् ।
इमा ब्रह्म सधमादे जुषस्व ॥१३॥
हे इन्द्र तू परमानन्द पी ले, तेरे लिए यह बना हुआ ।
धर्म मेघ सम वर्षा करता, सुख देने को तना हुआ ॥
योग ध्यान से साधक ने, वश में अपने इसे किया ।
सध हुए घोड़े की न्यांई, तेरे आनन्द के हित दिया ॥
समाधि योग से जो आनन्द, हे इन्द्र है तू ने पाया ।
शक्तिशाली बन इस से ही सारे विघ्नों को मार भगाया ॥
संयमी ज्ञानी जिस वाणी से, तेरे गुण गण गान करे ।
ऐश्वर्यशाली इन्द्र मुझे भी, उसी शक्ति का दान करे ॥

विश्वाः पृतना अभिभूतरं नरः सजूस्ततक्षुरिन्द्रं जजनुश्च राजसे ।
क्रत्वे वरे स्थेमन्यामुरीमुतोग्रमोजिष्ठं तरसं तरस्विनम् ॥
नेमिं नमन्ति चक्षसा मेषं विप्रा अभिस्वरे ।
सुदीतयो वो अद्रुहोऽपि कर्णे तरस्विनः समृक्वभिः ॥
समु रेभासो अस्वरन्निन्द्रं सोमस्य पीतये ।
स्वःपतिर्यदी वृधे धृतव्रतो ह्योजसा समूतिभिः ॥१४॥
उत्तम कर्म कराने वाला, शोभित इन्द्र निर्माण करो ।
हिंसक वृत्ति नाशक उस की, तेजशक्ति का ध्यान करो ॥
ज्ञानी मानव स्तुति गीतों से, विजयी सोम को गाते हैं ।
दूर दृष्टि से द्वेषरहित हो, कांतिवान को शीश झुकाते हैं ॥

यो राजा चर्षणीनां याता रथेभिरध्रिगुः ।
विश्वासां तरुता पृतनानां ज्येष्ठं यो वृत्रहा गृणे ॥
इन्द्रं तं शुम्भ पुरुहन्मन्नवसे यस्य द्विता विधर्त्तरि ।
हस्तेन वज्रः प्रतिधायि दर्शतो महान्देवो न सूर्यः ॥१५॥
सब अंगों में चमक रहा, उस के रथ से गमन करें ।
स्तुति करूँ मैं उसी इन्द्र की, जो सब विघ्नों का हरण करे ॥
रवि सम सब से आगे चलता, रक्षा का शस्त्र लिये हुए ।
मन की दिव्य शक्ति को साधो, जो सब को धारण किये हुए ॥

इति पञ्चमः खण्डः ।

परि प्रिया दिवः कविर्वयांसि नप्त्योर्हितः । स्वानैर्याति कविक्रतुः ॥
स सूनुर्मातरा शुचिर्जातो जाते अरोचयत् । महान्मही ऋतावृधा ॥
प्रप्र क्षयाय पन्यसे जनाय जुष्टो अद्रुहः । वीत्यर्ष पनिष्टये ॥१६॥
धरा द्यौ से बंधा हुआ, सोम क्रांति का नेता है ।
कर्मशक्ति से भरा हुआ, अपनी गति घोषित कर देता है ॥
शोभाशाली सोम सपूत, पृथिवी द्यौ का नाम करे ।
यह महान दोनों लोकों को, परम सत्य सुखधाम करे ॥
हे सोम द्वेष को छोड़ प्रेम से, तेरी सेवा गुणगान करें ।
देकर उस को वास सिद्धि हित, ईश्वरता प्रदान करे ॥

त्वं ह्या३ङ्ग दैव्य पवमान जनिमानि द्युमत्तमः ।
अमृतत्वाय घोषयन् ॥
येना नवग्वा दध्यङ्ङपोर्णुते येन विप्रास आपिरे ।
देवानां सुम्ने अमृतस्य चारुणो येन श्रवांस्याशत ॥१७॥
हे सोम तू सब से सुन्दर, अलौकिक यश का स्वामी है ।
जन्म जन्म हित दिव्यता दे, अमर सन्देश नामी है ॥
ज्ञान की इन्द्रियां वश में करके, साधक भेद बताता है ।
मेधावी सुखमय अमर ज्ञान, सोम शक्ति से पाता है ॥

सोमः पुनान ऊर्मिणाव्यं वारं वि धावति ।
अग्रे वाचः पवमानः कनिक्रदत् ॥

धीभिर्मृजन्ति वाजिनं वने क्रीडन्तमत्यविम् ।
अभि त्रिपृष्ठं मतयः समस्वरन् ॥
असर्जि कलशाँ अभि मीढ्वान्त्सप्तिर्न वाजयुः ।
पुनानो वाचं जनयन्नसिष्यदत् ॥१८॥
ज्ञान की छलनी में छन कर, परमानन्द लहराता है ।
अनहद नाद से सब से पहले, वाणी को शुद्ध बनाता है ॥
अन्तर्ध्वनि पाकर साधक, कर्मों में सोम को पाता है ।
मननशक्ति से जाग्रत स्वप्न, सुषुप्ति स्तर तक जाता है ॥
जिन के अन्दर सोम उपजता, आनन्द बल वर्षाता है ।
धारा बन कर शुद्ध बनाता, अन्तर्गीत गुंजाता है ॥

सोमः पवते जनिता मतीनां जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः ।
जनिताग्नेर्जनिता सूर्य्यस्य जनितेन्द्रस्य जनितोत विष्णोः ॥
ब्रह्मा देवानां पदवीः कवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगाणाम् ।
श्येनो गृध्राणां स्वधितिर्वनानां सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ॥
प्रावीविपद्वाच ऊर्मि न सिन्धुर्गिरः स्तोमान् पवमानो मनीषाः ।
अन्तः पश्यन् वृजनेमावराण्या तिष्ठति वृषभो गोषु जानन् ॥१९॥
पृथिवी द्यौ प्रतिभाओं का, जन्मदाता सोम बहता आ रहा ।
अग्नि, सूर्य इन्द्र विष्णु, शक्तियों को आ जा कहता आ रहा ॥
ज्ञानदाता क्रांतदर्शी लक्ष्यदाता, सोम अंगों का सहारा ।
कर्म की दे प्रेरणा अन्तःकरण में, बहाता शक्तिधारा ॥
वेग देकर शक्ति देकर, साधक इन्द्रियों को तपाता ।
अन्तःकरण में गीत गाकर, शक्ति रस को है बहाता ॥
सागर की लहरों सा लहर लहर, गीतों का निर्माण करे ।
ज्ञानवृत्तियां वश में रख सोम, अंगों को बलवान करे ॥

इति षष्ठः खण्डः ।

अग्निं वो वृधन्तमध्वराणां पुरूतमम् । अच्छा नप्त्रे सहस्वते ॥
अयं यथा न आभुवत् त्वष्टा रूपेव तक्ष्या ।
अस्य क्रत्वा यशस्वतः ॥
अयं विश्वा अभि श्रियोऽग्निर्देवेषु पत्यते ।
आ वाजैरुप नो गमत् ॥२०॥

हे मनुष्यो पाओ उस अग्नि को, विश्वप्रेम का दाता है।
यज्ञों का विस्तार करे, सब का प्यारा बनवाता है॥
यह अग्नि है दिव्य संकल्प, सुन्दर रचना करवाता है।
भांति भांति के रचे रूप, यह कारीगर कहलाता है॥
यह अग्नि ही सब अंगों को, सुन्दर सौम्य बनाता है।
हम पायें संकल्प को अग्नि, जो सदा शक्ति की दाता है॥

इममिन्द्र सुतं पिब ज्येष्ठममर्त्यं मदम्।
शुक्रस्य त्वाभ्यक्षरन् धारा ऋतस्य सादने॥
न किष्ट्वद्रथीतरो हरी यदिन्द्र यच्छसे।
न किष्ट्वानु मज्मना न किः स्वश्व आनशे॥
इन्द्राय नूनमर्चतोक्थानि च ब्रवीतन।
सुता अमत्सुरिन्दवो ज्येष्ठं नमस्यता सहः॥२१॥
हे इन्द्र भोग तू परमानन्द, जो तुझ को अमर बनाएगा।
ज्ञान की निर्मल धाराएँ लायीं, परम सत्य तू पाएगा॥
तू श्रेष्ठ सारथि इन्द्र शक्ति से, ज्ञान कर्म दो अश्व चलाता।
तू व्यापक तू वेगवान है, तू ही अनुपम बली कहाता॥
इसी इन्द्र की करो उपासना, इसी इन्द्र का गुणगान करो।
सिद्ध दिव्यानन्द हर्षाए तुम, उसके बल का मान करो॥

इन्द्र जुषस्व प्र वहा याहि शूर हरिह।
पिबा सुतस्य मतिर्न मधोश्चकानश्चारुर्मदाय॥
इन्द्र जठरं नव्यं न पृणस्व मधोर्दिवो न।
अस्य सुतस्य स्वा३र्णोप त्वा मदाः सुवाचो अस्थुः॥
इन्द्रस्तुराषाण्मित्रो न जघान वृत्रं यतिर्न।
बिभेद वलं भृगुर्न ससाहे शत्रून् मदे सोमस्य॥२२॥
हे इन्द्र तू अंगों का प्रेरक, आनन्द रस का पान कर।
ज्ञानी मधुरता चाहे मनोहर हो, मधुर का ध्यान कर॥
प्रकाशलोक से आए रस को, अन्तर्मन में ले रखा।
मगन हो इस परम सुख में, अपने वचनों से दे दिखा॥

इन्द्र वृत्तियां सम बना; हिंसक भावों का शमन करे।
योगी सम मन को वश में कर शत्रुओं का दमन करे ॥
जितेन्द्रिय होकर साधक समाधि योग को सिद्ध करे।
परम प्रभु के सच्चे सुख परमानन्द में रमण करे ॥

इति सप्तमः खण्डः । इति प्रथमोऽर्धः ॥

अथ द्वितीयोऽर्धः ।

गोवित्पवस्व वसुविद्धिरण्यविद्रेतोधा इन्दो भुवनेष्वर्पितः ।
त्वं सुवीरो असि सोम विश्ववित्तं त्वा नर उप गिरेम आसते ॥
त्वं नृचक्षा असि सोम विश्वतः पवमान वृषभ ता वि धावसि ।
स नः पवस्व वसुमद्धिरण्यवद्वयं स्याम भुवनेषु जीवसे ॥
ईशान इमा भुवनानि ईयसे युजान इन्दो हरितः सुपर्ण्यः ।
तास्ते क्षरन्तु मधुमद् घृतं पयस्तव व्रते सोम तिष्ठन्तु कृष्टयः ॥१॥
हे आह्लादक ज्ञान के दाता, ऐश्वर्य भी देता है।
सब भुवनों में बसा हुआ, ज्योति जग का नेता है ॥
तेरी वाणी से तुझ को भजता; तुझ को वही पाता है।
हे सोम तू नेता सब अंगों का, सभी ओर को जाता है ॥
हे सोम तू सब में रमा हुआ, विजयी सदा कहाता है।
सब स्थितियों में टिके रहें, शक्ति ज्योति का दाता है ॥
आनन्ददाता इन्द्रियों के स्वामी, तू इन्हें गतिमान करे।
कर्मशील बन तेरे से; आनन्द रस का यह पान करे ॥

पवमानस्य विश्ववित् प्र ते सर्गा असृक्षत । सूर्यस्येव न रश्मयः ॥
केतुं कृण्वन्दिवस्परि विश्वा रूपाभ्यर्षसि । समुद्रः सोम पिन्वसे ॥
जज्ञानो वाचमिष्यसि पवमान विधर्मणि । क्रन्दन् देवो न सूर्यः ॥२॥
हे सोम तू बह कर, चारों दिक् से रस से भर रहा।
रवि किरणों सम कई रूपों में, तेरा ज्ञान निखर रहा ॥
सब के मन में सुख भर के, ज्ञान ज्योति चमकाता।
हे पवमान अन्तःकरण में, वाणी को प्रकटाता ॥
रस के सागर सोम तू ही, ज्योति लोक से आता।
दिव्य सूर्य सम प्रेरक बन; सब से काम कराता ॥

प्र सोमासो अधन्विषुः पवमानास इन्दवः ।
श्रीणाना अप्सु वृञ्जते ॥
अभि गावो अधन्विषुरापो न प्रवता यतीः । पुनाना इन्द्रमाशत ॥
प्र पवमान धन्वसि सोमेन्द्राय मादनः । नृभिर्यतो वि नीयसे ॥
इन्दो यदद्रिभिः सुतः पवित्रं परिदीयसे । अरमिन्द्रस्य धाम्ने ॥
त्वं सोम नृमादनः पवस्व चर्षणीधृतिः । सस्निर्यो अनुमाद्यः ॥
पवस्व वृत्रहन्तम उक्थेभिरनुमाद्यः । शुचिः पावको अद्भुतः ॥
शुचिः पावक उच्यते सोमः सुतः स मधुमान् ।
देवावीरघशंसहा ॥३॥

बहता हुआ सोम बोलता, कर्म सदा करते रहना ।
दृढ़ होकर ही काम करो, आलस्य को हरते रहना ॥
शुद्ध मार्ग से बहकर पानी, हम को जीवन देता ।
धारा बन कर सोम हमारे, सब अंगों का है नेता ॥
आनन्ददाता सोम तू शक्ति, इन्द्र को दान करे ।
सब अंगों में बसा हुआ, तू उन को बलवान करे ॥
स्थिर बुद्धि वाले तुझे बनाते, तू ऊँचा रहता है ।
मन की शक्ति बढ़ाने वाला, तू ही मन में बहता है ॥
हे सोम तू बह कर आनन्द देता, अंग अंग को मगन करे ।
सब में व्यापक होकर नेता, सब के सारे दुःख हरे ॥
तू ही शुद्ध तू अनुपम पावन, स्तुति गीतों से तुझ को पाते ।
विघ्नों का तू नाश करे, तू बहकर आ तेरे भक्त बुलाते ॥
सिद्ध हुआ यह सोम रसीला, पावन शुद्ध कहाता है ।
दिव्य गुणों का देने वाला, पाप का मूल नशाता है ॥

इति प्रथमः खण्डः ।

प्र कविर्देववीतयेऽव्या वारेभिरव्यत । साह्वान्विश्वा अभि स्पृधः ॥
स हि ष्मा जरितृभ्य आ वाजं गोमन्तमिन्वति ।
पवमानः सहस्रिणम् ॥
परि विश्वानि चेतसा मृज्यसे पवसे मती ।
स नः सोम श्रवो विदः ॥
अभ्यर्ष बृहद्यशो मघवद्भ्यो ध्रुवं रयिम् । इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥

त्वं राजेव सुव्रतो गिरः सोमा विवेशिथ । पुनानो वह्ने अद्भुत ॥
स वह्निरप्सु दुष्टरो मृज्यमानो गभस्त्योः । सोमश्चमूषु सीदति ॥
क्रीडुर्मखो न मंहयुः पवित्रं सोम गच्छसि ।
दधत् स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥४॥

ज्ञान शक्ति से सोम बनाकर, दिव्य गुणों को लाते हैं ।
बाधाओं को दूर करें हम, शुद्ध से शक्ति पाते हैं ॥
प्राप्त हुआ यह सोम भक्त को, पोषक धन पहुंचाता ।
ज्ञान की ज्योति चमकाकर, मन का अंधकार मिटाता ॥
सोम ज्ञान को जागृत कर, मन के सब मेल छुड़ाता है ।
मन ज्ञान जगा कर प्यारे, काम को भी चमकाता है ॥
हे सोम तेरा मान बड़ा है, तू भक्तों को आत्मज्ञान दे ।
साधक जन का प्रेरक बन, यश वाला धन दान दे ॥
तू राजा है सोम हमारा, तू बह कर हम पर शासन कर ।
तू प्रेरक गतिदाता है, मेरे अंग अंग में जीवन भर ॥
ज्ञान कर्म की किरणों से, जब भक्ति को शुद्ध बनाते हैं ।
कर्म के प्रेरक विजयी सोम को, हम हृदय में पाते हैं ॥
सोम त्याग का भाव दिलाता, पूजा वही सिखाता है ।
भक्त से उत्तम काम कराता, अन्तःकरण में छाता है ॥

यवं यवं नो अन्धसा पुष्टं पुष्टं परि स्रव ।
विश्वा च सोम सौभगा ॥
इन्दो यथा तव स्तवो यथा ते जातमन्धसः ।
नि बर्हिषि प्रिये सदः ॥
उत नो गोविदश्ववित् पवस्व सोमान्धसा । मक्षूतमेभिरहभिः ॥
यो जिनाति न जीयते हन्ति शत्रुमभीत्य ।
स पवस्व सहस्रजित् ॥५॥

हे सोम भर दे प्राणशक्ति, जौ के कण जीवन दान करें ।
गति हो विश्व में हमारी, तिल तिल सुख संधान करें ॥
हे सोम तू धारक प्राणशक्ति का, स्तुति तेरी सब गाते ।
आज अन्तःकरण में हमारे, तुझ को सदा बुलाते ॥
गति हमारी सम हो, ज्ञानी कर्म पथ पर चले चलें ।
प्राणशक्ति दान कर हम को, पाप की शक्ति नहीं छले ॥

जो सोम सब को जीतता, हार को पाता नहीं।
वह सोम हम को प्राप्त हो, जो विघ्न को भाता नहीं ॥

यास्ते धारा मधुश्चुतोऽसृग्रमिन्द ऊतये । ताभिः पवित्रमासदः ॥
सो अर्षेन्द्राय पीतये तिरो वाराण्यव्यया । सीदन्नृतस्य योनिमा ॥
त्वं सोम परि स्रव स्वादिष्ठो अङ्गिरोभ्यः ।
वरिवोविद् घृतं पयः ॥६॥
हे सोम तेरी मधुर धारा, उन्नति पथ पर ले जाती ।
मन की छलनी से छन कर, वही तुझ तक पहुंचाती ॥
मनः शक्ति जो सदा बढ़ाए, इन्द्र ही जिसका पान करे ।
चिति परदों को पार कर, परम सत्य का ध्यान धरे ॥
हे सोम तू रस का भरा, भक्तों को रस दान कर ।
मधुर चमकते दूध सम, सब को आनन्दवान कर ॥

इति द्वितीयः खण्डः ।

तव श्रियो वर्ष्यस्येव विद्युतोऽग्नेश्चिकित्र उषसामिवेतयः ।
यदोषधीरभिसृष्टो वनानि च परि स्वयं चिनुषे अन्नमासनि ॥
वातोपजूत इषितो वशाँ अनु तृषु यदन्ना वेविषद्वितिष्ठसे ।
आ ते यतन्ते रथ्यो३ यथा पृथक् शर्द्धांस्यग्ने अजरस्य धक्षतः ॥
मेधाकारं विदथस्य प्रसाधनमग्निं होतारं परिभूतरं मतिम् ।
त्वामर्भस्य हविषः समानमित् त्वां महो वृणते नान्यं त्वत् ॥७॥
मेघ कौन सा बरसेगा, बिजली चमक बतलाती है ।
अंधकार नशाए कौन उषा, किरणें यह समझाती हैं ॥
ज्ञानवान अग्नि को उस की, दिव्य विभूतियां दर्शायें ।
भौतिक अग्नि जैसे, ईंधन में स्वरूप दिखलाये ॥
प्राणशक्ति प्रेरित अपने, इष्ट स्थान में समाता ।
संयमी साधक शुभ कामों से इसकी शक्तियां पाता ॥
मनीषी यज्ञ बनाने वाले, सत्ता तेरी पहचानते ।
त्याग भाव से सारे हो, तुझ को हैं सन्मानते ॥
अर्पण अपना सब करते हैं, तेरी सत्ता मान कर ।
तुझ को सब कुछ देते, चेतन शक्ति जान कर ॥

पुरूरुणा चिद्ध्यस्त्यवो नूनं वां वरुण । मित्र वंसि वां सुमतिम् ॥
ता वां सम्यगद्रुह्वाणेषमश्याम धाम च । वयं वां मित्रा स्याम ॥
पातं नो मित्रा पायुभिरुत त्रायेथां सुत्रात्रा ।
साह्याम दस्यून् तनूभिः ॥८॥
हे मित्र वरुण तुम हो विशाल, सब के त्राता हो ।
सुख को लेकर मिलो, उत्तम ज्ञान प्रदाता हो ॥
कभी न तुम से वैर करें, प्रेमी मित्र ही हो जायें ।
तुम दोनों से मेल करें, तेज प्रेरणा को पायें ॥
हे मित्र वरुण साथियो, रक्षा करो दोष हटाओ ।
हिंसक भावों को जीतें, हम में वह शक्ति उपजाओ ॥

उत्तिष्ठन्नोजसा सह पीत्वा शिप्रे अवेपयः । सोममिन्द्र चमू सुतम् ॥
अनु त्वा रोदसी उभे स्पर्धमान मदेताम् । इन्द्र यद्दस्युहाभवः ॥
वाचमष्टापदीमहं नवस्रक्तिमृतावृधम् । इन्द्रात् परितन्वं ममे ॥९॥
हे इन्द्र अपनी देह में, सोम रस तैयार किया ।
उसको पीकर, भक्ति शक्ति का, अंगों में संचार किया ॥
हे इन्द्र तुझ को विजय मिली, हिंसक भावों को मार कर ।
उन्नति पथ पर देवों का, स्वागत तू स्वीकार कर ॥
मैं सीख रहा हूं चार वेद, उपवेद वाले सत्य-ज्ञान ।
इन्द्र ने है जो फैलाया, शिक्षा-कल्प रचनायुक्त जान ॥

इन्द्राग्नी युवामिमे३ऽभि स्तोमा अनूषत । पिबतं शम्भुवा सुतम् ॥
या वां सन्ति पुरुस्पृहो नियुतो दाशुषे नरा ।
इन्द्राग्नी ताभिरा गतम् ॥
ताभिरा गच्छतं नरोपेदं सवनं सुतम् । इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥१०॥
हे इन्द्र अग्नि स्तुति गीत, तेरे लिए ही गाए हैं ।
तुम दोनों इसे स्वीकार करो, हम शरण तुम्हारी आए हैं ॥
तुम दोनों में नेता के गुण, हे इन्द्र अग्नि छाए हैं ।
अपने प्यारे भक्तों हित ही, ये गुण गण आए हैं ॥
नेताओ हम ने यज्ञ रचाया, परमानन्द पाने के लिए ।
उत्तम गुण संग आओ, इसे सफल बनाने के लिए ॥

इति तृतीयः खण्डः ।

अर्षा सोम द्युमत्तमोऽभि द्रोणानि रोरुवत् । सीदन्योनौ वनेष्वा ॥
अप्सा इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः । सोमा अर्षन्तु विष्णवे ॥
इषं तोकाय नो दधदस्मभ्यं सोम विश्वतः ।
आ पवस्व सहस्रिणम् ॥११॥

हे इन्द्र तू है गूंज करता, मम इन्द्रियों में ही समा ।
उत्तम प्रकाश के दाता, मुझ को अपना प्यारा भक्त बना ॥
इन्द्र वायु वरुण मरुत्, शक्तियों का दान दे ।
कर्मशील बना हमें, परमानन्द रस का पान दे ॥
उन्नतिपथ में चल हमें, सहस्रों सुख प्रदान कर ।
ज्ञान का भोजन दिला, शक्ति सुख भगवान भर ॥

सोम उ ष्वाणः सोतृभिरधि ष्णुभिरवीनाम् ।
अश्वयेव हरिता याति धारया मन्द्रया याति धारया ॥
अनूपे गोमान् गोभिरक्षाः सोमो दुग्धाभिरक्षाः ।
समुद्रं न संवरणान्यग्मन् मन्दी मदाय तोशते ॥१२॥

हे सोम साधक जन सदा, ज्ञान से तुझ को बुलाते ।
तू लाता धारा आनन्द की, जब तेरे हैं गीत गाते ॥
गोपाल दोहकर दूध गोधन, पानी के ढिग ले जाते ।
आनन्द के साधक अंगों में आनन्दकोष से आनन्द पाते ॥
तुम जिस को सोम बुलाते, जो भक्ति ज्ञान से आता ।
वह भक्तगण पाते हैं, जो सच्चे सुख का दाता ॥

यत्सोम चित्रमुक्थ्यं दिव्यं पार्थिवं वसु । तन्नः पुनान आ भर ॥
वृषा पुनान आयूंषि स्तनयन्नधि बर्हिषि । हरिः सन्योनिमासदः ॥
युवं हि स्थः स्वःपती इन्द्रश्च सोम गोपतो ।
ईशाना पिप्यतं धियः ॥१३॥

हे सोम अद्भुत दिव्य, पार्थिव धन दान कर ।
बहता आ तू इस को लेकर, मेरे घर में धान भर ॥
हे बरसनहारे पावन कर दे, मेरा जीवन कर्म कराता जा ।
दुःखहारी आकर्षक बन, मन मन्दिर में समाता जा ॥

इति चतुर्थः खण्डः ।

इन्द्रो मदाय वावृधे शवसे वृत्रहा नृभिः ।
तमिन्महत्स्वाजिषूतिमर्भे हवामहे स वाजेषु प्र नोऽविषत् ॥
असि हि वीर सेन्योऽसि भूरि परादविः ॥
असि दभ्रस्य चिद्वृधो यजमानाय शिक्षसि सुन्वते भूरि ते वसु ॥
यदुदीरत आजयो धृष्णवे धीयते धनम् ।
युङ्क्ष्वा मदच्युता हरी कं हनः कं वसौ दधोऽस्माँ
इन्द्र वसौ दधः ॥१४॥

विघ्ननाशक इन्द्र बल से, प्राप्त परमानन्द करता ।
स्मरण उस को हम करें, जो ज्ञान यज्ञ में कष्ट हरता ॥
शत्रु भावों के नाशकारी, मित्रों सहित तू विजय पाता ।
यजमान साधक को देकर धन सद्‌गुणों को बढ़ाता ॥
जीवन-रण में भक्त की, जो बाधाएँ हर लेता है ।
ज्ञान कर्म को वश में कर के, सुख सम्पत्ति भर लेता है ॥

स्वादोरित्था विषूवतो मधोः पिबन्ति गौर्यः ।
या इन्द्रेण सयावरीर्वृष्णा मदन्ति शोभथा वस्वीरनु स्वराज्यम् ॥
ता अस्य पृशनायुवः सोमं श्रीणन्ति पृश्नयः ।
प्रिया इन्द्रस्य धेनवो वज्रं हिन्वन्ति सायकं वस्वीरनु स्वराज्यम् ॥
ता अस्य नमसा सहः सपर्यन्ति प्रचेतसः ।
व्रतान्यस्य सश्चिरे पुरूणि पूर्वचित्तये वस्वीरनु स्वराज्यम् ॥१५॥

इन्द्रियां जब तृप्तिकारक, पान परमानन्द करतीं ।
बली इन्द्र से बल पा, स्वराज्य में सानन्द विचरतीं ॥
इन्द्र की प्यारी इन्द्रियां, ज्ञान का जब रस पकातीं ।
दुःख विदारक साधनों से, सहज ऐश्वर्य पातीं ॥
ज्ञानी संयमी इन्द्रियां, इन्द्र की शक्ति वर्धन करतीं ।
विविध कर्मों में बनो सहायक, अनुपम शोभा वरतीं ॥

इति पञ्चमः खण्डः ।

असाव्यंशुर्मदायाप्सु दक्षो गिरिष्ठाः । श्येनो न योनिमासदत् ॥
शुभ्रमन्धो देववातमप्सु धौतं नृभिः सुतम् ।
स्वदन्ति गावः पयोभिः ॥
आदीमश्वं न हेतारमशूशुभन्नमृताय । मधो रसं सधमादे ॥१६॥

कर्मशक्ति का देने वाला, सोम सजीला वाणी में रहता।
मैंने उसको सिद्ध किया, उस से मन में आनन्द बहता।।
कर्मशीलता से धोया, दिव्य प्राणशक्ति का दाता।
उसका रस इन्द्रियां पीतीं, उत्पादक साधक आनंद पाता।।
अश्व सम क्रियाशील, वह आनन्दरूप मन में धरते।
अमर बनने के लिए, मधुर सोम रस पान करते।।

अभि द्युम्नं बृहद्यश इषस्पते दिदीहि देव देवयुम्।
वि कोशं मध्यमं युव।।
आ वच्यस्व सुदक्ष चम्वोः सुतो विशां वह्निर्न विश्पतिः।
वृष्टिं दिवः पवस्व रीतिमपो जिन्वन् गविष्टये धियः।।१७।।
हे प्रेरक हे दिव्य सोम, तू ऐश्वर्य विस्तार कर।
विज्ञान, मनोमय, मध्यम, आवरणों को पार कर।।
हे शक्तिशाली सोम तेरा, जन्म ज्ञान कर्म से होता।
भावनाओं में दिखा दे, ज्ञान-प्रकाश से कर्म स्रोता।।
भक्त जन शुभ कर्म कर, उन्नति पथ पर चलते रहें।
प्रकाशलोक से सुख नीर आ, उनके दुःख दलते रहें।।

प्राणा शिशुर्महीनां हिन्वन्नृतस्य दीधितिम्।
विश्वा परि प्रिया भुवदध द्विता।।
उप त्रितस्य पाष्यो३रभक्त यद् गुहा पदम्।
यज्ञस्य सप्त धामभिरध प्रियम्।।
त्रीणि त्रितस्य धारया पृष्ठेष्वैरयद्रयिम्।
मिमीते अस्य योजना वि सुक्रतुः।।१८।।
महान शक्तियां धारण कर, सोम शिशु है आ रहा।
परम सत्य से प्रेरित होकर, किरणों सा है छा रहा।।
सोम शक्ति से जग के, दो रूप पृथक् जाने जाते।
स्थूल सूक्ष्म, व्यष्टि समष्टि, क्या हैं पहचाने जाते।।
साधक की दृढ़ इन्द्रियों में, ज्ञान कर्म सोम रहा करता।
ज्योति वाली सप्त भावना के, यज्ञ प्रकाश से प्रभा भरता।।
ज्यों ज्यों भक्त साधना करता, सोम उसे हर्षाता।
दैविक, भौतिक, आत्मिक, धन, देकर योग-मार्ग दिखाता।।

पवस्व वाजसातये पवित्रे धारया सुतः ।
इन्द्राय सोम विष्णवे देवेभ्यो मधुमत्तरः ॥
त्वां रिहन्ति धीतयो हरिं पवित्रे अद्रुहः ।
वत्सं जातं न मातरः पवमान विधर्मणि ॥
त्वं द्यां च महिव्रत पृथिवीं चाति जभ्रिषे ।
प्रति द्रापिममुञ्चथाः पवमान महित्वना ॥१६॥
हे सिद्ध सोम ज्ञान-शक्ति हित, हृदय छलनी से भर ।
ऐसे बनकर आता इन्द्रियों में, आनन्द सुधा को भर ॥
चैतन्य अन्तःकरण में, तू है सोम बहा करता ।
गौएँ जैसे बछड़े चाहें, तू ध्यान वृत्तियों में रहा करता ॥
महान काम कराने वाले, प्रेरक सोम तू महान है ।
पृथिवी द्यौ अन्तरिक्ष में, तू रमा हुआ पवमान है ॥

इन्दुर्वाजी पवते गोन्योघा इन्द्रे सोमः सह इन्वन्मदाय ।
हन्ति रक्षो बाधते पर्यराति वरिवस्कृण्वन् वृजनस्य राजा ॥
अध धारया मध्वा पृचानस्तिरो रोम पवते अद्रिदुग्धः ।
इन्दुरिन्द्रस्य सख्यं जुषाणो देवो देवस्य मत्सरो मदाय ॥
अभि व्रतानि पवते पुनानो देवो देवान्त्स्वेन रसेन पृञ्चन् ।
इन्दुर्धर्माण्यृतुथा वसानो दश क्षिपो अव्यत सानो अव्ये ॥२०॥
आनन्ददाता शक्तिशाली सोम, इन्द्र को बल आनन्द देता ।
ज्ञान जगा कृपणों को दबाकर, असुरों का सुख हर लेता ॥
दृढ़ साधनों से दुहा यह, अनेक पर्दे पार कर ।
परमानन्द का कोष बनता, मित्र इन्द्र को प्यार कर ॥
दिव्य सोम अंगों में छाकर, कर्मों को पावन कर देता ।
श्रद्धा नियम से गुण देकर, परम ज्ञान से भर देता ॥

इति षष्ठः खण्डः ।

आ ते अग्न इधीमहि द्युमन्तं देवाजरम् ।
यद्ध स्या ते पनीयसी समिद्दीदयति द्यवीषं स्तोतृभ्य आ भर ॥
आ ते अग्न ऋचा हविः शुक्रस्य ज्योतिषस्पते ।
सुश्चन्द्र दस्म विश्पते हव्यवाट् तुभ्यं हूयत इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥

ओभे सुश्चन्द्र विश्पते दर्वी श्रीणीष आसनि ।
उतो न उत्पुपूर्या उक्थेषु शवसस्पत इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥२१॥
हे प्रकाश रूप हम तुझे जगाते, तेरा प्रकाश है अविनाशी ।
भक्तों का हृदय प्रेरित कर दे, तेरा गौरव सुखराशि ॥
हे पावन ज्योति स्वामी, बलशाली सुखदाता हो ।
तुझे स्तुति से सदा बुलाते, दिव्य गुणों के त्राता हो ॥
हे आह्लादक अग्ने तू ही, ज्ञान कर्म में त्यागभाव पुष्ट करे ।
मेरे अंगों में त्यागभाव भर, मेरा मन सन्तुष्ट करे ॥
हे बल स्वामी उत्तम कर्मों हित, शुभ भावों का ज्ञान भर ।
अपने भक्तों को शुभ कर्मों को, अन्तः प्रेरणा दान कर ॥

इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते बृहत् ।
ब्रह्मकृते विपश्चिते पनस्यवे ॥
त्वमिन्द्राभिभूरसि त्वं सूर्यमरोचयः ।
विश्वकर्मा विश्वदेवो महाँ असि ॥
विभ्राजञ्ज्योतिषा स्व३रगच्छो रोचनं दिवः ।
देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे ॥२२॥
हे भक्तो तुम गीत गाओ, उसी इन्द्र महान के ।
वेद ज्ञान के श्रेष्ठ दाता, देने वाले हर ज्ञान के ॥
हे इन्द्र शक्तिशालो तू है, तेरी चमक सूर्य तारों में है ।
तू प्रकाशक तू महान, तू रचना के कलाकारों में है ॥
हे इन्द्र तू आलोक देता, तेरा प्रकाश अनूप है ।
मेरे अंग अंग तेरा संग चाहें, तू दिव्यगुणी सुखरूप है ॥

असावि सोम इन्द्र ते शविष्ठ धृष्णवा गहि ।
आ त्वा पृणक्त्विन्द्रियं रजः सूर्यो न रश्मिभिः ॥
आ तिष्ठ वृत्रहन् रथं युक्ता ते ब्रह्मणा हरी ।
अर्वाचीनं सु ते मनो ग्रावा कृणोतु वग्नुना ॥
इन्द्रमिद्धरी वहतोऽप्रतिधृष्टशवसम् ।
ऋषीणां सुष्टुतीरुप यज्ञं च मानुषाणाम् ॥२३॥
हे बलशाली इन्द्र तू विषय विजयी, तेरा यह आनन्द है ।
रवि किरणों से गगन भरे ज्यों, तुझ में सन्तोष अमन्द है ॥

हे विघ्ननाशक बली इन्द्र, देह रथ पर अधिकार कर।
ज्ञान कर्म के घोड़े वाले, भक्त के दृढ़ संस्कार कर॥
अजय इन्द्र को ज्ञान कर्म वाले अंग हो धरते हैं।
क्रांतद्रष्टा अंगों के, स्तुतिगीत त्यागभाव भरते हैं॥

इति सप्तमः खण्डः। इति द्वितीयोऽर्धः।

इति तृतीयः प्रपाठकः।

अथ चतुर्थः प्रपाठकः

(प्रथमोऽर्धः)

ज्योतिर्यज्ञस्य पवते मधु प्रियं पिता देवानां जनिता विभूवसुः।
दधाति रत्नं स्वधयोरपीच्यं मदिन्तमो मत्सर इन्द्रियो रसः॥
अभिक्रन्दन् कलशं वाज्यर्षति पतिर्दिवः शतधारो विचक्षणः।
हरिर्मित्रस्य सदनेषु सीदति मर्मृजानोऽविभिः सिन्धुभिर्वृषा॥
अग्रे सिन्धूनां पवमानो अर्षस्यग्रे वाचो अग्रियो गोषु गच्छसि।
अग्रे वाजस्य भजसे महद् धनं स्वायुधः सोतृभिः सोम सूयसे॥१॥
देख लो पथप्रदर्शक, सोम का अमृत झरे।
दिव्य गुण ऐश्वर्य दाता, इन्द्र का वह हित करे॥
जीवन यज्ञ कराने वाला, रक्षक व्यापक सोम है।
पीयूषधारा आनन्द की, निशदिन बहाता ओम् है॥
शोर मचाता राह दिखाता, शतधारा बरसाता आ रहा।
ज्ञानजल से शुद्ध बनकर, भक्त मन इन्द्रियों पर छा रहा॥
हे सोम नेता तू बना ज्ञान, वाणी इन्द्रियां चला रहा।
वीर इन्द्र के सम्पत्तिदाता, साधक तुझ को पा रहा॥

असृक्षत प्र वाजिनो गव्या सोमासो अश्वया।
शुक्रासो वीरयाशवः॥
शुम्भमाना ऋतायुभिर्मृज्यमाना गभस्त्योः। पवन्ते वारे अव्यये॥
ते विश्वा दाशुषे वसु सोमा दिव्यानि पार्थिवा।
पवन्तामान्तरिक्ष्या॥२॥
बलशाली शुद्ध परमानन्द, विजय दिलवाता है।
ज्ञान-प्रभा चमका कर, भक्ति को तीव्र बनाता है॥
परम सत्य को भक्त जो चाहे, वही उस को पाता है।
ज्ञान-रश्मि से शुद्ध बना, चेतनता में से आता है॥

पवस्व देववीरति पवित्रं सोम रंह्या । इन्द्रमिन्दो वृषा विश ।।
आ वच्यस्व महि प्सरो वृषेन्दो द्युम्नवत्तमः ।
आ योनिं धर्णसिः सदः ।।
अधुक्षत प्रियं मधु धारा सुतस्य वेधसः । अपो वसिष्ट सुक्रतुः ।।
महान्तं त्वा महीरन्वापो अर्षन्ति सिन्धवः । यद्गोभिर्वासयिष्यसे ।।
समुद्रो अप्सु मामृजे विष्टम्भो धरुणो दिवः ।
सोमः पवित्रे अस्मयुः ।।
अचिक्रदद्वृषा हरिर्महान्मित्रो न दर्शतः । सं सूर्येण दिद्युते ।।
गिरस्त इन्द ओजसा मर्मृज्यन्ते अपस्युवः । याभिर्मदाय शुम्भसे ।।
तं त्वा मदाय घृष्वय उ लोककृत्नुमीमहे । तव प्रशस्तये महे ।।
गोषा इन्दो नृषा अस्यश्वसा वाजसा उत । आत्मा यज्ञस्य पूर्व्यः ।।
अस्मभ्यमिन्दविन्द्रियं मधोः पवस्व धारया ।
पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव ।।३।।

दिव्य गुणों के धारणकर्ता, पावन सोम आता जा ।
हृदय में आकर आनंददाता, इन्द्र के तन में छाता जा ।।
हे यश वाले आनन्ददाता, तू ही सुख बरसाता है ।
मेरे मन में जम के बैठ, ज्ञान तू ही दर्शाता है ।।
योग साधनों से मिलता, सोम अमृत का दाता है ।
जिस को मिलता सोम सदा, वह शुभ कर्म कमाता है ।।
ज्ञान-रश्मि पर्दों के पीछे, कर्म भावना आती है ।
ज्ञान-साधना साधक के, मन पर अधिकार जमाती है ।।
परमानन्द देने वाला जो, प्रकाश सब का है सहारा ।
कर्मभावना शुद्ध बनाता, मनमन्दिर में उसको धारा ।।
प्यारा सुन्दर मित्र सोम, जब सुख बरसाने आता ।
प्रेरक शक्ति देकर जग को, जगमग करके जाता ।।
हे आह्लादक तेरे बल से, ज्ञान कर्म पाते गीत मेरे ।
शुद्ध हो यह तुझ को गाते, आनन्द पाते मीत मेरे ।।
हम चाहते उसी सोम को, सब विघ्नों को पार करे ।
परमानन्द पा तेरे गीत सुनावें, तुझ से प्यार करें ।।
हे आह्लादक सोम तू, ज्ञान कर्म उन्नति का दाता ।
सदा सदा से यज्ञ भावना, कर्मों में है तू लाता ।।

खूब बरसने वाला बादल, जैसे जल बरसाता।
अमृत की धारा बन आ, तू ही इन्द्र का त्राता।।

इति प्रथमः खण्डः।

सना च सोम जेषि च पवमान महि श्रवः।
अथा नो वस्यसस्कृधि।।
सना ज्योतिः सना स्व३र्विश्वा च सोम सौभगा।
अथा नो वस्यसस्कृधि।।
सना दक्षमुत क्रतुमप सोम मृधो जहि। अथा नो वस्यसस्कृधि।।
पवीतारः पुनीतन सोममिन्द्राय पातवे। अथा नो वस्यसस्कृधि।।
त्वं सूर्ये न आ भज तव क्रत्वा तवोतिभिः।
अथा नो वस्यसस्कृधि।।
तव क्रत्वा तवोतिभिर्ज्योक् पश्येम सूर्यम्। अथा नो वस्यसस्कृधि।।
अभ्यर्ष स्वायुध सोम द्विबर्हसं रयिम्। अथा नो वस्यसस्कृधि।।
अभ्य३र्षानपच्युतो वाजिन्त्समत्सु सासहिः।
अथा नो वस्यसस्कृधि।।
त्वां यज्ञैरवीवृधन् पवमान विधर्मणि। अथा नो वस्यसस्कृधि।।
रयिं नश्चित्रमश्विनमिन्दो विश्वायुमा भर।
अथा नो वस्यसस्कृधि।।४।।

हे पवमान महान ज्ञान से, सब बाधाएँ दूर भगा।
सुख से रहने वालों में, सब से श्रेष्ठ तू हमें बना।।
हे सोम ज्ञान की ज्योति देकर, परम सुख प्रदान कर।
पूर्ण सौभाग्य बरसा कर, सुखियों में ऐश्वर्यवान कर।।
हे सोम ज्ञान कर्मबल से, रिपुओं को तू दूर कर।
बाधा रहित सुख को देकर, अमृत से भरपूर कर।।
साधक जन नित सोम बनावें, इन्द्र ही उसका पान करे।
यही बनाया सोम मधुर ही, जीवन में सुख दान करे।।
हे सोम कर्म और रक्षण बल से, तेरी प्रेरणा हम पावें।
कर्म करें और श्रेष्ठ बनें, प्यारे प्रभु के भक्त कहावें।।
हे सोम तेरी कर्म शक्ति, ज्ञान-प्रकाश का रूप दिखाये।
उस से जीवन-दर्शन पा, अपना जीवन श्रेष्ठ बनायें।।

उत्तम भक्ति से बने सोम, तू ज्ञान कर्म धन देता जा।
श्रेष्ठ कर्म कर श्रेष्ठ बनें, यही प्रेरणा देता जा॥
जीवन के इन संघर्षों में, हे अटल सोम तुम आना।
शत्रुभावों का कर विनाश, हमारा जीवन-पथ चमकाना॥
हे पवमान सोम जी हम ने, त्यागभाव से सत्कारा।
श्रेष्ठ हमारा जीवन हो, इसीलिए है तुझे पुकारा॥
हे आह्लादक अद्भुत शक्ति वाले, हम को संपत्ति भर दे।
आयु देने वाली सम्पत्ति से, सर्वोत्तम यह जीवन कर दे॥

तरत्स मन्दी धावति धारा सुतस्यान्धसः। तरत्स मन्दी धावति॥
उस्रा वेद वसूनां मर्तस्य देव्यवसः। तरत्स मन्दी धावति॥
ध्वस्रयोः पुरुषन्त्योरा सहस्राणि दद्महे। तरत्स मन्दी धावति॥
आ ययोस्त्रिंशतं तना सहस्राणि च दद्महे।
तरत्स मन्दी धावति॥५॥

बने प्राणप्रद सोम सरोवर में, साधक जन तरता है।
आनन्द-रस में मगन हुआ, नित-नित उन्नति करता है॥
रक्षा-शक्ति दे धाराएँ, आत्मिक धन देती हैं।
भवसागर पार करावे को, आनन्द के प्रति खेती हैं॥
दुःखनाशक और कर्म प्रकाशक, ज्ञान कर्म को माना है।
अमृत धारा पाकर इस से, सानन्द लक्ष्य को पाना है॥
तीन सौ हजारों इन, आनन्द-धाराओं को हम धारें।
आनन्दी बन भक्त हमेशा, अपना पावन लक्ष्य संवारें॥

एते सोमा असृक्षत गृणानाः शवसे महे। मदिन्तमस्य धारया॥
अभि गव्यानि वीतये नृम्णा पुनानो अर्षसि। सनद्वाजः परि स्रव॥
उत नो गोमतीरिषो विश्वा अर्ष परिष्टुभः।
गृणानो जमदग्निना॥६॥

आनन्द धारा सोम की, जो पी गए महान हैं।
ज्ञान का उपदेश दे, पाया सोम का स्थान है॥
हे सोम आकर ज्ञान दे, अज्ञान का कर नाश तू।
ऐश्वर्य हम को दान कर; कर ज्ञान का प्रकाश तू॥
संकल्पधारी भक्त बन, सोम के हम गीत गायें।
ज्ञान के आलोक से हम, शुभ कर्मों की ओर जायें॥

इमं स्तोममर्हते जातवेदसे रथमिव सं महेमा मनीषया।
भद्रा हि नः प्रमतिरस्य संसद्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥
भरामेध्मं कृणवामा हवींषि ते चितयन्तः पर्वणा पर्वणा वयम् ।
जीवातवे प्रतरां साधया धियोऽग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव ॥
शकेम त्वा समिधं साधया धियस्त्वे देवा हविरदन्त्याहुतम् ।
त्वमादित्याँ आ वह तान् ह्यु३श्मस्यग्ने सख्ये मा रिषामा
वयं तव ॥७॥

पूजनीय अग्नि जो सब में, सब को सुख देने वाला ।
मनन बुद्धि से उसको गायें, मित्र अज्ञान हर लेने वाला ॥
तेरे तेज को जान अंगों में, जागृत हो उपहार धरें ।
ज्ञानप्रदाता जीवन-यज्ञ में, तेरे मित्र बन मोद भरें ॥
तेरे उपहार के योग्य बनें, ज्ञान कर्म बलवान करो ।
दिव्य शक्तियां हवि भोगें, त्यागभाव यह जान भरो ॥
हे ज्ञान-रूप आलोक दाता, दिव्य गुणों का दान दो ।
तेरी मित्रता दुःख न देवे, ऐसा हमें शुभ ज्ञान दो ॥

इति द्वितीयः खण्डः ।

प्रति वां सूर उदिते मित्रं गृणीषे वरुणम् । अर्यमणं रिशादसम् ॥
राया हिरण्यया मतिरियमवृकाय शवसे । इयं विप्रा मेधसातये ॥
ते स्याम देव वरुण ते मित्र सूरिभिः सह ।
इषं स्वश्च धीमहि ॥८॥

मेरे मन में प्रेरक ज्योति, उदय हुई दिखलाती है ।
विघ्नविनाशक विवेक पाऊं, न्यायशक्ति मन भाती है ॥
सुन्दर धन को देने वाली, विवेक-प्रभा जब आ जाए ।
हिंसा कपट रहित बुद्धि से, जीवन में शुद्धि छा जाए ॥
हे पाप विनाशक वरुण सदा, तू सद्भावों में रमण करे ।
अपनी क्रियाशक्ति को लेकर, ज्ञान परम सुख वरण करे ॥

भिन्धि विश्वा अप द्विषः परि बाधो जही मृधः ।
वसु स्पार्हं तदा भर ॥
यस्य ते विश्वमानुषग्भूरेर्दत्तस्य वेदति । वसु स्पार्हं तदा भर ॥

यद्वीडाविन्द्र यत् स्थिरे यत् पर्शाने पराभृतम् ।
वसु स्पार्हं तदा भर ॥९॥
हे इन्द्र मेरे मन से, हिंसा भाव सारे दूर कर।
सब का ही चाहें भला, दिव्यानन्द से मन पूर कर ॥
हे इन्द्र तेरे दान से ही, सारा जग सुख पाता है।
उसे तू आनन्द-धन से भरता, जो तेरे ढिग आता है ॥
हे इन्द्र अदम्य सुन्दर, प्रभुता से प्रभुतावान करो हो।
जिस को पाकर दृढ़ संकल्पी, जन-जग में धनवान हो ॥

यज्ञस्य हि स्थ ऋत्विजा सस्नी वाजेषु कर्मसु ।
इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥
तोशासा रथयावाना वृत्रहणापराजिता । इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥
इदं वां मदिरं मध्वधुक्षन्नद्रिभिर्नरः ।
इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥१०॥
हे इन्द्र अग्नि ! जीवन-यज्ञ के, तुम्हीं चलाने वाले हो।
जीवन में जागृति दो, ज्ञान कर्म सिखाने वाले हो ॥
तुम दोनों जीवन संगर में, सुख से आगे बढ़ते हो।
मुझे ज्ञान दो इसी यज्ञ का, तुम विघ्नों को हरते हो ॥
जीवन-यज्ञ में दिव्य नरों ने, तुम दोनों हित अमृत खींचा।
उसको पान करो यत्नों से, जिस ने मन वाणी सींचा ॥

इति तृतीयः खण्डः ।

इन्द्रायेन्दो मरुत्वते पवस्व मधुमत्तमः । अर्कस्य योनिमासदम् ॥
तं त्वा विप्रा वचोविदः परिष्कृण्वन्ति धर्णसिम् ।
सं त्वा मृजन्त्यायवः ॥
रसं ते मित्रो अर्यमा पिबन्तु वरुणः कवे । पवमानस्य मरुतः ॥११॥
हे आह्लादक प्राण शक्ति, इन्द्र प्रभु हित आता जा।
अमृतमय और मधुर बना तू, ऋत के पास ले जाता जा ॥
आह्लादक रस पैदा करता, वाणी का जो ज्ञाता है।
साधक उसको शुद्ध बनाते, जीवन में जीवन आता है ॥
हे क्रान्तदर्शी तुझे बना कर, आनन्दरस को पीते हैं।
अर्यमा और वरुण शक्तियां, मिलतीं जिससे जीते हैं ॥

मृज्यमानः सुहस्त्या समुद्रे वाचमिन्वसि ।
रयिं पिशङ्गं बहुलं पुरुस्पृहं पवमानाभ्यर्षसि ॥
पुनानो वारे पवमानो अव्यये वृषो अचिक्रदद्वने ।
देवानां सोम पवमान निष्कृतं गोभिरञ्जानो अर्षसि ॥१२॥
हे पवमान चतुर तुझे जब, मन मन्दिर में शुद्ध बनाते ।
शुभ कर्मों की करें प्रेरणा, सुन्दर धन सम्पत्ति लाते ॥
ज्ञानवस्त्र से छना हुआ, सोम भक्तिमय तव में आता ।
इन्द्रिय स्वामी इन्द्र को पा, ज्ञान रश्मियां चमकाता ॥

एतमु त्यं दश क्षिपो मृजन्ति सिन्धुमातरम् । समादित्येभिरख्यत ॥
समिन्द्रेणोत वायुना सुत एति पवित्र आ । सं सूर्यस्य रश्मिभिः ॥
स नो भगाय वायवे पूष्णे पवस्व मधुमान् ।
चारुर्मित्रे वरुणे च ॥१३॥
हृदयवासी परमानन्द को, दसों इन्द्रियाँ शुद्ध करें ।
आदित्य शक्ति सम यश वाले में, दिव्यगुण उद्बुद्ध करें ॥
बना हुआ यह परम रसीला, हृदय सरोवर भर देता ।
इन्द्र प्राणशक्ति देकर, प्रेरक को प्रेरक कर देता ॥
वह अमृतमय आनन्द सदा, भोग्य-शक्ति का दान करे ।
देकर हम को पोषण शक्ति, मित्र वरुण सम बलवान करे ॥

इति चतुर्थः खण्डः ।

रेवतीर्नः सधमाद इन्द्रे सन्तु तुविवाजाः । क्षुमन्तो याभिर्मदेम ॥
आ घ त्वावान् त्मना युक्तः स्तोतृभ्यो धृष्णवीयानः ।
ऋणोरक्षं न चक्र्योः ॥
आ यद् दुवः शतक्रतवा कामं जरितॄणाम् ।
ऋणोरक्षं न शचीभिः ॥१४॥
आत्मा के साथ मेरी, इन्द्रियाँ बलवान हों ।
आनन्द पाकर हम रहें, इन से सदा धनवान हों ॥
हे शत्रुनाशक संयम शक्ति, भक्तों को लक्ष्य दिखा ।
रथ का पहिया धुरि चलाए, वैसे अपना भक्त चला ॥
ज्ञान-कर्म-शक्ति के स्वामी, भक्त सम्पत्तिवान कर ।
रथ के अरे धुरि चलाते, हम को लक्ष्य प्रदान कर ॥

सुरूपकृत्नुमूतये सुदुघामिव गोदुहे। जुहूमसि द्यवि द्यवि ॥
उप नः सवना गहि सोमस्य सोमपाः पिब। गोदा इद्रेवतो मदः ॥
अथा ते अन्तमानां विद्याम सुमतीनाम्।
मा नो अति ख्य आ गहि ॥१५॥
ग्वाले को गैया दूध पिलाए, इन्द्र हमें फल दान करे।
अपना आपा अर्पण करें, हम को वह मतिमान करे ॥
हे परमानन्द के पाने वाले, हम को अपना संग दे।
भक्त जनों का आनन्द तू, ज्ञान-प्रभा में रंग दे ॥
तेरा ऊँचा ज्ञान मिले, तू ही हमें स्वीकार कर ॥

उभे यदिन्द्र रोदसी आपप्राथोषा इव।
महान्तं त्वा महीनां सम्राजं चर्षणीनाम्।
देवी जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥
दीर्घं ह्यङ्कुशं यथा शक्तिं बिभर्षि मन्तुमः।
पूर्वेण मघवन् पदा वयामजो यथा यमः।
देवी जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥
अव स्म दुर्हृणायतो मर्तस्य तनुहि स्थिरम्।
अधस्पदं तमीं कृधि यो अस्माँ अभिदासति।
देवी जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥१६॥
उषा का आलोक चारों, ओर जब है फैल जाता।
हे इन्द्र पृथिवी लोक को, तू ही है जगमगाता ॥
देवी मां ने तुझे बनाया, तू बड़ों बड़ों का स्वामी है।
सब का मंगल करने वाली, का तू ही अनुगामी है ॥
हे वीर मनस्वी इन्द्र तेरे, अंकुश की शक्ति दूर है।
इन्द्रियों का तू ही शासक, तुझ में ज्ञानशक्ति भरपूर है ॥
देवी मां ने तुझे बनाया, तेरा अलौकिक रूप है।
प्रकट किया है उसने तुझ को, जो भूपों का भूप है ॥
हे राजा तू दुष्ट जनों को, नीचा सदा दिखाया कर।
अपनी शक्ति से करो पराजित, भक्तों को सदा बचाया कर ॥
देवी मां ने तुझे बनाया, जो मंगल जग का करती है।
तुझ को उसने जन्म दिया, जो कष्ट सभी के हरती है ॥

इति पञ्चमः खण्डः।

परि स्वानो गिरिष्ठाः पवित्रे सोमो अक्षरत् ।
मदेषु सर्वधा असि ॥
त्वं विप्रस्त्वं कविर्मधु प्र जातमन्धसः । मदेषु सर्वधा असि ॥
त्वे विश्वे सजोषसो देवासः पीतिमाशत ।
मदेषु सर्वधा असि ॥१७॥
बचनों से बंधकर तू आता; मन को मगन किया करता ।
तू है परमानन्द सोम, सब को आनन्द दिया करता ॥
हे सोम ज्ञान-प्रभा का दाता, और क्रांति का नेता तू ।
ज्ञान-रूप से उत्पन्न होकर, सब को अमृत देता तू ॥
दिव्यगुणों से दिव्य बनें सब, अंग तुझी को पीते हैं ।
मगन हुए आनन्दसुधा में, गति का जीवन जीते हैं ॥

स सुन्वे यो वसूनां यो रायामानेता य इळानाम् ।
सोमो यः सुक्षितीनाम् ॥
यस्य त इन्द्रः पिबाद्यस्य मरुतो यस्य वार्यमणा भगः ।
आ येन मित्रावरुणा करामह एन्द्रमवसे महे ॥१८॥
सारे धन बल देने वाला; सोम ज्ञान का दाता है ।
उसी सोम को मैं दुहता हूं; जो परम प्रभु दिखलाता है ॥
हे सोम तुझ को पीकर ही नर, इन्द्र बन प्राण को पाता है ।
भोग, विवेक दिव्य शक्तियों से, बनता भक्त सुखदाता है ॥
मन को दिव्य शक्ति से भर, उत्तम सोम कहाता है ।
भक्त इसी से शक्ति पाकर, बनता सब का त्राता है ॥

तं वः सखायो मदाय पुनानमभि गायत ।
शिशुं न हव्यैः स्वदयन्त गूर्तिभिः ॥
सं वत्स इव मातृभिरिन्दुर्हिन्वानो अज्यते ।
देवावीर्मदो मतिभिः परिष्कृतः ॥
अयं दक्षाय साधनोऽयं शर्धाय वीतये ।
अयं देवेभ्यो मधुमत्तरः सुतः ॥१९॥
मित्रो बुलाओ उसी सोम को, शिशु सम सब का प्यारा है ।
यज्ञ करें और उसे रिझायें, जो आनन्द-रस की धारा है ॥

माता अपने बच्चे को, पाल पोसकर बड़ा बनाती।
दिव्य गुणी सोम भक्ति बहती, ज्ञान-प्रकाश उपजाती।।
सब अंगों को श्रेष्ठ बना, उत्तम हो यह कर्म कराती।
यह अमृत है मेरे तन का, मन का तम है नाश करे।।
उत्तम कर्म करवाने को, दिव्यगुण प्रकाश करे।।

सोमाः पवन्त इन्दवोऽस्मभ्यं गातुवित्तमाः।
मित्राः स्वाना अरेपसः स्वाध्यः स्वर्विदः।।
ते पूतासो विपश्चितः सोमासो दध्याशिरः।
सूरासो न दर्शतासो जिगत्नवो ध्रुवा घृते।।
सुष्वाणासो व्यद्रिभिश्चिताना गोरधि त्वचि।
इषमस्मभ्यमभितः समस्वरन् वसुविदः।।२०।।
मार्गदर्शक आनन्ददाता, सोम बहता आ रहा।
यह हमारा मित्र प्रेरक, योग से सुख ला रहा।।
सूर्य सम यह सोम हमारी, बुद्धि को चमकाता है।
ध्यान धारण से शुद्ध हुआ, ज्ञान की ज्योति जगाता है।।
योग ध्यान से बहकर आए, अज्ञान निशा का नाश करे।
ऐश्वर्य देने के लिए हमारी, कर्मशक्ति का विकास करे।।

अया पवा पवस्वैना वसूनि मांश्चत्व इन्दो सरसि प्र धन्व।
ब्रध्नश्चिद्यस्य वातो न जूतिं पुरुमेधाश्चित्तकवे नरं धात्।।
उत न एना पवया पवस्वाधि श्रुते श्रवाय्यस्य तीर्थे।
षष्टिं सहस्रा नैगुतो वसूनि वृक्षं न पक्वं धूनवद्रणाय।।
महीमे अस्य वृष नाम शूषे मांश्चत्वे वा पृशने वा वधत्रे।
अस्वापयन् निगुतः स्नेहयच्चापामित्राँ अपाचितो अचेतः।।२१।।
हे आह्लादक पावन रस से, मन मेरा भरपूर कर।
मेधावी और संयमी बनाकर, बाधाएँ सब दूर कर।।
तेरे वायु वेग को कोई, संयमी जन ही पाता है।
स्थिर साधक ही जीवन पथ में, उन्नति करता जाता है।।
मेरा अन्तःकरण भरा हो, ज्ञान की पावन धारा से।
कानों को यह मीठा लगता, छुड़ाता अज्ञान कारा से।।
पके हुए फल खाने को, नर जैसे पेड़ हिलाता है।
सुख सम्पत्ति चाहने वाला, सोम को भक्त बुलाता है।।

सोम प्रभु के अस्त्र हैं दो, सुख देना, दुःख हर लेना।
शत्रु जनों को सदा सुला के, ज्ञान की ज्योति भर देना ॥
सब को छूकर पीड़ा हरता, छिपे शत्रु का करे संहार।
ज्ञान दिलाता सुख पहुंचाता, करता भक्तों का उद्धार ॥

इति षष्ठः खण्डः ।

अग्ने त्वं नो अन्तम उत त्राता शिवो भुवो वरूथ्यः ॥
वसुरग्निर्वसुश्रवा अच्छा नक्षि द्युमत्तमो रयिं दाः ॥
तं त्वा शोचिष्ठ दीदिवः सुम्नाय नूनमीमहे सखिभ्यः ॥२२॥
हे अग्ने रक्षक सुखकारी, तू पास हमारे रहता है।
वरने योग्य है सदा हमारा, तुझ से ही सुख बहता है ॥
वह अग्नि है सब में रहता, सब को धारण करता है।
अन्तर्ज्ञान का देने वाला, त्यागभरा धन भरता है ॥

इमा नु कं भुवना सीषधेमेन्द्रश्च विश्वे च देवाः ॥
यज्ञं च नस्तन्वं च प्रजां चादित्यैरिन्द्रः सह सीषधातु ॥
आदित्यैरिन्द्रः सगणो मरुद्भिरस्मभ्यं भेषजा करत् ॥२३॥
इन्द्रियजित से शक्ति पा, सब अंगों को दिव्य बनावें।
दिव्य गुणों से कर्म करें, लोक लोक में यश पावें ॥
जो इन्द्रियों का स्वामी है, वही इन्द्र कहाता।
घर समाज और अपना, जीवन सफल बनाता ॥
इन्द्र बना वह शक्ति देता, उत्तम भाव प्रकाश करे।
विचार हमारे ऊँचे करके, रोग शोक का नाश करे ॥

प्र व इन्द्राय वृत्रहन्तमाय विप्राय गाथं गायत यं जुजोषते ॥
अर्चन्त्यर्कं मरुतः स्वर्का आ स्तोभति श्रुतो युवा स इन्द्रः ॥
उप प्रक्षे मधुमति क्षियन्तः पुष्येम रयिं धीमहे त इन्द्रः ॥२४॥
गान करो उस इन्द्र देव का, जो विघ्नों का नाश करे।
हो प्रसन्न वह स्तुतिगान से, ज्ञान ज्योति प्रकाश करे ॥
श्रेष्ठ जन जब उस प्रभु के गीत गाते हैं।
पूज्य शक्तिशाली इन्द्र को रक्षक बनाते हैं ॥

पुष्ट बनें हम पाकर, दान योग्य धन धान पिता।
परमानन्द को पाने के हित करें तुम्हारा ध्यान पिता॥

इति सप्तमः खण्डः। इति प्रथमोऽर्धः॥

अथ द्वितीयोऽर्धः।

प्र काव्यमुशनेव ब्रुवाणो देवो देवानां जनिमा विवक्ति।
महिव्रतः शुचिबन्धुः पावकः पदा वराहो अभ्येति रेभन्॥
प्र हंसासस्तृपला वग्नुमच्छामादस्तं वृषगणा अयासुः।
अङ्गोषिणं पवमानं सखायो दुर्मर्षं वाणं प्र वदन्ति साकम्॥
स योजत उरुगायस्य जूतिं वृथा क्रीडन्तं मिमते न गावः।
परीणसं कृणुते तिग्मशृङ्गो दिवा हरिर्ददृशे नक्तमृज्रः॥
प्र स्वानासो रथा इवार्वन्तो न श्रवस्यवः। सोमासो राये अक्रमुः॥
हिन्वानासो रथा इव दधन्विरे गभस्त्योः। भरासः कारिणामिव॥
राजानो न प्रशस्तिभिः सोमासो गोभिरञ्जते।
यज्ञो न सप्त धातृभिः॥
परि स्वानास इन्दवो मदाय बर्हणा गिरा। मधो अर्षन्ति धारया॥
आपानासो विवस्वतो जिन्वन्त उषसो भगम्।
सूरा अण्वं वि तन्वते॥
अप द्वारा मतीनां प्रत्ना ऋण्वन्ति कारवः। वृष्णो हरस आयवः॥
समीचीनास आशत होतारः सप्तजानयः। पदमेकस्य पिप्रतः॥
नाभा नाभिं न आ ददे चक्षुषा सूर्यं दृशे। कवेरपत्यमा दुहे॥
अभि प्रियं दिवस्पदमध्वर्युभिर्गुहा हितम्।
सूरः पश्यति चक्षसा॥१॥
सोम सम हो क्रांतद्रष्टा, परमानन्द यह रूप है।
प्रातिभ ज्ञान का देने वाला, दिव्य गुणों का भूप है॥
कर्मबुद्धि को बढ़ाता, धर्ममेघ सा सुख वर्षाता।
तेजस्वी यह सब का प्यारा, जीवन पथ में गति कराता॥
अनहद नाद से गुंजित होकर, हंसगति से बढ़ता जाता।
अंग अंग को चमका देता, अन्तःकरण में जब आता॥

यह अजेय यह पावन शक्ति, इस को हम सब गाते हैं।
यही मित्र है सब का प्यारा, इस को ही हम ध्याते हैं॥
परमानन्द यह शक्ति वाला, सब में ही छा जाता है।
चंचल इन्द्रियों के द्वारा, कभी न नापा जाता है॥
तीव्र ज्ञान की ज्योति लेकर, सोम जन जीवन में भरता।
सभी हानियां दूर हटा कर, जीवन को है पूरण करता॥
सुखदायी घोड़ों का रथ बुलाते, सोम दौड़ते आते हैं।
अन्तर्ज्ञान के देने वाले, सुख सम्पत्ति लाते हैं॥
सुखदायी रथ पर चढ़ के, जीवन यात्रा करते हैं।
सोम ज्ञान अंगों में आकर, कला से इनको भरते हैं॥
स्तुति गीतों से राजा चमके, ऋत्विजगण हैं यज्ञ कराते।
परमानन्द का रूप चमकता, ज्ञान किरणों का स्पर्श पाते॥
जनकल्याणी वेदवाणी से, परमानन्द जो आया है।
हमें उल्लास को देने, अमृत भर के लाया है॥
इन्द्र जो सब को धारण करे, सोम का वही पान करे।
सब को देकर सुख सम्पत्ति, सूक्ष्म तत्त्व का ज्ञान भरे॥
सोम बड़ा कलाकार है, सुखवर्षक तेज दिलाता।
विचारशक्ति को उन्नत करके, प्रभु का गौरव दिखलाता॥
पांच ज्ञान को देने वाली, इन्द्रियों का जो स्वामी है।
जीवन-यज्ञ में जीवन भरता; वही सोम जो नामी है॥
ज्ञान-चक्षु से सब के प्रेरक को, सोम मुझे दिखलाता।
मुक्ति देकर वही क्रान्तदर्शी, परमानन्द दिलवाता॥
भक्तों का प्यारा सोम सदा, आलोक लोक में रहता।
ज्ञान-कृपा से देखा जाता, यज्ञ करो यही है कहता॥

इति प्रथमः खण्डः।

असृग्रमिन्दवः पथा धर्मन्नृतस्य सुश्रियः। विदाना अस्य योजना॥
प्र धारा मधो अग्रियो महीरपो वि गाहते। हविर्हविःषु वन्द्यः॥
प्र युजा वाचो अग्रियो वृषो अचिक्रदद्वने।
सद्माभि सत्यो अध्वरः॥
परि यत्काव्या कविर्नृम्णा पुनानो अर्षति। स्वर्वाजी सिषासति॥

पवमानो अभि स्पृधो विशो राजेव सीदति। यदीमृण्वन्ति वेधसः ॥
अव्या वारे परि प्रियो हरिर्वनेषु सीदति। रेभो वनुष्यते मती ॥
स वायुमिन्द्रमश्विना साकं मदेन गच्छति।
रणा यो अस्य धर्मणा॥
आ मित्रे वरुणे भगे मधोः पवन्त ऊर्मयः।
विदाना अस्य शक्मभिः॥
अस्मभ्यं रोदसी रयिं मध्वो वाजस्य सातये।
श्रवो वसूनि सञ्जितम्॥
आ ते दक्षं मयोभुवं वह्निमद्या वृणीमहे। पान्तमा पुरुस्पृहम्॥
आ मन्द्रमा वरेण्यमा विप्रमा मनीषिणम्। पान्तमा पुरुस्पृहम्॥
आ रयिमा सुचेतुनमा सुक्रतो तनूष्वा। पान्तमा पुरुस्पृहम्॥२॥

सत्यधारी परमानन्द, परम सत्य से आता है।
परम सत्य पाने को, वही मार्ग दिखाता है॥
सब से ऊँचा नामी, हवि रूप जो सोम कहाता।
अमृत की धारा बन, कर्मसागर से पार कराता॥
सुखवर्धक यह सोम हमारी, वाणी में जब आता।
अन्तिम लक्ष्य प्रभु के घर को, ओर हमें ले जाता॥
क्रांतदर्शक सोम हमारे, घन वाणी को जब उपजाता।
बलशाली शक्ति देकर, परम सुख का दर्श कराता॥
ज्ञान कर्म की सभी इन्द्रियां, जब सोम को पाती हैं।
तेज भरा यह सब का राजा, इसकी शोभा गाती हैं॥
दुःखनाशक यह प्यारा सोम, ज्ञान के परदे पार करे।
अनहद नाद से प्रेरित हो, मननशक्ति से धार झरे॥
सोम की धारणशक्ति में, जो भक्त सदा रमता रहता।
प्राणशक्ति मनःशक्ति से, इन्द्रियों को वश में गहता॥
अमृत की जो ऊँची धारा, सोमशक्ति संग गमन करे।
साधक को दिव्य गुण देकर, वरुण मित्र संग रमन करे॥
द्यावा पृथिवी बल देने को, अमर सम्पत्ति दान करे।
अन्तःकरण का प्रेरक सोम, उसका ही यह गान करे॥
तेरा ओज जो सुख लाता, सब का जो शुभकारी।
मांग रहे हम उस पावक को, जो सब का हितकारी॥

शुभ कर्म कराने वाले, तेरा ओज सम्पत्तिदाता।
मांग रहे हम उसी इष्ट को, जो मेरे अंगों में रम जाता॥

इति द्वितीयः खण्डः।

मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आ जातमग्निम्।
कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्नः पात्रं जनयन्त देवाः॥
त्वां विश्वे अमृत जायमानं शिशुं न देवा अभि सं नवन्ते।
तव क्रतुभिरमृतत्वमायन् वैश्वानर यत्पित्रोरदीदेः॥
नाभिं यज्ञानां सदनं रयीणां महामाहावमभि सं नवन्त।
वैश्वानरं रथ्यमध्वराणां यज्ञस्य केतुं जनयन्त देवाः॥३॥

सब से उत्तम दिव्य प्रभु, सब को ही सुख देता है।
ऋत से उत्पन्न क्रांतिकारी, सब अंधकार हर लेता है॥
पूजनीय रक्षक अग्नि, संकल्परूप में आता है।
हमारी इन्द्रियां उसको पातीं, जो सब का ही त्राता है॥
हे अग्ने तू सब में रहता, ज्ञान-प्रकाश करने वाला।
कर्म प्रेरणा से अंगों में, अमर शक्ति भरने वाला॥
दिव्य गुण और सभी इन्द्रियां, तुझ से इतना प्यार करें।
मात पिता प्यारे शिशु को, दिल से जैसे दुलार करें॥
यज्ञ-कर्म का धारक है जो, सुख सम्पत्ति का भण्डार।
तृष्णा शान्त वह अग्नि करता, होकर शीतल जल धार॥
सब में व्यापक सब से पूजित, उन्नति-पथ दिखलाता।
सारी इन्द्रियां उस को पातीं, श्रेष्ठ कर्म जो करवाता॥

प्र वो मित्राय गायत वरुणाय विपा गिरा। महि क्षत्रावृतं बृहत्॥
सम्राजा या घृतयोनी मित्रश्चोभा वरुणश्च।
देवा देवेषु प्रशस्ता॥
ता नः शक्तं पार्थिवस्य महो रायो दिव्यस्य।
महि वां क्षत्रं देवेषु॥४॥

ज्ञान से उन्नत वाणी से, वरुण शक्ति की करो पुकार।
मित्र बनें और दोष हटायें, चिन्ताओं से करे उद्धार॥
वे दोनों हैं शक्तिशाली, महान सत्य को धारे हैं।
वरुण मित्र की करो प्रशंसा, सब के मित्र प्यारे हैं॥

गीत गाओ मित्र वरुण के, जो सदा चमकने वाले हैं।
ज्ञान की ज्योति उनकी माता, उत्तमगुण रखवाले हैं।।
हे मित्र वरुण हम को लौकिक, दिव्य सुख देते हो।
शक्ति भर के सब अंगों में, दुर्बलता हर लेते हो।।
हे मित्र वरुण तुम दोनों दिव्य, लौकिक सुखों का प्रकाश करो।
शक्ति भर दो सब अंगों में, दुर्बलता सदा विनाश करो।।

इन्द्रा याहि चित्रभानो सुता इमे त्वायवः।
अण्वीभिस्तना पूतासः।।
इन्द्रा याहि धियेषितो विप्रजूतः सुतावतः। उप ब्रह्माणि वाघतः।।
इन्द्रा याहि तूतुजान उप ब्रह्माणि हरिवः।
सुते दधिष्व नश्चनः।।५।।
हे इन्द्र तू अद्‌भुत शोभा वाला, हम सब तुझ को पावें।
तेरे कारण सोम टपकता, ज्ञान सुधा से सदा नहावें।।
हे इन्द्र तू प्रज्ञा से प्रेरित, विकसित बुद्धि से मिलता है।
वेद ज्ञानियों के ज्ञानमयी, स्तुतियों से तू खिलता है।।
हे इन्द्र शीघ्र इन्द्रिय जीत, वेदज्ञों के गीत रसीले कर।
आत्मयज्ञ में श्रद्धा भरकर, गीतों में भाव छबीले भर।।

तमीडिष्व यो अर्चिषा वना विश्वा परिष्वजत्।
कृष्णा कृणोति जिह्वया।।
य इद्ध आविवासति सुम्नमिन्द्रस्य मर्त्यः। द्युम्नाय सुतरा अपः।।
ता नो वाजवतीरिष आशून् पिपृतमर्वतः।
एन्द्रमग्निं च वोढवे।।६।।
हे साधक अग्नि को ध्याओ, जिसका तेज भोगों में रहता।
कोई पाप कोई भी पापी, उसकी ज्वाला-तेज न सहता।।
सारे नाशवान जनों में, उस अग्नि का तेज समाया।
इन्द्र को सुख देकर, ज्ञानी का कर्मजाल कटवाया।।
इन्द्र अग्नि से सुख पावें, विनय उन्हीं से करते हैं।
ज्ञानेन्द्रियों में ज्ञान भरें, कर्मेन्द्रियों को जड़ता हरते हैं।।

इति तृतीयः खण्डः।

अो अयासीदिन्दुरिन्द्रस्य निष्कृतं सखा सख्युर्न प्र मिनाति सङ्गिरम् ।
मर्य इव युवतिभिः समर्षति सोमः कलशे शतयाम्ना पथा ।।
प्र वो धियो मन्द्रयुवो विपन्युवः पनस्युवः संवरणेष्वक्रमुः ।
हरिं क्रीडन्तमभ्यनूषत स्तुभोऽभि धेनवः पयसेदशिश्रयुः ।।
आ नः सोम संयतं पिप्युषीमिषमिन्दो पवस्व पवमान ऊर्मिणा ।
या नो दोहते त्रिरहन्नसश्चुषी क्षुमद्वाजवन्मधुमत्सुवीर्यम् ।।७।।
सोम रसीला मित्र इन्द्र का, इन्द्र को मिलने आता है ।
सच्चा मित्र प्रेमी मित्र का, साथ निभाता जाता है ।।
सुन्दर वीर युवती नारी से, चलता शोभा पाता है ।
सोम सजीली ज्ञान-प्रभा संग, मन मन्दिर में भाता है ।।
आनन्द खोज में सोमशक्तियां, गीत इन्द्र के गाती हैं ।
विघ्नवृत्तियां उसके बल से, छिन्न भिन्न हो जाती हैं ।।
गउएँ बनकर परमानन्द रस, अमृत का लाती हैं ।
दुःखहर्ता इन्द्र की स्तुति कर, उसमें ही रम जाती हैं ।।

न किष्टं कर्मणा नशद्यश्चकार सदावृधम् ।
इन्द्रं न यज्ञैर्विश्वगूर्तमृभ्वसमधृष्टं धृष्णुमोजसा ।।
अषाढमुग्रं पृतनासु सासहिं यस्मिन्महीरुरुज्रयः ।
सं धेनवो जायमाने अनोनवुर्द्यावः क्षामीरनोनवुः ।।८।।
यज्ञ कर्म से ज्ञान धर्म से, जो इन्द्र की पदवी पाता है ।
बड़े-बड़े कर्मों वाला भी, उस विजयी से नीचे जाता है ।।
वीर तेजस्वी इन्द्र सा योद्धा, रणभूमि में गमन करे ।
आलोक धरा की सारी किरणें, उस पूर्ण को नमन करें ।।

इति चतुर्थः खण्डः

सखाय आ नि षीदत पुनानाय प्र गायत ।
शिशुं न यज्ञैः परि भूषत श्रिये ।।
समी वत्सं न मातृभिः सृजता गयसाधनम् ।
देवाव्यं३ मदमभि द्विशवसम् ।।
पुनाता दक्षसाधनं यथा शर्धाय वीतये ।
यथा मित्राय वरुणाय शन्तमम् ।।९।।

आओ मित्रो मिलकर, सोम शक्ति का गान करें।
यज्ञकर्म से उसे सजायें, प्यारे बालक सम मान करें॥
सुख सम्पत्ति दिव्य गुणों का, जो है आनन्ददाता।
उसे बुलाओ उसे मिलाओ, इन्द्रियां उसकी माता॥
शरीर को बलवान करने हित, सोम का साधन करो।
मित्र वरुण की शक्ति पायें, ऐसा बल सम्पादन करो॥

प्र वाज्यक्षाः सहस्रधारस्तिरः पवित्रं वि वारमव्यम्॥
स वाज्यक्षाः सहस्ररेता अद्भिर्मृजानो गोभिः श्रीणानः॥
प्र सोम याहीन्द्रस्य कुक्षा नृभिर्येमानो अद्रिभिः सुतः॥१०॥
परमानन्द है शक्तिशाली, कई धारा में बहता है।
अज्ञान का पर्दा काट दिया, यह मन मंदिर में रहता है॥
विविध शक्तियों का उत्पादक, कर्मकुशलता दिखलाता।
ज्ञान की किरणों से पककर, यह रस हृदय में आता॥
भक्तजनों से सिद्ध हुआ, परमानन्द रस मन में आ।
मन:शक्ति की दिव्यगुफा, अन्त:करण में दर्श दिखा॥

ये सोमासः परावति ये अर्वावति सुन्विरे। ये वादः शर्यणावति॥
य आर्जीकेषु कृत्वसु ये मध्ये पस्त्यानाम्। ये वा जनेषु पञ्चसु॥
ते नो वृष्टिं दिवस्परि पवन्तामा सुवीर्यम्।
स्वाना देवास इन्दवः॥११॥
परमानन्द रस जो दूर पास से, अन्त:करण में आता है।
सब के काम सरल करे, गृहीजनों में शोभा पाता है॥
दिव्य आनन्द का देने वाला, रस यह शक्ति दान करे।
प्रकाशलोक से आने वाली, सकला ज्ञान घटा से भरे॥

इति पञ्चमः खण्डः।

आ ते वत्सो मनो यमत् परमाच्चित् सधस्थात्।
अग्ने त्वां कामये गिरा॥
पुरुत्रा हि सदृङ्ङसि दिशो विश्वा अनु प्रभुः।
समत्सु त्वा हवामहे॥
समत्स्वग्निमवसे वाजयन्तो हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्॥१२॥

हे अग्ने यह मन मेरा, तेरा प्यारा पुत्र कहाता।
तेरे संग ही बंधा हुआ है, चाहे कहीं है आता जाता॥
ऊँचे स्थानों पर रहकर, यह भक्त आपका बना हुआ।
गीत प्रशंसा के गा-गाकर, तेरी इच्छा से सना हुआ॥
हे अग्ने तुम समदृष्टि, सब ओर से रक्षा करते हो।
संघर्षों में तेरी याद करें, सब कष्ट हमारे हरते हो॥
संघर्षों में शक्ति ज्ञान मिले, रक्षा पा उन्नति मार्ग गहैं।
उस अग्नि को हम ध्यावें, सम्पत्तिशाली बने रहैं॥

त्वं न इन्द्रा भर ओजो नृम्णं शतक्रतो विचर्षणे।
आ वीरं पृतनासहम्॥
त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ।
अथा ते सुम्नमीमहे॥
त्वां शुष्मिन् पुरुहूत वाजयन्तमुप ब्रुवे सहस्कृत।
स नो रास्व सुवीर्यम्॥१३॥

शतबुद्धि और कर्म के साधक, सब लोकों को देखा करते।
बल वीर्य से भर दो हम को, वीर शत्रु से जीता करते॥
हे बलशाली, बलदाता इन्द्र, मन को भेद बताता हूं।
ज्ञान-शक्ति, सम्पत्तिदाता, तेरी शरण में आता हूं॥

यदिन्द्र चित्र म इह नास्ति त्वादातमद्रिवः।
राधस्तन्नो विदद्वस उभयाहस्त्या भर॥
यन्मन्यसे वरेण्यमिन्द्र द्युक्षं तदा भर।
विद्याम तस्य ते वयमकूपारस्य दावनः॥
यत्ते दित्सु प्रराध्यं मनो अस्ति श्रुतं बृहत्।
तेन दृढा चिदद्रिव आ वाजं दर्षि सातये॥१४॥

हे ज्ञानी हे सब से ऊपर, मैं ज्ञानधन हूँ मांगता।
दान कर दोनों करों से, मैं शरण तेरी चाहता॥
हे इन्द्र तू जिसकी उन्नति चाहे, ज्ञान प्रकाश से भर दे।
संकल्परूप हो मन में रहता, मन को सुन्दर कर दे॥

तेरी विशाल प्रेरणा शक्ति, मनन की साथी बन रहती।
सभी दिशाओं में छाई, सब को तेरे गुण है कहती॥
कठिन काम करने साधक, इन्द्र, ज्ञान का भाग दो।
ज्ञान राशि के टुकड़े करके, जीवन में अनुराग दो॥

इति षष्ठः खण्डः। इति द्वितीयोऽर्धः।

इति चतुर्थः प्रपाठकः।

अथ पञ्चमः प्रपाठकः

(प्रथमोऽर्धः)

शिशुं जज्ञानं हर्यतं मृजन्ति शुम्भन्ति विप्रं मरुतो गणेन ।
कविर्गीर्भिः काव्येन कविः सन्त्सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ॥
ऋषिमना य ऋषिकृत् स्वर्षाः सहस्रनीथः पदवीः कवीनाम् ।
तृतीयं धाम महिषः सिषासन्त्सोमो विराजमनु राजति ष्टुप् ॥
चमूषच्छ्येनः शकुनो विभृत्वा गोविन्दुर्द्रप्स आयुधानि बिभ्रत् ।
अपामूर्मिं सचमानः समुद्रं तुरीयं धाम महिषो विवक्ति ॥१॥

प्राण एवं विचारशक्ति जगाती, सोए हुए ज्ञान को ।
सोम को है सिद्ध करती, देती आनन्द महान को ॥
ज्ञान-दाता वाणियों से, क्रांतद्रष्टा सोम आता ।
प्रेरणा अन्तःकरण में दे, मन की छलनी में समाता ॥
कर्मविचार में दूरदृष्टि उत्पन्न कर, सुख दान करता ।
शक्तिशाली सोम सोए भक्त के मन आनन्द भरता ॥
गीत गाऊँ क्रांतदर्शी सोम के, प्रेम से मैं हर घड़ी ।
वह स्तुति के योग्य है, उस की है महिमा बड़ी ॥
मन बुद्धि इन्द्रियों का स्वामी, पक्षी सम स्वाधीन ।
सागर सम आनन्द भरा, आनन्द भोगे मन मीन ॥
ज्ञान की किरणें फैलाता, गति शक्ति का दान करे ।
चौथा मुक्तिधाम दिला, भक्त को आनन्दवान करे ॥

एते सोमा अभि प्रियमिन्द्रस्य काममक्षरन् ।
वर्धन्तो अस्य वीर्यम् ॥
पुनानासश्चमूषदो गच्छन्तो वायुमश्विना । ते नो धत्त सुवीर्यम् ॥
इन्द्रस्य सोम राधसे पुनानो हार्दि चोदय । देवानां योनिमासदम् ॥
मृजन्ति त्वा दश क्षिपो हिन्वन्ति सप्त धीतयः ।
अनु विप्रा अमादिषुः ॥
देवेभ्यस्त्वा मदाय कं सृजानमति मेष्यः । सं गोभिर्वासयामसि ॥

पुनानः कलशेष्वा वस्त्राण्यरुषो हरिः । परि गव्यान्यव्यत ॥
मघोन आ पवस्व नो जहि विश्वा अप द्विषः ।
इन्दो सखायमा विश ॥
नृचक्षसं त्वा वयमिन्द्रपीतं स्वर्विदम् । भक्षीमहि प्रजामिषम् ॥
वृष्टिं दिवः परि स्रव द्युम्नं पृथिव्या अधि ।
सहो नः सोम पृत्सु धाः ॥२॥

सोमशक्तियों से इन्द्र जन की बल शक्ति बढ़ जाती है ।
सभी कामना पूरी होती, कीर्ति दिशि दिशि छाती है ॥
बुद्धि इन्द्रियां अन्तःकरण का, सोम प्रभु ही स्वामी है ।
शीघ्रगति से मिले इन्द्र को, पाता बल वह नामी है ॥
हे सोम इन्द्र को विजय दिलाने, बह बहकर तू आता जा ।
अन्तःकरण को प्रेरित कर, इन्द्रियों को दिव्य बनाता जा ॥
दसों इन्द्रियां ज्ञान कर्म से, तुझ को शुद्ध बनाती हैं ।
ऊँचे ज्ञानी आनन्द पाते, सातों वृत्तियां ध्यान कराती हैं ॥
हे सोम हम ज्ञानशक्ति से, अंगों को सुखी बनाते हैं ।
ज्ञानरश्मियों से ढक कर तुझे, सुख संसार बसाते हैं ॥
अंग अंग को पुलकित करता, कांतिमान दुःखहारी है ।
परमानन्द रस ज्ञान किरणों का, सुन्दर वस्त्रधारी है ॥
ज्ञान-धनों से धनी बनें, वे ही भक्त तुझे पाते ।
इन्द्र मित्र के साथी बन, द्वेषभाव का नाश कराते ॥
तू ज्ञानी है तू ही इन्द्र है, तू ही सोम का पान करे ।
उसी सोम को हम पावें जो जीवन उच्च महान करे ॥
हे सोम तू प्रकाशलोक से, धरा पर तेज गिराता जा ।
संघर्षों को सहन करें, वह शक्ति हमें दिलाता जा ॥

इति प्रथमः खण्डः ।

सोमः पुनानो अर्षति सहस्रधारो अत्यविः ।
वायोरिन्द्रस्य निष्कृतम् ॥
पवमानमवस्यवो विप्रमभि प्र गायत । सुष्वाणं देववीतये ॥
पवन्ते वाजसातये सोमाः सहस्रपाजसः । गृणाना देववीतये ॥
उत नो वाजसातये पवस्व बृहतीरिषः । द्युमदिन्दो सुवीर्यम् ॥

अत्या हियाना न हेतृभिरसृग्रं वाजसातये । वि वारमव्यमाशवः ॥
ते नः सहस्त्रिणं रयिं पवन्तामा सुवीर्यम् । स्वाना देवास इन्दवः ॥
वाश्रा अर्षन्तीन्दवोऽभि वत्सं न मातरः । दधन्विरे गभस्त्योः ॥
जुष्ट इन्द्राय मत्सरः पवमानः कनिक्रदत् ।
विश्वा अप द्विषो जहि ॥
अपघ्नन्तो अराव्णः पवमानाः स्वर्दृशः । योनावृतस्य सीदत ॥३॥

सोम की धारा बहती आए, ज्ञान के परदे पार कर ।
केवल इन्द्र को है मिलती, प्राणशक्ति को धार कर ॥
रक्षा की यदि इच्छा है, दिव्य इन्द्रियों का चाहो भोग ।
विचारशक्ति के विकसितकर्ता, पवमान प्रभु को गाओ लोग ॥
दिव्यता देने वाला है जो, बह रहा यह सोम है ।
ज्ञान बल को प्राप्त कर लो, कह रहा यह सोम है ॥
आनन्ददाता सोम हम को, प्रेरणा महान दो ।
बल और शक्ति पा सकें, ऐसा हमें विज्ञान दो ॥
ज्ञान किरण से प्रेरित हो, सोम ज्ञान से आता है ।
ज्ञान-लाभ की शक्ति देकर, विज्ञान का दान कराता है ॥
वह दिव्य सोम प्रेरणा दे, आनन्द का भान कराये ।
अनेक शक्ति को देने वाली, संपत्ति से धनवान बनाये ॥
धेनु प्रेमपाश में बंधकर, बछड़ों के ढिग जाती है ।
सोम इन्द्र की बांहों में हो, इन्द्रियां प्रेरणा पाती हैं ॥
सोम आनन्द का देने वाला, और इन्द्र का प्यारा है ।
पवमान प्रेरणा देता है, सोम द्वेष नशावन हारा है ॥
संकीर्ण भाव का नाश करे, कल्याण का पथ दिखलाइए ।
पवमान सोम हम सब को, परम सत्य कर्म में लगाए ॥

इति द्वितीयः खण्डः ।

सोमा असृग्रमिन्दवः सुता ऋतस्य धारया । इन्द्राय मधुमत्तमाः ॥
अभि विप्रा अनूषत गावो वत्सं न धेनवः । इन्द्रं सोमस्य पीतये ॥
मदच्युत् क्षेति सादने सिन्धोरूर्मा विपश्चित् ।
सोमो गौरी अधि श्रितः ॥

दिवो नाभा विचक्षणोऽव्या वारे महीयते ।
सोमो यः सुक्रतुः कविः ॥
यः सोमः कलशेष्वा अन्तः पवित्र आहितः । तमिन्दुः परि षस्वजे ॥
प्र वाचमिन्दुरिष्यति समुद्रस्याधि विष्टपि ।
जिन्वन् कोशं मधुश्चुतम् ॥
नित्यस्तोत्रो वनस्पतिर्धेनामन्तः सबर्दुघाम् ।
हिन्वानो मानुषा युजा ॥
आ पवमान धारया रयिं सहस्रवर्चसम् । अस्मे इन्दो स्वाभुवम् ॥
अभि प्रिया दिवः कविर्विप्रः स धारया सुतः ।
सोमो हिन्वे परावति ॥४॥

आह्लादक सिद्ध सोम यह बहता, परम सत्य को धारा से ।
इन्द्रियजित के हित ही चलता, मधुरामृत की कारा से ॥
प्रेममयी दुधारु गउएँ, बछड़ों को दूध पिलाती हैं ।
ज्ञानशक्ति से भरी इन्द्रियां, इन्द्र को सोम दिलाती हैं ॥
शुभ्र चित्त में बढ़ कर सोम, बुद्धि आनन्द देता है ।
सागर सम लहराती वृत्तियों का, अन्तःकरण सहारा लेता है ॥
ज्ञान प्रकाश केन्द्र सोम, चित्त के परदे पार करे ।
क्रान्ति लाकर पूज्य सोम, शुभ कर्मों का विस्तार करे ॥
जो सोम इन्द्रियों का साक्षी, अन्तःकरण में धारा है ।
आनन्द मिले इससे मिलकर, यही इन्द्र का प्यारा है ॥
आनन्ददाता सोम बहाता, अन्तःकरण से रसधारा ।
प्रेरकवाणी का साथी यह, अमृतकोष दिलाने हारा ॥
करें स्तुति हम पूज्य सोम की, योगसाधना आती है ।
प्रेरित हो सुख वर्षा करके, साधक के मन भाती है ॥
हे पवमान हे आनन्ददाता, सुख के लिए सम्पत्ति दान कर ।
शक्ति देकर भांति भांति की, हम को ऐश्वर्यवान कर ॥
गतिशीला सोम की धारा, ऊँचे विचार बनाती है ।
दूर देश में सोम विराजे, ज्योति वहां से आती है ॥

इति तृतीयः खण्डः ।

उत्ते शुष्मास ईरते सिन्धोरूर्मेरिव स्वनः ।
वाणस्य चोदया पविम् ॥
प्रसवे त उदीरते तिस्रो वाचो मखस्युवः । यदव्य एषि सानवि ॥
अव्या वारैः परि प्रियं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । पवमानं मधुश्चुतम् ॥
आ पवस्व मदिन्तम पवित्रं धारया कवे । अर्कस्य योनिमासदम् ॥
स पवस्व मदिन्तम गोभिरञ्जानो अक्तुभिः ।
एन्द्रस्य जठरं विश ॥५॥
शोर मचाती सागर लहरें, सब को जैसे प्रेरित करतीं ।
तेरी शक्तियां वैसे बढ़तीं, कर्मशक्ति से आलस हरतीं ॥
सोम ज्ञान की सब से ऊँची, चोटी ऊपर जब आता ।
ज्ञान कर्म और कर्मवाणियां, सब को है वह उपजाता ॥
प्रिय मनोहर सोम शक्ति को, साधन से उपजाते हैं ।
पवमान सोम ही भक्तों के हित, अमृतघट भिजवाते हैं ॥

इति चतुर्थः खण्डः ।

अया वीती परि स्रव यस्त इन्दो मदेष्वा । अवाहन्नवतीर्नव ॥
पुरः सद्य इत्थाधिये दिवोदासाय शंबरम् । अध त्यं तुर्वशं यदुम् ॥
परि णो अश्वमश्वविद्गोमदिन्दो हिरण्यवत् ।
क्षरा सहस्रिणीरिषः ॥६॥
हे आनन्ददाता मेरे जीवन के, तू ने नौ नव्वे वर्ष बिताए हैं ।
तू आजा तेरे आनन्द में हमारे, मन लहर लहर लहराए हैं ॥
हे सोम रश्मि शीघ्र आ सत्य, ज्ञान के साधक का भगवान तू ।
हिंसा भावों का नाश कर; कर भक्त का कल्याण तू ॥
अश्व सम कर्म ज्ञान, शक्ति का तू स्वामी है ।
आनन्ददाता सोम हमें तू, देता कर्मशक्तियां नामी है ॥

अपघ्नन् पवते मृधोऽप सोमो अराव्णः ।
गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम् ॥
महो नो राय आ भर पवमान जही मृधः । रास्वेन्दो वीरवद्यशः ॥
न त्वा शतं च न ह्रुतो राधो दित्सन्तमा मिनन् ।
यत्पुनानो मखस्यसे ॥७॥

मानव मन में यह सोम प्रभु, अपना शासन करता है।
जो इन्द्र बने उसके मारे, हिंसक भावों को हरता है॥
हे पवमान सोम हमें, सुख सम्पत्ति से भरपूर कर।
हे आह्लादक यश देकर, बुरे भावों को दूर कर॥
हे उत्पादक जब तू हम में, दान भावना भरता है।
ऐश्वर्यशाली तू मेरी, शत शत कुटिल भावना हरता है॥

अया पवस्व धारया यया सूर्यमरोचयः। हिन्वानो मानुषीरपः॥
अयुक्त सूर एतशं पवमानो मनावधि। अन्तरिक्षेण यातवे॥
उत त्या हरितो रथे सूरो अयुक्त यातवे।
इन्दुरिन्द्र इति ब्रुवन्॥८॥
हे सोम बहाई तू ने अमृतधारा, मन को है आलोक दिया।
मानव कर्मों को प्रेरित कर, पावनता ने हर शोक लिया॥
पवमान सोम अन्तरिक्ष मार्ग से, उन्नति पथ पर ले जाता।
मन को तन को कर्मों के हित, अद्भुत शक्ति दे जाता॥

इति पञ्चमः खण्डः।

अग्नि वो देवमग्निभिः सजोषा यजिष्ठं दूतमध्वरे कृणुध्वम्।
यो मर्त्येषु निध्रुविर्ऋतावा तपुर्मूर्धा घृतान्नः पावकः॥
प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन् यदा महः संवरणाद्व्यस्थात्।
आदस्य वातो अनु वाति शोचिरध स्म ते व्रजनं कृष्णमस्ति॥
उद्यस्य ते नवजातस्य वृष्णोऽग्ने चरन्त्यजरा इधानाः।
अच्छा द्यामरुषो धूम एषि सं दूतो अग्न ईयसे हि देवान्॥१॥
भक्त जनो संकल्प की अग्नि, अंगों में चमकाते रहना।
अचल सत्य के देने वाले, अग्नि को दूत बनाते रहना॥
जीवन यज्ञ चलाने वाला, अग्नि सब का स्वामी है।
परम तपस्वी जीवन-पथ में; सब का आगे गामी है॥
खाने की इच्छा वाला घोड़ा, गर्जन करता आता है।
संकल्प का अग्नि शक्ति देने, ज्योति को बिखराता है॥
अन्तःकरण के परदे से, ऊँचे शब्द सुनाता है।
प्यारा लगता तेरा चलना, तू प्राणशक्ति का दाता है॥

नया उदय संकल्प अग्नि, अमन्द तेज का जनन करे।
दिव्य गुणों का दाता द्यौ से, सुख शक्ति का नमन करे॥

तमिन्द्रं वाजयामसि महे वृत्राय हन्तवे। स वृषा वृषभो भुवत्॥
इन्द्रः स दामने कृत ओजिष्ठः स बले हितः।
द्युम्नी श्लोकी स सोम्यः॥
गिरा वज्रो न सम्भृतः सबलो अनपच्युतः।
ववक्ष उग्रो अस्तृतः॥१०॥
ज्ञान में बाधक तमो भावों को, प्राणशक्ति नाश करे।
ज्ञान वर्षा से सुख देने को, दिव्य गुण प्रकाश करें॥
जो कुटिल भावों का नाशक, बल के काम करता है।
परमानन्द का रस पान करे, इन्द्र सभी दुःख हरता है॥
वज्र सम अचल, वाणी से तेजस्वी बना।
सारी शक्ति धारण कर; हिंसक भावों से दूर रहा॥

इति षष्ठः खण्डः।

अध्वर्यो अद्रिभिः सुतं सोमं पवित्र आ नय। पुनाहीन्द्राय पातवे॥
तव त्य इन्दो अन्धसो देवा मधोर्व्याशत। पवमानस्य मरुतः॥
दिवः पीयूषमुत्तमं सोममिन्द्राय वज्रिणे।
सुनोता मधुमत्तमम्॥११॥
धारण से सिद्ध सोम को, अन्तःकरण में धार लें।
इन्द्रियों का जो प्रभु है, वही पावन रस का प्यार ले॥
हे आह्लादक तू पावन है, तेरा अन्न अमृत का भण्डार।
प्राणशक्तियाँ उस को भोगें, दिव्य गुणों को लें हम धार॥
हे साधको ज्योति लोक के, मधुर सोम का रस बनाओ।
इन्द्र शत्रु को जो मारे, उसको भक्ति शक्ति दिलाओ॥

धर्ता दिवः पवते कृत्व्यो रसो दक्षो देवानामनुमाद्यो नृभिः।
हरिः सृजानो अत्यो न सत्वभिर्वृथा पाजांसि कृणुषे नदीष्वा॥
शूरो न धत्त आयुधा गभस्त्योः स्वः सिषासन् रथिरो गविष्टिषु।
इन्द्रस्य शुष्ममीरयन्नपस्युभिरिन्दुर्हिन्वानो अज्यते मनीषिभिः॥

इन्द्रस्य सोम पवमान ऊर्मिणा तविष्यमाणो जठरेष्वा विश ।
प्र नः पिन्व विद्युदभ्रेव रोदसी धिया नो वाजाँ उप
माहि शश्वतः ॥१२॥
प्रकाशलोक जो धारणकर्ता, दिव्य गुणों का देने हारा ।
आनन्द जिससे सब नर पाते, बहती है वह रस धारा ॥
दुःखहर्ता आकर्षक सुन्दर, रस की धारा जब आती ।
नस नाड़ी की शक्ति खोकर, सात्त्विक बल को भर जाती ॥
शूरवीर शस्त्रधारी बनकर, बल दिखलाता है ।
ज्ञान कर्म को साथ लिये, सोम सदा सुखदाता है ॥
ज्ञानप्रकाश का पथज्ञाता, देहरथ का चालक है ।
कर्मप्रेरक सोम रस का, योगी भक्त ही साधक है ॥
हे पवमान सोम तू आकर, दिव्य मन में वास कर ।
मेघ भरे द्यौलोक धरा, तू मेरा अंग अंग सुवास कर ॥
मेरे अन्तःकरण नीलम को, अपने रस से रसवान बना ।
सदा रहे जो ज्ञान की शक्ति, उस शक्ति से बलवान बना ॥

यदिन्द्र प्रागपागुदङ्न्यग्वा हूयसे नृभिः ।
सिमा पुरू नृषूतो अस्यानवेऽसि प्रशर्ध तुर्वशे ॥
यद्वा रुमे रुशमे श्यावके कृप इन्द्र मादयसे सचा ।
कण्वासस्त्वा स्तोमेभिर्ब्रह्मवाहस इन्द्रा यच्छन्त्या गहि ॥१३॥
हे इन्द्र चारों ही दिशा से, श्रेष्ठ नर तुझ को पुकारें ।
दोष उनके दूर करता, गीत जो तेरे उच्चारें ॥
हे इन्द्र तू रमणीक सुन्दर, गति शक्तिशाली जन में रहता ।
आनन्द देता विज्ञों को, वेद ज्ञान जिन में है बहता ॥

उभयं शृणवच्च न इन्द्रो अर्वागिदं वचः ।
सत्राच्या मघवान्त्सोमपीतये धिया शविष्ठ आ गमत् ॥
तं हि स्वराजं वृषभं तमोजसा धिषणे निष्टतक्षतुः ।
उतोपमानां प्रथमो नि षीदसि सोमकामं हि ते मनः ॥१४॥
इन्द्र हमारे अन्दर बाहिर, शक्ति सम्पत्ति दान कर ।
परमानन्द रस पान करें, तू हमें बलवान कर ॥

प्रकाशरूप सुखवर्षक प्रभु को, भक्त हृदय में देते स्थान।
शक्ति भक्ति से तुझको पाते, तेरे संकल्प में आनन्द महान ॥

इति सप्तमः खण्डः।

पवस्व देव आयुषगिन्द्रं गच्छतु ते मदः। वायुमा रोह धर्मणा ॥
पवमान नि तोशसे रयिं सोम श्रवाय्यम्। इन्दो समुद्रमा विश ॥
अपघ्नन् पवसे मृधः क्रतुवित्सोम मत्सरः।
नुदस्वादेवयुं जनम् ॥१५॥
हे दिव्य रस तू बहता आ, इन्द्र पायें सदा आनन्द।
तू अपनी धारणशक्ति से, दे सबको जीवनशक्ति अमन्द ॥
हे पवमान सोम अन्तर आत्मज्ञान से तू करता धनवान।
आजा मेरे घट में लेकर, शक्ति आनन्द महान ॥
हे हर्ष सरोवर सोम मेरे, कामों को जीवन देते हो।
अपना पावन आनन्द देकर, पाप भाव हर लेते हो ॥

अभी नो वाजसातमं रयिमर्ष शतस्पृहम्।
इन्दो सहस्रभर्णसं तुविद्युम्नं विभासहम् ॥
वयं ते अस्य राधसो वसोर्वसो पुरुस्पृहः।
नि नेदिष्ठतमा इषः स्याम सुम्ने ते अध्रिगो ॥
परि स्य स्वानो अक्षरदिन्दुरव्ये मदच्युतः।
धारा य ऊर्ध्वो अध्वरे भ्राजा न याति गव्ययुः ॥१६॥
ऐश्वर्य दे हम को सोम प्रभु, जो प्राण से भरपूर हो।
जिसको हजारों मांगते, जिससे तेज शत्रु का दूर हो ॥
सबका प्यारा प्रेरणाधन, दे हमें सबको बसाने वाले।
तेरे समीप तुझ में रहें, हे सुखशक्ति सरसाने वाले ॥
प्रेरणा के गीत गाता, आनन्दधारा ले सोम आता है।
चेतना का फाड़ परदा, जीवन में ज्योति जगाता है ॥
जीवन यज्ञ में ज्ञान देकर, अपना प्रभाव जमाता।
धारा बन नीचे आता, हमें शक्ति दे ऊपर ले जाता ॥

पवस्व सोम महान्त्समुद्रः पिता देवानां विश्वाभि धाम ॥
शुक्रः पवस्व देवेभ्यः सोम दिवे पृथिव्यै शं च प्रजाभ्यः ॥

दिवो धर्तासि शुक्रः पीयूषः सत्ये विधर्मन् वाजी पवस्व ॥१७॥
हे सोम सारे आनन्दों का, तू अक्षय भण्डार है।
दिव्य गुणों का जन्मदाता, सब का प्राणाधार है॥
सब के घटों में बरस कर, शक्ति का दान दो।
सद्गुणों से प्रीत देकर, आत्मा का ज्ञान दो॥
हे सोम बहता दिव्य गुणों संग, तेरा सुंदर रूप है।
कल्याण करो सब का, तू ही धरा द्यौ भूप है॥
हे सोम दिव्यता के स्वामी, तेरा अमृत रूप है।
नाना रूप धरे ईश्वर के, उसमें चमके सत्य अनूप है॥

इति अष्टमः खण्डः।

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम्। अग्ने रथं न वेद्यम्॥
कविमिव प्रशंस्यं यं देवास इति द्विता। नि मर्त्येष्वादधुः॥
त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄंः पाहि शृणुही गिरः।
रक्षा तोकमुत त्मना ॥१८॥
प्रभु जी तुम्हारा दिव्य प्यारा, अग्नि दुलारा है अतिथि।
मित्र सम मुझ को प्रिय है, मैं करूँ उस की स्तुति॥
रथ सम यह वस्तु ले जाता, सब को ही पहुंचाता है।
ज्ञान कराता हमें सिखाता, दिव्य ज्ञान का दाता है॥
यह अग्नि है क्रांतिकारी, प्रशंसा योग्य गुणों वाला।
सभी जनों के ज्ञान-कर्म, अंगों में रहने वाला॥
हे अग्ने तू शक्तिशाली, दानशील की रक्षा करता।
अपना आपा जो देते, उनके अभावों को हरता॥

एन्द्र नो गधि प्रिय सत्राजिदगोह्य।
गिरिर्न विश्वतः पृथुः पतिर्दिवः॥
अभि हि सत्य सोमपा उभे बभूथ रोदसी।
इन्द्रासि सुन्वतो वृधः पतिर्दिवः॥
त्वं हि शश्वतीनामिन्द्र धर्ता पुरामसि।
हन्ता दस्योर्मनोर्वृधः पतिर्दिवः ॥१९॥

हे प्यारे हे सर्वप्रकाशक, इन्द्र सदा तू जगमग करता।
आ जा प्यारे पर्वत सम तू, आलोक लोक से तम हरता॥
हे इन्द्र तू स्वामी दोनों लोकों का, परमानन्द का पान करे।
सबसे ऊँचा रक्षक भक्त का, प्रकाशलोक में स्थान धरे॥
अन्नमय कोष का भेदक, तू अज्ञान अंधेरे का नाशक।
साधक मन की शक्ति बढ़ाता, सभी का तू प्रकाशक॥

पुरां भिन्दुर्युवा कविरमितौजा अजायत।
इन्द्रो विश्वस्य कर्मणो धर्ता वज्री पुरुष्टुतः॥
त्वं वलस्य गोमतोऽपावरद्रिवो बिलम्।
त्वां देवा अबिभ्युषस्तुज्यमानास आविषुः॥
इन्द्रमीशानमोजसाभि स्तोमैरनूषत।
सहस्रं यस्य रातय उत वा सन्ति भूयसीः॥२०॥
वह इन्द्र जीव कोषों का भेदक, सदा युवा क्रांतिकारी।
असीम तेज का धारक, सब का रक्षक यश अधिकारी॥
हे दृढ़ इन्द्र तू ज्ञान शक्ति से, सब का रक्षक कहलाता।
निर्भय हो इन्द्रियां तुझ तक आतीं, प्रज्ञाशक्ति विकसाता॥
गीत प्रशंसा के गाओ, उसी इन्द्र को प्रसन्न करो।
उसका दान शत शत रूपों में, पूरा उससे सदा डरो॥
अपनी शक्ति से राजा बन, वह सब पर शासन करता।
सब को सारे ही धन दे, निर्बलता सब की हरता॥

इति नवमः खण्डः। इति प्रथमोऽर्धः॥

अथ द्वितीयोऽर्धः।

अक्रान्त्समुद्रः प्रथमे विधर्मन् जनयन् प्रजा भुवनस्य गोपाः।
वृषा पवित्रे अधि सानो अव्ये बृहत्सोमो वावृधे स्वानो अद्रिः॥
मत्सि वायुमिष्टये राधसे नो मत्सि मित्रावरुणा पूयमानः।
मत्सि शर्धो मारुतं मत्सि देवान् मत्सि द्यावापृथिवी देव सोम॥
महत्तत्सोमो महिषश्चकारापां यद्गर्भोऽवृणीत देवान्।
अदधादिन्द्रे पवमान ओजोऽजनयत् सूर्ये ज्योतिरिन्दुः॥१॥

रस का अपार भण्डार लिये, सोम उमड़ कर आया।
जादू ऐसा किया जन जन को, जन जन का रक्षक बनवाया॥
सुखदाता वह सोम चेतना, छलनी से छन कर आता।
बादल रूप बनकर सबके, मन कर्म-कामना उपजाता॥
सोम! अभीष्ट ऐश्वर्य दे, प्राणशक्ति में आनन्द भरता।
मित्र वरुण दोनों शक्ति, बहाकर उन्नत वह करता॥
हे दिव्य सोम तू प्राण शक्ति, दिव्य अंग हर्षित करता।
पृथिवी द्यौलोक में मीठी, आनन्द की धारा भरता॥
सोम ने वर्षक बादल बन, कैसा उत्तम काम किया।
दिव्य इन्द्रियां ज्ञान कर्म, में रख अपना नाम किया॥
पिघल पिघल कर बहकर, इन्द्र को है बलवान किया।
प्रेरक प्रज्ञाशक्ति में आकर, कर्मों को ज्योतिष्मान किया॥

एष देवो अमर्त्यः पर्णवीरिव दीयते। अभि द्रोणान्यासदम्॥
एष विप्रैरभिष्टुतोऽपो देवो वि गाहते। दधद्रत्नानि दाशुषे॥
एष विश्वानि वार्या शूरो यन्निव सत्वभिः। पवमानः सिषासति॥
एष देवो रथर्यति पवमानो दिशस्यति। आविष्कृणोति वग्वनुम्॥
एष देवो विपन्युभिः पवमान ऋतायुभिः। हरिर्वाजाय मृज्यते॥
एष देवो विपा कृतोऽति ह्वरांसि धावति। पवमानो अदाभ्यः॥
एष दिवं वि धावति तिरो रजांसि धारया। पवमानः कनिक्रदत्॥
एष दिवं व्यासरत्तिरो रजांस्यस्तृतः। पवमानः स्वध्वरः॥
एष प्रत्नेन जन्मना देवो देवेभ्यः सुतः। हरिः पवित्रे अर्षति॥
एष उ स्य पुरुव्रतो जज्ञानो जनयन्निषः। धारया पवते सुतः॥२॥
अमर बनाता दिव्य सोम, जीवन में बहारें लाता।
आ जाए वह अंग अंग में, सब का शक्ति दाता॥
उत्तम बुद्धि से दिव्य सोम के, स्तुति गीत जब गाते हैं।
त्यागभाव से भक्त, ज्ञान और कर्म में इस को पाते हैं॥
पवमान सोम वीर योद्धा सम, शक्ति से नेता बनता।
भक्त कामना पूरी करके, सुख सम्पत्ति है तनता॥
दिव्य सोम शरीर रथ को, आगे आगे ही ले जाता।
बह बहकर यह कर्म कराता, महिमा लख जग गाता॥

परम सत्य को पाने को, भक्त उपासते दुःखहारी को।
ज्ञानशक्ति लाभ करें, आराधें शुभकारी को॥
ज्ञान ज्योति से सिद्ध सोम, तीव्रगति से दौड़ लगाता।
कुटिल भावों का कर विनाश, अदम्य बना शुद्ध बनाता॥
पवमान सोम है शोर मचाता, प्रकाशलोक को ले जाता।
अज्ञान नाश से सिद्ध किया, परम सत्य का लाभ कराता॥
निष्कण्टक पथ पर चल, पवमान सोम अज्ञान हटाता।
सारी बाधाएँ दूर हटा, साधक को प्रभु दर्श कराता॥
बाधारहित प्रकाशलोक में, साधक को प्रभु दर्श कराता॥
यह दिव्य सोम दिव्य अंगों के, लिए साधक से बनता।
अपने स्वभाव सनातन से, दुःखहर्ता बन सुख तनता॥
विविध कर्मों को कराता, चेतना उत्पन्न करता जा रहा।
सोम सब का शक्तिदाता, सब ओर बहता आ रहा॥

इति प्रथमः खण्डः।

एष धिया यात्यण्व्या शूरो रथेभिराशुभिः।
गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम्॥
एष पुरु धियायते बृहते देवतातये। यत्रामृतास आशत॥
एतं मृजन्ति मर्ज्यमुप द्रोणेष्वायवः। प्रचक्राणं महीरिषः॥
एष हितो वि नीयतेऽन्तः शुन्ध्यावता पथा।
यदी तुञ्जन्ति भूर्णयः॥
एष रुक्मिभिरीयते वाजी शुभ्रेभिरंशुभिः। पतिः सिन्धूनां भवन्॥
एष शृङ्गाणि दोधुवच्छिशीते यूथ्यो३ वृषा।
नृम्णा दधान ओजसा॥
एष वसूनि पिब्दनः परुषा ययिवाँ अति। अव शादेषु गच्छति॥
एतमु त्यं दश क्षिपो हरिं हिन्वन्ति यातवे।
स्वायुधं मदिन्तमम्॥३॥
वीर योद्धा शीघ्रगामी, रथ पर चढ़ कर जाता है।
सूक्ष्म विचार शक्ति से, सोम हृदय में आता है॥
सोम विविध विचारों से, दिव्य गुणों को लाता है।
अमर इन्द्रियों के भोजन हित, श्रेष्ठ गुण उपजाता है॥

साधना के योग्य बनकर, विशाल प्रेरणा देता।
चक्रसम वह सोम साधक के, जीवन यज्ञ का नेता॥
गतिशील साधक साधना से, अन्तःकरण पावन करे।
शुद्ध पथ से सोम हृदय में, शक्ति का स्थापन करे॥
अतुल अपार जलराशि का, सागर भण्डार है।
सिद्ध हुआ यह सोम हृदय में, ज्ञान का आगार है॥
बल का स्वामी सांड धरा से, सींगों का घर्षण करता।
पथ प्रदर्शक सोम ओज से, उच्च ज्ञान वर्षण करता॥
सोम प्राण को शक्ति देकर, जीवन-पथ में गमन करे।
हरा भरा बना जीवन को, अंग अंग में रमन करे॥
सुन्दर साधन वाला सोम, परम हर्ष का दाता है।
दुःखहर्त्ता दस इन्द्रियों को, उन्नतिपथ दिखलाता है॥

इति द्वितीयः खण्डः।

एष उ स्य वृषा रथोऽव्या वारेभिरव्यत।
गच्छन् वाजं सहस्रिणम्॥
एतं त्रितस्य योषणो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः। इन्दुमिन्द्राय पीतये॥
एष स्य मानुषीष्वा श्येनो न विक्षु सीदति।
गच्छञ्जारो न योषितम्॥
एष स्य मद्यो रसोऽव चष्टे दिवः शिशुः। य इन्दुर्वारमाविशत्॥
एष स्य पीतये सुतो हरिरर्षति धर्णसिः।
क्रन्दन् योनिमभि प्रियम्॥
एतं त्यं हरितो दश मर्मृज्यन्ते अपस्युवः।
याभिर्मदाय शुम्भते॥४॥
सुखवर्षक वाहनरूप सोम, सुख सम्पत्ति दाता है।
अज्ञानावरण नष्ट कर, ज्ञान लोक से आता है॥
साधक जन दुःखहर्त्ता का, दस इन्द्रियों से साधन करते।
इन्द्र को पाने की इच्छा से, इसका सम्पादन करते॥
शीघ्रगति से झपट बाज सम, जन जन में सोम यों गमन करे।
प्रेम करे सारी प्रजा से ज्यों, प्रिय प्रिया संग रमन करे॥

प्रकाशलोक में रहने वाला, जो उसका बेटा कहलाता।
परमानन्द वह ज्ञान द्वार से, ज्ञान लोक में आ जाता ॥
दुःखहर्त्ता सोम ही साधक को, धीरज पहुंचाता।
पीने के हित प्रेरक बन मन मन्दिर में घुस जाता ॥
क्रियाशील बन दसों इन्द्रियाँ, सोम को शुद्ध बनाती हैं।
शुभ कर्मों से प्रेरित हो, आनन्द रस को पाती हैं ॥

इति तृतीयः खण्डः ।

एष वाजी हितो नृभिर्विश्वविन् मनसस्पतिः ।
अव्यं वारं वि धावति ॥
एष पवित्रे अक्षरत् सोमो देवेभ्यः सुतः । विश्वा धामान्याविशन् ॥
एष देवः शुभायतेऽधि योनावमर्त्यः । वृत्रहा देववीतमः ॥
एष वृषा कनिक्रदद् दशभिर्जामिभिर्यतः । अभि द्रोणानि धावति ॥
एष सूर्यमरोचयत् पवमानो अधि द्यवि । पवित्रे मत्सरो मदः ॥
एष सूर्येण हासते संवसानो विवस्वता । पतिर्वाचो अदाभ्यः ॥५॥
साधक जिसको सिद्ध बनाते, बलशाली मन का स्वामी।
शुद्ध होने को दौड़ लगाता, विविशक्ति पददों का गामी ।
इन्द्रियों को दिव्य बनाने, सिद्ध सोम मन में आया।
अन्तःकरण में आके पावक, अंग अंग में है समाया ॥
अमर पद का दाता यह, सोम मूल में शोभा पाता।
दिव्य गुणों को भर कर, बाधाओं को दूर हटाता ॥
सुखवर्षक यह सोम प्रेरक, अंगों में गूंज सुनाता।
ज्ञान आधार शक्तियाँ चमका, उनमें जीवन भर जाता ॥
पवमान सोम ने द्युलोकवासी, मन में प्रज्ञा विकसाई।
अन्तःकरण को पावन बना, आनन्दरस धारा बहाई ।
ज्ञान किरण से जगमग बुद्धि, पवमान सोम को धारण करती।
परमानन्द में लीन चमकती, वाणी को प्रेरक शासन करती ॥

इति चतुर्थः खण्डः ।

एष कविरभिष्टुतः पवित्रे अधि तोशते । पुनानो घ्नन्नप द्विषः ॥
एष इन्द्राय वायवे स्वर्जित् परि षिच्यते । पवित्रे दक्षसाधनः ॥
एष नृभिर्वि नीयते दिवो मूर्धा वृषा सुतः ।
सोमो वनेषु विश्ववित् ॥
एष गव्युरचिक्रदत् पवमानो हिरण्ययुः । इन्दुः सत्राजिदस्तृतः ॥
एष शुष्म्यसिष्यददन्तरिक्षे वृषा हरिः । पुनान इन्दुरिन्द्रमा ॥
एष शुष्म्यदाभ्यः सोमः पुनानो अर्षति । देवावीरघशंसहा ॥६॥
प्रशंसित क्रांतदर्शी सोम पावन, हृदय को तोष देता ।
दुःखद द्वेष का कर नाश, सारे कष्टों से मोक्ष देता ॥
प्राणशक्ति युत प्रज्ञाशक्ति से, परम सुख लाने वाला ।
बलसाधक सोम मन में, ध्यानशक्ति से आने वाला ॥
प्रकाश लोक के ऊँचे पथ से, सुख वर्षाता जो आता ।
अंगों में पहुंचा हुआ सोम, भक्तों के वश हो जाता ॥
पवमान सोम ज्ञानशक्ति से, मिली सम्पत्ति दिलवाता ।
रहता सब से अलग परन्तु, आध्यात्मिक जग में जीत कराता ॥
बलशाली, सुखदाता, दुःखहर्त्ता, सोम प्राण में झरता है ।
आनन्दरूप बुद्धि को चारों, दिक् से घेरा करता है ॥
बलशाली अदम्य सोम, जब वह बह करके आता है ।
दिव्य जनों की रक्षा कर, दुष्टों को मार भगाता है ॥

इति पञ्चमः खण्डः ।

स सुतः पीतये वृषा सोमः पवित्रे अर्षति । विघ्नन् रक्षांसि देवयुः ॥
स पवित्रे विचक्षणो हरिरर्षति धर्णसिः । अभि योनिं कनिक्रदत् ॥
स वाजी रोचनं दिवः पवमानो वि धावति ।
रक्षोहा वारमव्ययम् ॥
स त्रितस्याधि सानवि पवमानो अरोचयत् । जामिभिः सूर्यं सह ॥
स वृत्रहा वृषा सुतो वरिवोविददाभ्यः । सोमो वाजमिवासरत् ॥
स देवः कविनेषितो३ऽभि द्रोणानि धावति ।
इन्दुरिन्द्राय मंहयन् ॥७॥
पीने के हित सिद्ध किया, सुखवर्षक सोम सुहाता ।
दिव्य गुणों से मेल कराकर, दुर्भावों को दूर हटाता ॥

बुद्धि विकासक दु:खनाशक, सोम हृदय में जब आता।
कारण के प्रति प्रेरित करता. पावन धीरज को लाता ॥
बलशाली पवमान सोम, प्रकाशलोक से दौड़ा आता।
विघ्नासुरों को मार मार, चेतनता के घर पहुंचाता ॥
त्रिविध दु:खों को नाश जो चाहे, भक्त साधना से पाता।
बन्धु सम शुभ बुद्धि को, सोम सदा ऊँचा कर जाता ॥
विघ्नविनाशक सुखप्रकाशक, श्रेष्ठ सम्पत्ति देने वाला।
अदम्य सोम हमें है, ऐश्वर्य दिशा में ले जावे वाला ॥
क्रांतदर्शी सोम साधक के, अंग अंग में समा रहा।
आनन्ददाता बन इन्द्रियजित, इन्द्र को है भा रहा ॥

इति षष्ठः खण्डः ।

यः पावमानीरध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम् ।
सर्वं स पूतमश्नाति स्वदितं मातरिश्वना ॥
पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम् ।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् ॥
पावमानीः स्वस्त्ययनीः सुदुघा हि घृतश्चुतः ।
ऋषिभिः संभृतो रसो ब्राह्मणेष्वमृतं हितम् ॥
पावमानीर्दधन्तु न इमं लोकमथो अमुम् ।
कामान्त्समर्धयन्तु नो देवीर्देवैः समाहृताः ॥
येन देवाः पवित्रेणात्मानं पुनते सदा ।
तेन सहस्रधारेण पावमानीः पुनन्तु नः ॥
पावमानीः स्वस्त्ययनीस्ताभिर्गच्छति नान्दनम् ।
पुण्यांश्च भक्षान् भक्षयत्यमृतत्वं च गच्छति ॥८॥
जो साधक ऋषियों से अर्जित, परमानन्द अर्जन करता।
मन से पाये आनन्द का, पूरा आस्वादन करता ॥
विचारशक्ति से एकत्रित, पावन वेदरस साधक पाता।
सत्य श्रवण से शुद्ध दूध घी, मधुर जलों का रस पीता ॥
कल्याणी शुद्ध ऋचाएँ, सुफला घृतदात्री गउएँ बनतीं।
मनन से ज्योति दिव्य मिलती, अमृत सब अंगों में तनती ॥

पवित्र करतीं ये ऋचाएँ, धारें लोक परलोक को।
परमानन्द पा दिव्य अंगों से, भगायें पूर्णकामी शोक को।।
दिव्य गुण के चाहक अंग, जिस परमानन्द को पाते।
पावन करके सदा आत्मा, वेदज्ञान शुद्धता लाते।।
पावमानी ये ऋचाएँ, कल्याण मधु धारा बहातीं।
मनन करते भक्त को, परमानन्द दे अमृत पिलातीं।।

इति सप्तमः खण्डः।

अगन्म महा नमसा यविष्ठं यो दीदाय समिद्धः स्वे दुरोणे।
चित्रभानुं रोदसी अन्तरुर्वी स्वाहुतं विश्वतः प्रत्यञ्चम्॥
स मह्ना विश्वा दुरितानि साह्वानग्निः ष्टवे दम आ जातवेदाः।
स नो रक्षिषद् दुरितादवद्यादस्मान् गृणत उत नो मघोनः॥
त्वं वरुण उत मित्रो अग्ने त्वां वर्धन्ति मतिभिर्वसिष्ठाः।
त्वे वसु सुषणनानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।९।।
अपने मन की संकल्प अग्नि, प्रदीप्त कर सेवन करें।
ज्ञान भेंट देते समय, अन्न मनोमय कोष धारण करें।।
अन्तःकरण अन्तरिक्ष में, जो आहुति बनाकर डाला।
संकल्प अग्नि वह हम धारें, साधक ने है जिसको पाला।।
पापनाशक महान अग्नि का, अपने घट में ध्यान धरें।
पापाचरण से हमें बचा जो, ज्ञानधन से धनवान करें।।
हे दिव्य संकल्पमय अग्नि, तू न्यायकारी मित्र समान है।
भक्त तुम को सिद्ध करते, तू उन्नतिदाता करे कल्याण है।।

महाँ इन्द्रो य ओजसा पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव।
स्तोमैर्वत्सस्य वावृधे॥
कण्वा इन्द्रं यदक्रत स्तोमैर्यज्ञस्य साधनम्।
जामि ब्रुवत आयुधा।।
प्रजामृतस्य पिप्रतः प्र यद्भरन्त वह्नयः।
विप्रा ऋतस्य वाहसा।।१०।।
मेघ बन जो बरस जाती, संकल्पशक्ति महान है।
वत्स मन तुझ को बढ़ाता; कर तेरी प्रशंसा ध्यान है।।

भक्त अंगों से, संकल्प इन्द्र को, यज्ञ साधन बनाता ।
सारे साधन छोड़ तुझे, तन मन धन से अपनाता ॥
ज्ञानधारा से इन्द्रियां, मन की शक्ति तृप्त बनातीं ।
परम सत्य से ओज भरीं, अन्य साधन बेकार बतातीं ॥

इति अष्टमः खण्डः ।

पवमानस्य जिघ्नतो हरेश्चन्द्रा असृक्षत । जीरा अजिरशोचिषः ॥
पवमानो रथीतमः शुभ्रेभिः शुभ्रशस्तमः ।
हरिश्चन्द्रो मरुद्गणः ॥
पवमान व्यश्नुहि रश्मिभिर्वाजसातमः । दधत्स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥११॥
परमानन्द जो पावन करता, सब दुःखों को हरता है ।
सदा चमकने वाली धाराएँ, बहतीं उससे सुख झरता है॥
शरीर रथ पर चढ़ा हुआ, सोम शक्तियों का नेता ।
ज्ञान-प्रभा से शुभ्र बनाता, सारे दुःखों को हर लेता ॥
हे पवमान सोम तू सब से, उत्तम बल देने वाला ।
साधक को शक्ति धारण करा, तेरा ज्ञान चमकने वाला ॥

परीतो षिञ्चता सुतं सोमो य उत्तमं हविः ।
दधन्वाँ यो नर्यो अप्स्व३ऽन्तरा सुषाव सोममद्रिभिः ॥
नूनं पुनानोऽविभिः परि स्रवादब्धः सुरभिन्तरः ।
सुते चित्वाप्सु मदामो अन्धसा श्रीणन्तो गोभिरुत्तरम् ॥
परि स्वानश्चक्षसे देवमादनः क्रतुरिन्दुर्विचक्षणः ॥१२॥
सोम सब से श्रेष्ठ आहुति है, जो यज्ञ में डाली जाती ।
नेता इन्द्रियों से काम कराता, उसमें उत्साह भर पाती ॥
सोम है बहता अन्तःकरण में, उसको अपने पास बुला लो ।
परमानन्द को अपने भीतर, अंग अंग का अंग बना लो ॥
ज्ञान-शक्तियां शुद्ध करें, अन्तःकरण में भरें परमानन्द ।
प्राणशक्ति और ज्ञानशक्ति, मिल कर्मों में देती आनन्द ॥
दिव्य इन्द्रियों का आह्लादक, कर्म कराता आनन्द देता ।
ज्ञानी सोम ज्ञान दृष्टि दे, शुभ कर्मों का बनता नेता ॥
असावि सोमो अरुषो वृषा हरी राजेव दस्मो अभि गा अचिक्रदत् ।
पुनानो वारमत्येष्यव्ययं श्येनो न योनिं घृतवन्तमासदत् ॥

पर्जन्यः पिता महिषस्य पर्णिनो नाभा पृथिव्या गिरिषु क्षयं दधे ।
स्वसार आपो अभि गा उदासरन्त्सं ग्रावभिर्वसते वीते अध्वरे ॥
कविर्वेधस्या पर्येषि माहिनमत्यो न मृष्टो अभि वाजमर्षसि ।
अपसेधन् दुरिता सोम नो मृड घृता वसानः परि यासि निर्णिजम् ॥१३॥

ज्ञान प्रकाश से चमक आह्लादक, सुन्दर सुख का दान करे ।
अनहद नाद से प्रेरित कर, अंगों में कर्मशक्ति प्रज्ञान भरे ॥
ज्ञानशक्ति से शुद्ध बना, यह छलनी से पावन बनता ।
वाजगति से अन्तःकरण में, उत्तम रस बन कर छनता ॥
महान वृक्षों को उत्पन्न कर, जल बरसा हरियाली भरता ।
ऊँचे पर्वत शिखरों पर, वही मेघ रहा करता ॥
सारी पृथिवी भरने वाली, धाराएँ वहाँ से आती हैं ।
मेघों को साथ लिये, नीलम के घर वे रह जाती हैं ॥
हे सोम तू परमानन्द का स्वामी, क्रांति दिखाने वाला है ।
अज्ञान का पर्दा फाड़ सके, तू शुद्ध तेज, बल, वाला है ॥
अश्वगति से शीघ्र भाग कर, ज्ञान दिशा को जाता है ।
दुर्भावों, दुष्कर्मों का नाश करे, ज्ञान से ज्योति पाता है ॥

इति नवमः खण्डः ।

आयन्त इव सूर्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत ।
वसूनि जातो जनिमान्योजसा प्रति भागं न दीधिमः ॥
अलर्षिरातिं वसुदामुप स्तुहि भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।
यो अस्य कामं विधतो न रोषति मनो दानाय चोदयन् ॥१४॥

प्रेरक प्रभु के आश्रय से, परापर सम्पत्ति पा जाते ।
इन्द्र की शक्ति से सब, अपने अपने भाग से सुख पाते ॥
स्तुति करो ऐश्वर्यदाता की, वह ही कल्याणकारी है ।
प्रज्ञाशक्ति से साधक पाता, उसके दान दुःखहारी है ॥
साधक मन से ध्यान लगाता, दिव्य मन की शक्ति पाता ।
मनोकामना पूरी करता, मनशक्ति से दानी हो जाता ॥

यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि ।
मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतये वि द्विषो वि मृधो जहि ॥

त्वं हि राधसस्पते राधसो महः क्षयस्यासि विधर्ता ।
तं त्वा वयं मघवन्निन्द्र गिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ॥१५॥
हे दिव्य मन, भय कारण नष्ट कर, निर्भय बना ।
तू शक्तिशाली तू समर्थ, द्वेष हिंसा को भगा ॥
हे इन्द्र तू ऐश्वर्य स्वामी, महान जीवन देता ।
सम्पत्ति के लिए तुझे पुकारें, तू है प्रशंसनीय नेता ॥

इति दशमः खण्डः ।

त्वं सोमासि धारयुर्मन्द्र ओजिष्ठो अध्वरे । पवस्व मंहयद्रयिः ॥
त्वं सुतो मदिन्तमो दधन्वान्मत्सरिन्तमः । इन्दुः सत्राजिदस्तृतः ॥
त्वं सुष्वाणो अद्रिभिरभ्यर्ष कनिक्रदत् । द्युमन्तं शुष्ममा भर ॥१६॥
हे सोम तू आनन्ददाता, जीवन यज्ञ का पालक ।
मेरे अन्तःकरण में आ जा, सुख संपत्ति का रक्षक ॥
तू ही रक्षक तू आह्लादक, तू ही मन से बह आता ।
जीवन-रण में जीत दिला, स्वयं चोट नहीं खाता ॥
अभेद्य ग्रन्थियों से बहकर, तू प्रेरक गीत सुनाता ।
ज्ञान ज्योति से जगमग करता, ज्ञान बल का दाता ॥

पवस्व देववीतय इन्दो धाराभिरोजसा ।
आ कलशं मधुमान्त्सोम नः सदः ॥
तव द्रप्सा उदप्रुत इन्द्रं मदाय वावृधुः ।
त्वां देवासो अमृताय कं पपुः ॥
आ नः सुतास इन्दवः पुनाना धावता रयिम् ।
वृष्टिद्यावो रीत्यापः स्वर्विदः ॥१७॥
दिव्य इन्द्रियों को भोजन देने, आह्लादक सोम तू धारा बन ।
हमारे हृदय में बस जा, तू अमृत का प्यारा बन ॥
तेरा बहता रस सुख देता, बुद्धि को करता बलवान ।
दिव्य इन्द्रियाँ दिव्य गुण पाने को करतीं तेरा आह्वान ॥
बहता हुआ आनन्ददाता, यह सोम सम्पत्ति लाता ।
रस ज्ञान कांति बरसा कर, कर्मशक्ति से भरे सुखदाता ॥

परि त्यं हर्यतं हरिं बभ्रुं पुनन्ति वारेण ।
यो देवान्विश्वाँ इत्परि मदेन सह गच्छति ॥

द्वियं पञ्च स्वयशसं सखायो अद्रिसंहतम् ।
प्रियमिन्द्रस्य काम्यं प्रस्नापयन्त ऊर्मयः ॥
इन्द्राय सोम पातवे वृत्रघ्ने परि षिच्यसे ।
नरे च दक्षिणावते वीराय सदनासदे ॥१८॥
जो रस सारे अंगों में, आनन्द का रस भर देता ।
सुन्दर दुःखनाशक रस को, भक्त ज्ञान से शुद्ध कर लेता ॥
ध्यान धारण से जो मिलता, वह सोम जितेन्द्रिय पाता ।
मित्र बनी दस इन्द्रियां मिल, उसको धोतीं तब आता ॥
हे सोम तू प्रज्ञाशक्ति में जाता, अज्ञान का नाश किया करता ।
क्रियाशक्तिदाता जीवन-यज्ञ का, स्वामी बन तू शक्ति भरता ॥

पवस्व सोम महे दक्षायाश्वो न निक्तो वाजी धनाय ॥
प्र ते सोतारो रसं मदाय पुनन्ति सोमं महे द्युम्नाय ॥
शिशुं जज्ञानं हरिं मृजन्ति पवित्रे सोमं देवेभ्य इन्दुम् ॥१९॥
बलवान पुष्ट अश्व नर को, युद्ध में विजय दिलाता ।
हे सोम तू शक्ति का साधन, तू है आनन्द रस पिलाता ॥
साधक योगी प्रेरक सोम, आनन्दरस को सदा बहाते ।
तेज पाने को साधन करते, तब वे तुझ को हैं पाते ॥
शरीर निवासी चेतनतादायक, दुःखहर्ता सुखदाता है ।
उसी सोम को इन्द्रियों के हित, साधक मन में पाता है ॥

उपो षु जातमप्तुरं गोभिर्भंगं परिष्कृतम् । इन्दुं देवा अयासिषुः ॥
तमिद्वर्धन्तु नो गिरो वत्सं संशिश्वरीरिव । य इन्द्रस्य हृदं सनिः ॥
अर्षा नः सोम शं गवे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम् ।
वर्धा समुद्रमुक्थ्य ॥२०॥
भली प्रकार जो गया बनाया, ज्ञान कर्म का दाता है ।
उस आनन्दरस को साधक, स्तुतियों से अंगों में पाता है ॥
प्रज्ञाशक्ति में जो भर जाता, उस आनन्द को पावें ।
माता जैसे पुत्र को पालें, वाणी हमारी उसे बढ़ावें ॥
हे सोम परम सुख देकर, इन्द्रियाँ बलवान कर ।
हे पूज्य तू रस ला प्रेरणा से, अन्तःकरण उत्थान कर ॥

इति एकादशः खण्डः ।

आ घा ये अग्निमिन्धते स्तृणन्ति बर्हिरानुषक् ।
येषामिन्द्रो युवा सखा ॥
बृहन्निदिध्म एषां भूरि शस्त्रं पृथुः स्वरुः । येषामिन्द्रो युवा सखा ॥
अयुद्ध इद्युधा वृतं शूर आजति सत्वभिः ।
येषामिन्द्रो युवा सखा ॥२१॥
प्रकाशमयी प्रज्ञा जिनकी, तरुण मित्र रहा करती ।
संकल्प की अग्नि दिव्य शक्ति, उन के ही घट में भरती ॥
दिव्य तरुण प्रज्ञावाले का, तेज संकल्प महान है ।
स्तुति के गायें गीत अनेकों, शक्ति से भरता प्राण है ॥
दिव्य तरुण प्रज्ञा वाला, सात्विक बल वाला कहाता ।
दुर्भावों के शत्रु दल को, वीर योद्धा बन मार भगाता ॥

य एक इद्विदयते वसु मर्ताय दाशुषे ।
ईशानो अप्रतिष्कुत इन्द्रो अङ्ग ॥
यश्चिद्धि त्वा बहुभ्य आ सुतावाँ आविवासति ।
उग्रं तत् पत्यते शव इन्द्रो अङ्ग ॥
कदा मर्तमराधसं पदा क्षुम्पमिव स्फुरत् ।
कदा नः शुश्रवद् गिर इन्द्रो अङ्ग ॥२२॥
हे शिष्य इन्द्र है सब का स्वामी, जीता कभी न जाता है ।
समर्पण करने वाला साधक, इससे ही धन पाता है ॥
हे शिष्य, सिद्ध प्रज्ञाशक्ति, उग्र तेज का दान करे ।
जो भक्त साधना इस की करता, उसका नाम प्रधान करे ॥
जो गीत गाता इन्द्र प्रभु के, सुनता उसकी याचना ।
क्षुद्र पौधे सा कुचल दे, करता न जो आराधना ॥

गायन्ति त्वा गायत्रिणोऽर्चन्त्यर्कमर्किणः ।
ब्रह्माणस्त्वा शतक्रत उद्वंशमिव येमिरे ॥
यत्सानोः सान्वारुहो भूर्यस्पष्ट कर्त्वम् ।
तदिन्द्रो अर्थं चेतति यूथेन वृष्णिरेजति ॥
युङ्क्ष्वा हि केशिना हरी वृषणा कक्ष्यप्रा ।
अथा न इन्द्र सोमपा गिरामुपश्रुतिं चर ॥२३॥

ज्ञान विवेक दे कर्म कराता, भक्त उसे ही ध्याते हैं।
विद्वान् सदा झण्डे डण्डे सम, ऊँचा उसे उठाते हैं॥
साधक चित्त के शिखरों पर जो, ऊँचे कर्म किया करता।
इन्द्र ही सेना सहित आ, भक्तों को सुखवर्षा से भरता॥
हे आनन्दरस के पीने वाले, हमारी वाणियों पर ध्यान दे।
ज्ञान साधना करने वाली, इन्द्रियों को देहरथ में स्थान दे॥

इति द्वादशः खण्डः। इति द्वितीयोऽर्धः।

इति पञ्चमः प्रपाठकः।

अथ षष्ठः प्रपाठकः

अथ प्रथमोऽर्धः

सुषमिद्धो न आ वह देवाँ अग्ने हविष्मते। होतः पावक यक्षि च ॥
मधुमन्तं तनूनपाद्यज्ञं देवेषु नः कवे। अद्या कृणुह्यूतये ॥
नराशंसमिह प्रियमस्मिन्यज्ञ उप ह्वये। मधुजिह्वं हविष्कृतम् ॥
अग्ने सुखतमे रथे देवाँ ईडित आ वह। असि होता मनुर्हितः ॥१॥
हे ज्ञानरूप, संकल्परूप अग्ने, हम में त्याग का भाव जगा।
हे शोधक अग्ने साधक में, यज्ञभाव तू ही उपजा ॥
हे रक्षक आधार हमारे, तू ही देता अन्तर्ज्ञान।
जीवन में उन्नति करने को, भर मधुर यज्ञभाव महान ॥
जीवन यज्ञ को सफल बनाऊँ, बन प्रियवादी भक्त सुजान।
नर नर में व्यापक प्रशंसित, अग्नि का करूँ आह्वान ॥
हे अग्ने तेरी साधना से, दिव्य गुणों पर करूँ अधिकार।
आत्मिक यज्ञ कराने वाले, मनन शक्ति का तू आधार ॥

यदद्य सूर उदितेऽनागा मित्रो अर्यमा। सुवाति सविता भगः ॥
सुप्रावीरस्तु स क्षयः प्र नु यामन्त्सुदानवः। ये नो अंहोऽतिपिप्रति ॥
उत स्वराजो अदितिरदब्धस्य व्रतस्य ये। महो राजान ईशते ॥२॥
आज ज्ञान कर्म का प्रेरक, उदय हुआ दिखलाता है।
दोषरहित भग मित्र अर्यमा, सविता शुभ गुणदाता है ॥
रक्षा करे हमारी, आश्रय यह देनेवाला।
पापों को पार करके, धनलाभ देनेवाला ॥
जो सतत साधना करते, व्रतधारी बन ज्योति जगाते।
सब के शासक बन रहते, अतुलित सुख सम्पत्ति पाते ॥

उ त्वा मदन्तु सोमाः कृणुष्व राधो अद्रिवः।
अव ब्रह्मद्विषो जहि ॥
पदा पणीनराधसो नि बाधस्व महाँ असि।
न हि त्वा कश्चन प्रति ॥
त्वमीशिषे सुतानामिन्द्र त्वमसुतानाम्। त्वं राजा जनानाम् ॥३॥

हे अभेद्य शक्तिवाले, परमानन्द तुझे हर्षित करे।
आनन्द विनाशक भाव रहें न, ऐश्वर्य सब तुझ में भरे।।
हे प्रज्ञाशक्ति ! विरोधी, भावनाएँ नाश कर।
हे अनुपम शक्तिशाली, महानता प्रकाश कर।।
हे इन्द्र तू उत्पन्न करता, तू ही उन्हें धारण करे।
ज्ञान दृष्टि से तू स्वामी, प्रज्ञाओं पर शासन करे।।

इति प्रथमः खण्डः।

आ जागृविर्विप्र ऋतं मतीनां सोमः पुनानो असदच्चमूषु।
सपन्ति यं मिथुनासो निकामा अध्वर्यवो रथिरासः सुहस्ताः।।
स पुनान उप सूरे दधान ओभे अप्रा रोदसी वी ष आवः।
प्रिया चिद्यस्य प्रियसास ऊती सतो धनं कारिणे न प्र यंसत्।।
स वर्धिता वर्धनः पूयमानः सोमो मीढ्वाँ अभि नो ज्योतिषावीत्।
यत्र नः पूर्वे पितरः पदज्ञाः स्वर्विदो अभि गा अद्रिमिष्णन्।।४।।
सब ओर से चेतनता लाता, बुद्धि बढ़ाने हारा।
मनन शक्ति में सत्य दिखाए, इन्द्रियों में सोम प्यारा।।
इच्छा लेकर पत्नी सहित, साधक कर्म कमाते हैं।
कर्म करें जो कुशल बन, अपना रथ सदा बढ़ाते हैं।।
परम प्रेरक परमानन्द वह, ध्यान का साधक बन पाता।
द्युलोक धरा को भर, कण कण का प्रेरक बन जाता।।
सोम की सुमधुर धाराएँ, उन्नति-पथ का साधन बनतीं।
कर्मशील ज्यों बन पाता, उपासक हित सम्पत्ति तनतीं।।
गतिशील सोम सुखरूप बना, ज्योति से ऊँचा करता।
परम लक्ष्य जिन्होंने पाया, धर्ममेघ की शक्ति भरता।।

मा चिदन्यद्वि शंसत सखायो मा रिषण्यत।
इन्द्रमित् स्तोता वृषणं सचा सुते मुहुरुक्था च शंसत।।
अवक्रक्षिणं वृषभं यथा जुवं गां न चर्षणीसहम्।
विद्वेषणं संवननमुभयङ्करं मंहिष्ठमुभयाविनम्।।५।।
हे मित्रो दुःखी न होना, किसी और के ध्यान से।
गीत प्रशंसा के गाकर, सुख पाओ इन्द्र महान से।।

उसी इन्द्र के गीत गाओ, जो बैल सी शक्ति वाला है।
शीघ्रगामी नेता बन जो, बुद्धि देने वाला है॥
दुष्ट जिससे द्वेष करते, पूजते मतिमान हैं।
रक्षा करे वह सब जनों की, इन्द्र जो महान है॥

उदु त्ये मधुमत्तमा गिरः स्तोमास ईरते।
सत्राजितो धनसा अक्षितोतयो वाजयन्तो रथा इव॥
कण्वा इव भृगवः सूर्या इव विश्वमिद्धीतमाशत।
इन्द्रं स्तोमेभिर्महयन्त आयवः प्रियमेधासो अस्वरन्॥६॥
प्रेरणा देते हमें वे, मधुर स्तुति का करें प्रकाश।
ज्ञान धन हैं दान करते, बाधाओं का करें नाश॥
सोम ऐसे हैं श्रेष्ठ नेता, सतत उन्नतिवान हैं।
ऐश्वर्य भर कर ले जाने वाले, रथों के समान हैं॥
ध्यान योग से विद्वान् तपस्वी, सूर्य किरणें फैलाता।
सोम भक्त को बुद्धि देकर, प्राणशक्ति दे ज्ञान कराता॥

पर्यू षु प्र धन्व वाजसातये परि वृत्राणि सक्षणिः।
द्विषस्तरध्या ऋणया न ईरसे॥
अजीजनो हि पवमान सूर्यं विधारे शक्मना पयः।
गोजीरया रंहमाणः पुरन्ध्या॥
अनु हि त्वा सुतं सोम मदामसि महे समर्यराज्ये।
वाजाँ अभि पवमान प्र गाहसे॥७॥
हे सोम सम्पत्ति दान को, बाधा विनाशक बन के आ।
शत्रु विनाशक शक्ति देकर, प्रेरित कर आगे बढ़ा॥
पवमान सोम तू शक्ति से, धारण करे शरीर।
इन्द्रियां बनाकर वेगवान, देता प्रेरक शक्ति सुवीर॥
हे सोम तू जब सिद्ध होता, इन्द्रियों का राज्य पाते।
तू इन्द्रियों में भर के रहता, उस राज्य में सानन्द गाते॥

परि प्र धन्वेन्द्राय सोम स्वादुर्मित्राय पूष्णे भगाय॥
एवामृताय महे क्षयाय स शुक्रो अर्ष दिव्यः पीयूषः॥
इन्द्रस्ते सोम सुतस्य पेयात् क्रत्वे दक्षाय विश्वे च देवाः॥८॥
हे परमानन्द के देने वाले, इन्द्र हित आनन्द ला।
जिससे यह आनन्द मिलता, बुद्धि वह हम में बढ़ा॥

महान लक्ष्य है हमारा हम, अमरता को प्राप्त हों।
सुन्दर दिव्यानन्द अमृत, हमारी आत्मा में व्याप्त हो॥
हे सोम तेरे अमृत का हम, प्राणशक्ति से पान करें।
इन्द्रियां बलशाली बनकर, शील सफलता ध्यान करें॥

इति द्वितीयः खण्डः।

सूर्यस्येव रश्मयो द्रावयित्नवो मत्सरासः प्रसुतः साकमीरते।
तन्तुं ततं परि सर्गास आशवो नेन्द्रादृते पवते धाम किं चन॥
उपो मतिः पृच्यते सिच्यते मधु मन्द्राजनी चोदते अन्तरासनि।
पवमानः सन्तनिः सुन्वतामिव मधुमान् द्रप्सः परि वारमर्षति॥
उक्षा मिमेति प्रति यन्ति धेनवो देवस्य देवीरुप यन्ति निष्कृतम्।
अत्यक्रमीदर्जुनं वारमव्ययमत्कं न निक्तं परि सोमो अव्यत॥९॥
सूर्य की किरणों सी गति वाली, आनन्दज सोम की धारा है।
तारों का जाल बना इन्द्र की प्रेरक, होती सुख की कारा है॥
मनन शक्ति सोम से मिलती, मधुरानन्द से भर जाती।
मुख्य स्थान से चल कर, सीधे साधक के घर आती॥
पवमान मधुरस उसके, अन्तर उत्पन्न हो जाता।
ज्ञान के पर्दे पार करूँ, इसीलिए वह मन में आता॥
शक्तिशाली वृषभ बना, सोम ध्वनि जब करता है।
चेतनता के पार जातीं, इन्द्रियों का भय हरता है॥

अग्निं नरो दीधितिभिररण्योर्हस्तच्युतं जनयत प्रशस्तम्।
दूरेदृशं गृहपतिमथर्व्युम्॥
तमग्निमस्ते वसवो न्यृण्वन्त्सुप्रतिचक्षमवसे कुतश्चित्।
दक्षाय्यो यो दम आस नित्यः॥
प्रेद्धो अग्ने दीदिहि पुरो नोऽजस्रया सूर्म्या यविष्ठ।
त्वां शश्वन्त उप यन्ति वाजाः॥१०॥
ज्ञान कर्म की शक्ति से, मन में अग्नि प्रकट करो।
दूरदर्शक आत्मा स्वामी को, अपने अन्दर शीघ्र भरो॥
अन्तःकरण में खोजतीं, इन्द्रियां उस अग्नि नेता को।
बलदाता रक्षक मन के स्वामी, दुष्ट विजेता को॥
हे अग्ने चमक चमक तू, ज्ञानमयी ज्योति चमका।
हे सर्वोत्तम ऐश्वर्य स्वामी, प्रज्ञा दृढ़ संकल्पों में ला॥

आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः। पितरं च प्रयन्त्स्वः ॥
अन्तश्चरति रोचनास्य प्राणादपानती। व्यख्यन्महिषो दिवम् ॥
त्रिंशद्धाम वि राजति वाक्पतङ्गाय धीयते।
प्रति वस्तोरह द्युभिः ॥११॥

गतिशील धरती मातृ सम, सूर्य का चक्कर लगाती।
ज्ञान कर्म इन्द्रियां सुखरूप, जनक को कर यत्न पातीं॥
दिव्यता दिखाने वाली, दिव्य सूर्य को है प्राण जो।
ब्रह्माण्ड में गति कर रही, शुभ्र शक्ति अपान जो॥
गीत गावें उस प्रभु के, जो रम रहा सब ओर है।
तीसों घड़ी है दे रहा जो, निज आलोक चारों छोर है॥

इति तृतीयः खण्डः। इति प्रथमोऽर्धः॥

अथ द्वितीयोऽर्धः।

उपप्रयन्तो अध्वरं मन्त्रं वोचेमाग्नये। आरे अस्मे च शृण्वते ॥
यः स्नीहितीषु पूर्व्यः सञ्जग्मानासु कृष्टिषु। अरक्षद्दाशुषे गयम् ॥
स नो वेदो अमात्यमग्नी रक्षतु शन्तमः। उतास्मान् पात्वंहसः ॥
उत ब्रुवन्तु जन्तव उदग्निर्वृत्रहाजनि। धनञ्जयो रणे रणे ॥१॥

जीवन यज्ञ को हम निभाते, संकल्पाग्नि का करें आह्वान।
दूर हो या पास वह, भक्त की सुनता प्रभु महान॥
प्रेम से जो लोग रहते, उत्तम कर्म किया करते।
दानी जन की धन रक्षा कर, अग्नि सबका दुःख हरते॥
वह हमारे साथ हो और हम, उसे सदा साथी बनावें।
कल्याणमय अग्नि हमें सदा, पाप कर्मों से बचावें॥
अज्ञान का वह नाश करता, महिमा उसकी है बताती।
संघर्षों में विजय दिलाकर, सबके घर सम्पत्ति लाती॥

इति प्रथमः खण्डः।

अग्ने युङ्क्ष्वा हि ये तवाश्वासो देव साधवः। अरं वहन्त्याशवः ॥
अच्छा नो याह्या वहाभि प्रयांसि वीतये। आ देवान्त्सोमपीतये ॥
उदग्ने भारत द्युमदजस्रेण दविद्युतत्। शोचा वि भाह्यजर ॥२॥

उन्नति पथ का नेता तू, बलवान घोड़े शीघ्र ला।
शीघ्रगामी साधन वाली, शक्ति किरणों से जगमगा॥
हे अग्ने गति दिलाकर, दिव्य अंगों में परमानन्द दे।
संकल्पशक्ति हम बढ़ावें, शक्ति ऐसी तू अमन्द दे॥
सब का पालन करने वाले, तेज तेरा जगमगे।
उन्नति कर हे अमर उठकर, अपनी ज्योति से पगे॥

प्र सुन्वानायान्धसो मर्तो न वष्ट तद्वचः।
अप श्वानमराधसं हता मखं न भृगवः॥
आ जामिरत्के अव्यत भुजे न पुत्र ओण्योः।
सरज्जारो न योषणां वरो योनिमासदम्॥
स वीरो दक्षसाधनो वि यस्तस्तम्भ रोदसी।
हरिः पवित्रे अव्यत वेधा न योनिमासदम्॥३॥
संजीवन रस हित यत्न करे, सोम की सुनता अनहद वाणी।
हे ज्ञानी लोभ है कूकर, छोड़ के इस को बन जा दानी॥
मातृ गोद सम अन्तःकरण में, सोम बन्धु सदा रमन करे।
प्रेमी प्रेमिका ओर खिंचे, सोम भक्त ढिग गमन करे॥
परमानन्द है बल साधन, उसने धरा द्यौलोक है धारा।
मेधावी दुःखनाशक सोम को, भाई भक्त-हृदय की कारा॥

अभ्रातृव्यो अना त्वमनापिरिन्द्र जनुषा सनादसि।
युधेदापित्वमिच्छसे॥
न की रेवन्तं सख्याय विन्दसे पीयन्ति ते सुराश्वः।
यदा कृणोषि नदनुं समूहस्यादित्पितेव हूयसे॥४॥
हे इन्द्र तेरा कोई न शत्रु, नेता तू स्वतन्त्र रहता है।
जीवन संघर्षों में योग दिया, तब तू बन्धु कहता है॥
धनवाले का मित्र न बनता, तुझ को प्यारा शुभकारी।
अपने भक्त को मित्र बनाता, नेता पिता सम हितकारी॥

आ त्वा सहस्रमा शतं युक्ता रथे हिरण्यये।
ब्रह्मयुजो हरय इन्द्र केशिनो वहन्तु सोमपीतये॥
आ त्वा रथे हिरण्यये हरी मयूरशेप्या।
शितिपृष्ठा वहतां मध्वो अन्धसो विवक्षणस्य पीतये॥

पिबा त्वाऽस्य गिर्वणः सुतस्य पूर्वपा इव ।
परिष्कृतस्य रसिन इयमासुतिश्चारुर्मदाय पत्यते ॥५॥
हे दिव्य मन तेरे चमकीले वाहन में ज्ञानवृत्तियां होतीं ।
तुझ को परमानन्द दिला, तेरे सारे दुःख खोतीं ॥
हे दिव्य मन तेरी चमकीली, गाड़ी की वृत्तियां दुःखहारी ।
मोर पख सी रंगबिरंगी, ज्ञानकर्म हित रसकारी ॥
वाणियों से गाया, समाधि से बना, रस दिव्य मन पान कर ।
शुद्ध स्वादु रस अभ्यासी, बन परमानन्द का ध्यान कर ॥

आ सोता परि षिञ्चताश्वं न स्तोममप्तुरं रजस्तुरम् ।
वनप्रक्षमुदप्रुतम् ॥
सहस्रधारं वृषभं पयोवृहं प्रियं देवाय जन्मने ।
ऋतेन य ऋतजातो विवावृधे राजा देव ऋतं बृहत् ॥६॥
शक्तिशाली अश्वसजोत, ज्ञानी सोम का भजन करें ।
अज्ञाननाशक ब्रह्मप्रकाशक, ज्ञानरस में रमन करें ॥
हजारों सुख बरसाने वाला, अमर दूध का दाता ।
दिव्य जन्म उस से है होता, परम सत्य मिल जाता ॥
स्वयं प्रकाशक दिव्य रूप, महान सत्य का रूप है ।
आगे आगे ले जाता वह, लक्ष्य दिखाता नेता भूप है ॥

इति द्वितीयः खण्डः ।

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनद् द्रविणस्युर्विपन्यया ।
समिद्धः शुक्र आहुतः ॥
गर्भे मातुः पितुष्पिता विदिद्युतानो अक्षरे । सीदन्नृतस्य योनिमा ॥
ब्रह्म प्रजावदा भर जातवेदो विचर्षणे । अग्ने यद्दीदयद्दिवि ॥७॥
स्तुति से जगाया दिव्य अग्नि; ज्ञानधन है दान करता ।
अज्ञान अघ का नाश कर, भक्तों के सारे दुःख हरता ॥
परम सत्य का धारणकर्ता, मूल तत्त्व में रहने वाला ।
माता बनकर पालन करता, मनमन्दिर में करे उजाला ॥
हे अग्ने जब चमक चमक, तू सारी चीजें दिखलाता ।
सन्तान ज्ञान विस्तार करे, दृढ़ संकल्प से जीवन आता ॥

अस्य प्रेषा हेमना पूयमानो देवो देवेभिः समपृक्त रसम् ।
सुतः पवित्रं पर्येति रेभन् मितेव सद्म पशुमन्ति होता ॥
भद्रा वस्त्रा समन्या३ वसानो महान् कविर्निवचनानि शंसन् ।
आ वच्यस्व चम्वोः पूयमानो विचक्षणो जागृविर्देववीतौ ॥
समु प्रियो मृज्यते सानो अव्ये यशस्तरो यशसां क्षैतो अस्मे ।
अभि स्वर धन्वा पूयमानो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८॥
प्रकाश प्रेरणा से टपक, सोम ने अंगों को आधार बनाया ।
शुद्ध हृदय यजमान सम, परमानन्द हृदय में आया ॥
भद्र भावना से भर कर, रस क्रान्ति प्रेरणा देने वाला ।
ज्ञान कर्म इन्द्रियों में आ, बने दिव्यता का रखवाला ॥
प्रिय सोम धरा के वासी, उच्च ज्ञान में उत्पन्न होता ।
अधिक यशस्वी भक्त से, बनता रक्षक रस सोता ॥

एतो न्विन्द्रं स्तवाम शुद्धं शुद्धेन साम्ना ।
शुद्धैरुक्थैर्वावृध्वांसं शुद्धैराशीर्वान् ममत्तु ॥
इन्द्र शुद्धो न आ गहि शुद्धः शुद्धाभिरूतिभिः ।
शुद्धो रयिं नि धारय शुद्धो ममद्धि सोम्य ॥
इन्द्र शुद्धो हि नो रयिं शुद्धो रत्नानि दाशुषे ।
शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धो वाजं सिषाससि ॥९॥
आओ ! प्रकाशक इन्द्र को, आनन्द का उपहार दो ।
गीत गाने से वह बढ़ता, सुख की निर्मल धार ले ॥
उन्नति पथ से शुद्ध प्रज्ञा, शक्ति को धारण करे ।
हे सौम्य परमानन्द सच्चे, ऐश्वर्य को हम वरें ॥
शुद्ध प्रज्ञा ऐश्वर्य भक्ति, रमण साधन दान करती ।
विघ्नबाधा नाश करके, शुद्ध शक्ति धन ज्ञान भरती ॥

इति तृतीयः खण्डः ।

अग्ने स्तोमं मनामहे सिध्रमद्य दिविस्पृशः । देवस्य द्रविणस्यवः ॥
अग्निर्जुषत नो गिरो होता यो मानुषेष्वा । स यक्षद् दैव्यं जनम् ॥
त्वमग्ने सप्रथा असि जुष्टो होता वरेण्यः ।
त्वया यज्ञं वि तन्वते ॥१०॥

दिव्य गुणों से धन पाने को, अग्नि प्रभु का ध्यान करें।
उच्चलोक के साधक वृक्ष को, संकल्प अग्नि से हम वरें ।।
जीवन यज्ञ सिद्ध करता है, अग्नि उसी के गीत सुनें।
सिद्ध करे वह दिव्य भावना, यज्ञ का साधन हम चुनें ।।
हे अग्ने तू महा यशस्वी, प्रेम-पात्र बन यज्ञ कराता।
यज्ञों का यह ताना बाना, तेरी कृपा से बुन पाता ।।

अभि त्रिपृष्ठं वृषणं वयोधामङ्गोषिणमवावशंत वाणीः।
वना वसानो वरुणो न सिन्धुर्वि रत्नधा दयते वार्याणि ।।
शूरग्रामः सर्ववीरः सहावाञ्जेता पवस्व सनिता धनानि।
तिग्मायुधः क्षिप्रधन्वा समत्स्वषाढः साह्वान् पृतनासु शत्रून् ।।
उरुगव्यूतिरभयानि कृण्वन्त्समीचीने आ पवस्वा पुरन्धी।
अपः सिषासन्नुषसः स्वऽ३र्गाः सं चिक्रदो महो अस्मभ्यं वाजान् ।।११।।
तीन लोक को छूने वाले, सुखवर्षक जीवनदाता को।
मेरे गीत बुलाते सोम, स्तुतियोग्य यज्ञ त्राता को ।।
बाधाओं को दूर हटाता, भक्तों में सोम रहा करता।
वरुण बन मनरत्नों सा भरता, बुरे विचारों को हरता ।।
सब से ऊँचा शक्तिशाली, सोम बलों का अधिष्ठाता।
धीरभाव ऐश्वर्य को देकर, जीवन को विजयी बनाता ।।
साधन देता अति तीक्ष्ण, लक्ष्यवेधन में शीघ्रकारी।
संघर्षों में विजयी बनाता, शत्रु को देता हार करारी ।।
प्रेरणा में ज्ञान भरकर, जो अभय का वर देता हमें।
ज्ञान एवं कर्मशक्ति देकर, अज्ञान हरता है हमारा।
सुख के गणों का दान कर, ऐश्वर्य के प्रति करता इशारा ।।

त्वमिन्द्र यशा अस्यृजीषी शवसस्पतिः।
त्वं वृत्राणि हंस्यप्रतीन्येक इत्पुर्वनुत्तश्चर्षणीधृतिः ।।
तमु त्वा नूनमसुर प्रचेतसं राधो भागमिवेमहे।
महीव कृत्तिः शरणा त इन्द्र प्र ते सुम्ना नो अश्नुवन् ।।१२।।
हे इन्द्र तेरा यश यही, तू सरल पथ से गमन करता।
अपनी शक्ति से विरोधी, शक्तियों का गर्व हरता ।।
तू अकेला ही बहुत है, तू कभी न हार खाता।
कर्मशील जन ही सदा, तुझ अजेय से रक्षा पाता ।।

सफलता के भाग सम, तुझ प्राणदाता को पुकारें ।
हे इन्द्र तेरी शक्ति पा, हम सभी सुखमूल धारें ।।

यजिष्ठं त्वा ववृमहे देवं देवत्रा होतारममर्त्यम् ।
अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ।।
अपां नपातं सुभगं सुदीदितिमग्निमु श्रेष्ठशोचिषम् ।
स नो मित्रस्य वरुणस्य सो अपामा सुम्नं यक्षते दिवि ।।१३।।
यज्ञकर्म के श्रेष्ठ कर्त्ता, तुम अमर देवता कहलाते ।
जीवन यज्ञ सुन्दर करने, बार बार हम तुझे बुलाते ।।
कर्मशक्ति की रक्षा करके, सौभाग्य हमारा चमकाते ।
हे अग्ने तू शोभाशाली, तुझ को तो हम सदा बुलाते ।।
वरुण मित्र के गुणों को लेकर, कर्मशक्ति की हवि बनाता ।
दिव्य गुणों का कुण्ड बना, उस में हो तू हवन कराता ।।

इति चतुर्थः खण्डः ।

यमग्ने पृत्सु मर्त्यमवा वाजेषु यं जुनाः । स यन्ता शश्वतीरिषः ।।
न किरस्य सहन्त्य पर्येता कयस्य चित् । वाजो अस्ति श्रवाय्यः ।।
स वाजं विश्वचर्षणिरर्वद्भिरस्तु तरुता ।
विप्रेभिरस्तु सनिता ।।१४।।
हे संकल्पाग्ने तू जिस की, संघर्षों से रक्षा करता ।
ज्ञान के प्रति प्रेरणा देकर, उसको अमर धनों से भरता ।।
सहनशक्ति है देता अग्नि, उसको कोई पार न करता ।
उसका बल यशवाला है, सब की वह दुर्बलता हरता ।।
सर्वद्रष्टा है अग्नि वह, कर्मशक्तियों का दान करे ।
जीवन नैया पार कराने, विकसित वृत्तियों से धनवान करे ।।

साकमुक्षो मर्जयन्त स्वसारो दश धीरस्य धीतयो धनुत्रीः ।
हरिः पर्यद्रवज्जाः सूर्यस्य द्रोणं ननक्षे अत्यो न वाजी ।।
सं मातृभिर्न शिशुर्वावशानो वृषा दधन्वे पुरुवारो अद्भिः ।
मर्यो न योषामभि निष्कृतं यन्त्सं गच्छते कलश उस्रियाभिः ।।
उत प्र पिप्य ऊधरघ्न्याया इन्दुर्धाराभिः सचते सुमेधाः ।
मूर्धानं गावः पयसा चमूष्वभि श्रीणन्ति वसुभिर्न निक्तैः ।।१५।।

दुःखहर्ता परमानन्द ने, रसवाली वृत्तियों को घेर लिया।
बलशाली गतिशील अश्व सम; हृदयकलश में स्थान किया ।।

पिबा सुतस्य रसिनो मत्स्वा न इन्द्र गोमतः ।
आपिर्नो बोधि सधमाद्ये वृधे३ऽस्माँ अवन्तु ते धियः ।।
भूयाम ते सुमतौ वाजिनो वयं मा न स्तरभिमातये ।
अस्माञ्चित्राभिरवतादभिष्टिभिरा नः सुम्नेषु यामय ।।१६।।
हे आत्मन् तू पान कर, परमानन्द जो रस से भरा ।
पूर्ण ज्ञान पा प्रसन्न हो, भक्ति मण्डप में ज्ञान करा ।।
तू ही हमारा बन्धु है, तेरी विचार किरणें सर्वत्र छायीं ।
रक्षा कर तू सदा हमारी, शक्तियां तेरी सदा सुखदायीं ।।
हे इन्द्र तेरी सहमति से, सम्पत्ति पर अधिकार करें ।
हिंसक भाव छोड़ तेरी, तेरी रक्षा में सुख प्यार वरें ।।

त्रिरस्मै सप्त धेनवो दुदुह्रिरे सत्यामाशिरं परमे व्योमनि ।
चत्वार्यन्या भुवनानि निर्णिजे चारूणि चक्रे यदृतैरवर्धत ।।
स भक्षमाणो अमृतस्य चारुण उभे द्यावा काव्येना वि शश्रथे ।
तेजिष्ठा अपो मंहना परि व्यत यदी देवस्य श्रवसा सदो विदुः ।।
ते अस्य सन्तु केतवोऽमृत्यवोऽदाभ्यासो जनुषी उभे अनु ।
येभिर्नृम्णा च देव्या च पुनत आदिद्राजानं मनना अगृभ्णत ।।१७।।
परमानन्द का साधक जब, साधन-पथ अपनाता है ।
सात ज्ञानेन्द्रियों गउओं से, सत्य दूध को पाता है ।।
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति में जब, सत्य का पथ मिलता है ।
साधक के साधना-तरु पर, आनन्द का फल खिलता है ।।
तत्त्व ज्ञान में आगे बढ़, जब सत्य दूध का पान करे ।
उसकी शुद्धि करने को, पंचकोषों में भुवन-निर्माण करे ।।
अन्तर्ज्ञान से दिव्य सोम का, घर जब जाना जाता है ।
परमानन्द का अमृत भरकर, भूमण्डल में छा जाता है ।।
परमानन्द के अमर प्रभाव से, बचकर कौन कहीं जाए ।
उसकी महिमा तेज बनी, कर्मों में उसके छा जाए ।।
परमानन्द से प्रकट ज्ञान, कर्म दोनों ही बने रहें ।
उसके सूचक कर्म के झण्डे, अजर अमर हो तने रहें ।।

जिसके बल से दिव्य लाभ हित, यह प्रवाहित होता।
उस शोभाशाली राजा का मन, चिन्तन कर दुःख खोता।।

इति पञ्चमः खण्ड ।

अभि वायुं वीत्यर्षा गृणानो३ऽभि मित्रावरुणा पूयमानः।
अभी नरं धीजवनं रथेष्ठामभीन्द्रं वृषणं वज्रबाहुम्।।
अभि वस्त्रा सुवसनान्यर्षाभि धेनूः सुदुघाः पूयमानः।
अभि चन्द्रा भर्तवे नो हिरण्याभ्यश्वान् रथिनो देव सोम।।
अभी नो अर्ष दिव्या वसून्यभि विश्वा पार्थिवा पूयमानः।
अभि येन द्रविणमश्नवामाभ्यार्षेयं जमदग्निवन्नः।।१८।।
हे सोम तू प्रेरक बन, प्राणशक्ति को विजय कर।
मित्र वरुण की शक्ति देकर, जीवन में पावनता भर।।
सारी इन्द्रियों की जो नेत्री, उस मनः शक्ति को बढ़ा।
विघ्ननाशक शक्ति देकर, प्रज्ञा सुखकारी बना।।
शुभ गुण से प्रवाहित हो, तु पंचकोष ढक लेता है।
आनन्द रस को दोहने वाली, इन्द्रियों में शक्ति देता है।।
तू सुखदाता ऐश्वर्य हित, प्रेरित कर जीवन दान करे।
देहरथ ले जातीं उन, कर्म इन्द्रियों को बलवान करे।।
निज प्रेरणा से बह, दिव्य भौतिक सम्पत्ति दिला।
चक्षु आदि शक्तियों से, ज्ञान आनन्दरस में रमा।।

यज्जायथा अपूर्व्य मघवन् वृत्रहत्याय।
तत्पृथिवीमप्रथयस्तदस्तभ्ना उतो दिवम्।।
तत्ते यज्ञो अजायत तदर्क उत हस्कृतिः।
तद्विश्वमभिभूरसि यज्जातं यच्च जन्त्वम्।।
आमासु पक्वमैरय आ सूर्यं रोहयो दिवि।
घर्मं न सोमं तपता सुवृक्तिभिर्जुष्टं गिर्वणसे बृहत्।।१९।।
हे इन्द्र जब तू नाश करता, विघ्न और अज्ञानता।
लगता कि पृथिवी बना, सब लोक तू ही थामता।।
याजन क्रिया है तुझ से आई, आलोक ऊष्मा का दाता।
भूतकाल में जगत् रचा, भावी सृष्टि का निर्माता।।

साधक को पक्का करता, गति दे सूर्य लोक नढाता ।
उसी सोम की करो उपासना, जो शक्ति का दाता ॥

मत्स्यपायि ते महः पात्रस्येव हरिवो मत्सरो मदः ।
वृषा ते वृष्ण इन्दुर्वाजी सहस्रसातमः ॥
आ नस्ते गन्तु मत्सरो वृषा मदो वरेण्यः ।
सहावाँ इन्द्र सानसिः पृतनाषाडमर्त्यः ॥
त्वं हि शूरः सनिता चोदयो मनुषो रथम् ।
सहावान् दस्युमव्रतमोषः पात्रं न शोचिषा ॥२०॥
हे इन्द्र तू आनन्द दे, तुझ में जो भरा महान है ।
सब सुखदाता ज्ञान प्रदाता, दाताओं में विद्यमान है ॥
हे इन्द्र तुझ से आनन्द पावें, तू है आनन्द का देता ।
तू अजर अमर शक्तिशाली, हिंसक जन का जेता ॥
है इन्द्र तू दाता शु संकल्प, प्रेरणा तू ही शूरवीर है ।
अग्नि सा तप शुद्ध करता, तेरा प्रेरित यह शरीर है ॥
मनशक्ति का धारणकर्त्ता, वाहन बना है तन मेरा ।
कर्महीनता नष्ट करे तू, तप से शुद्ध करे मन मेरा ॥

इति षष्ठः खण्डः । इति द्वितीयोऽर्धः ।

अथ तृतीयोऽर्धः

पवस्व वृष्टिमा सु नोऽपामूर्मि दिवस्परि । अयक्ष्मा बृहतीरिषः ॥
तया पवस्व धारया यया गाव इहागमन् । जन्यास उप नो गृहम् ॥
घृतं पवस्व धारया यज्ञेषु देववीतमः । अस्मभ्यं वृष्टिमा पव ॥
स न ऊर्जे व्या३व्ययं पवित्रं धाव धारया ।
देवासः शृणवन् हि कम् ॥
पवमानो असिष्यदद्रक्षांस्यपजङ्घनत् । प्रत्नवद्रोचयन्रुचः ॥१॥
हे सोम ज्ञान लोक से, वर्षा शुभ कर्मों की कर ।
अविनाशी महान प्रेरणाएँ, हम सब के मन में भर ॥
ज्ञान कर्म को पाकर मेरे, अंग मेरे अधीन रहें ।
इधर उधर भटक न जावें, शुभ कर्मों में लीन रहें ॥

दिव्यता देने वाले कामों को, सोम श्रेष्ठ शक्ति देता।
ज्ञान की धारा बरसा कर, दुर्बलता सब की हर लेता॥
धारा रूप में बहा सोम, मानसिक बल प्रदान करे।
आनन्द प्रेरणा जो मानें, इन्द्रियों को द्युतिमान करे॥
जब वह पावन सोम टपकता, बुरे भावों का करे विनाश।
अपनी पहली शोभाओं का, करना चाहे सदा प्रकाश॥

प्रत्यस्मै पिपीषते विश्वानि विदुषे भर।
अरङ्गमाय जग्मयेऽपश्चादध्वने नरः॥
एमेनं प्रत्येतन सोमेभिः सोमपातमम्।
अमत्रेभिर्ऋजीषिणमिन्द्रं सुतेभिरिन्दुभिः॥
यदी सुतेभिरिन्दुभिः सोमेभिः प्रतिभूषथ।
वेदा विश्वस्य मेधिरो धृषत्तंतमिदेषते॥
अस्मा अस्मा इदन्धसोऽध्वर्यो प्र भरा सुतम्।
कुवित्समस्य जेन्यस्य शर्धतोऽभिशस्तेरवस्वरत्॥२॥
हे ब्रह्मानन्द के प्यासे साधक, वह उन्नति-पथ दिखा रहा।
ब्रह्मानन्द का संचय करो, वह मार्ग है दरशा रहा॥
उन्नति-पथ पर है चलाता, इन्द्र मेधा शक्ति है।
ब्रह्मानन्द संचय करो साधको, इसमें उसकी आसक्ति है॥
सिद्ध करो हे भक्तो इन्द्र को, श्रेष्ठ सोम का पीने वाला।
धारणा-रस उसे पिलाओ, इससे है वह जीने वाला॥
सिद्ध किया रस पान कर, इन्द्र विघ्नों का परिहार करे।
मेधावी सब जानें शुभ, संकल्पों से जीवन सार भरे॥
हिंसारहित यज्ञ कर प्राण शक्ति से आनन्द-पान बना।
हिंसा-शत्रु से रक्षक, उत्साही, इन्द्र को शीघ्र पिला॥

इति प्रथमः खण्डः।

बभ्रवे नु स्वतवसेऽरुणाय दिविस्पृशे। सोमाय गाथमर्चत॥
हस्तच्युतेभिरद्रिभिः सुतं सोमं पुनीतन। मधावा धावता मधु॥
नमसेदुप सीदत दध्नेदभि श्रीणीतन। इन्दुमिन्द्रे दधातन॥
अमित्रहा विचर्षणिः पवस्व सोम शं गवे। देवेभ्यो अनुकामकृत्॥

इन्द्राय सोम पातवे मदाय परि षिच्यसे। मनश्चिन्मनसस्पतिः ॥
पवमान सुवीर्यं रयिं सोम रिरीहि णः। इन्दविन्द्रेण नो युजा ॥३॥
हे भक्तो पालनकर्ता, बलशाली सोम के गुण गाओ।
तेजस्वी ज्ञानी ज्ञानप्रदाता, स्वतंत्र प्रभु को तुम ध्याओ ॥
धारणाओं से बने सोम को, अन्तःकरण में धार लो।
मधुर रसीले परमानन्द को, अमृत-प्रभु उतार लो ॥
मगन होकर सोम में, धारणा और ध्यान हो।
आह्लादक सोम का, प्रज्ञाशक्ति में आधान हो ॥
हे सोम तू है दूरद्रष्टा, शत्रुभावना नाशकारी।
इन्द्रियों को तुष्ट कर, ज्ञान दे कल्याणकारी ॥
हे सोम तुझ को सिद्ध कर, इन्द्र पीकर मस्त होता।
मननशक्ति भी दिलाता, मननशक्ति का तू सोता ॥
हे पवमान सोम तू, शक्ति का प्राण बल तो दान कर।
हे आह्लादक प्रज्ञाशक्ति से, हमारा मेल हे भगवान कर ॥

उद्धेदभि श्रुतामघं वृषभं नर्यापसम्। अस्तारमेषि सूर्य ॥
नव यो नवतिं पुरो बिभेद बाह्वोजसा। अहिं च वृत्रहावधीत् ॥
स न इन्द्रः शिवः सखाऽश्वावद्गोमद्यवमत्। उरुधारेव दोहते ॥४॥
हे प्रेरक रवि तू अन्तर्ज्ञानी, दिव्य मनों में आता है।
कामक्रोध तमभाव नशा, उत्तम कर्म कराता है ॥
इन्द्र ने अपने ओज से, अज्ञानावरण को पार किया।
मित्र रूप में ज्ञान कर्म का, फल देकर उपकार किया ॥

इति द्वितीयः खण्डः।

विभ्राड् बृहत् पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविह्रुतम्।
वातजूतो यो अभिरक्षति त्मना प्रजा पिपर्ति बहुधा वि राजति ॥
विभ्राड् बृहत्सुभृतं वाजसातमं धर्मं दिवो धरुणे सत्यमर्पितम्।
अमित्रहा वृत्रहा दस्युहन्तमं ज्योतिर्जज्ञे असुरहा सपत्नहा ॥
इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमं विश्वजिद्धनजिदुच्यते बृहत्।
विश्वभ्राड् भ्राजो महि सूर्यो दृश उरु पप्रथे सह ओजो अच्युतम् ॥५॥
परम प्रेरक ज्योतिष्मान्, परमानन्द रस पान करे।
गतिशाली साधक को, सीधा सरल जीवन दान करे ॥

प्राणशक्ति से प्रेरित बुद्धि, सब को शक्ति से रक्षा करती ।
रूप रूप में दर्शन देकर, सब के मन की बाधा हरती ॥
वही शक्ति है ज्ञान की दाता, ज्ञान लोक में वास करे ।
शत्रुनाशक विघ्नविनाशक, रवि हिंसक-भाव ह्रास करे ॥
ज्योतियों में श्रेष्ठ ज्योति, सब भोगों को पा लेती ।
ज्योति वाले सूर्य से दर्शन, शक्ति ओज सहनता देती ॥

इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।
शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ॥
मा नो अज्ञाता वृजना दुराध्योमाशिवासोऽव क्रमुः ।
त्वया वयं प्रवतः शश्वतीरपोऽति शूर तरामसि ॥६॥
हे इन्द्र तू है पिता हमारा, ज्ञान से हम को बढ़ा ।
तेरी प्रशंसा सब करें, आलोक-पथ हम को दिखा ॥
हे इन्द्र अजाने भाव अमंगल, हम को नहीं हरायें ।
हे शूर तेरी कृपा से ही, कर्मेन्द्रियां पार कर जायें ॥

अद्याद्या श्वः श्व इन्द्र त्रास्व परे च नः ।
विश्वा च नो जरितॄन्त्सत्पते अहा दिवा नक्तं च रक्षिषः ॥
प्रभङ्गी शूरो मघवा तुवीमघः सम्मिश्लो वीर्याय कम् ।
उभा ते बाहू वृषणा शतक्रतो नि या वज्रं मिमिक्षतुः ॥७॥
हे इन्द्र आज और कल परसों, रक्षा हमारी किया करो ।
सद्भावों का तू परिपालक, भक्तों को जीवन दिया करो ॥
विघ्नविनाशक ऐश्वर्यशाली, निर्भय इन्द्र तू है बलकारी ।
सर्वव्यापक सुखदाता वज्री, ज्ञान-कर्म, भुजाधारी ॥

इति तृतीयः खण्डः ।

जनीयन्तो न्वग्रवः पुत्रीयन्तः सुदानवः । सरस्वन्तं हवामहे ॥८॥
उत्तम दारा सुत पाने को, आनन्दसागर का स्मरण करें ।
दान त्याग करते करते, उन्नति के पथ पर विचरें ॥

उत नः प्रिया प्रियासु सप्त स्वसा सुजुष्टा ।
सरस्वती स्तोम्या भूत् ॥९॥

आंख कानादि सात ऋषियों, की जो वाहन प्यारी है।
स्तुति करें हम शारदा को, जो इसकी अधिकारी है॥

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥
सोमानं स्वरणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कक्षीवन्तं य औशिजः॥
अग्न आयूंषि पवसे आ सुवोर्जमिषं च नः।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम्॥१०॥
बुद्धियों का जो प्रकाशक, शुभ कर्म में प्रेरित करे।
काम क्रोध तम गुण विनाशक, तेज ध्यान नित धरें॥
हे वेदवाणी वक्ता के अधीश्वर, तेरी कृपा ज्ञानी पायें।
दिव्य पुरुष ही तेरे, परमानन्द को पाने जायें॥
हे अग्ने तू जीवन देता, अन्न बल का दान कर।
दुष्ट भावों को हटा कर, हमारी आत्मा बलवान करे॥

ता नः शक्तं पार्थिवस्य महो रायो दिव्यस्य। महि वां क्षत्रं देवेषु॥
ऋतमृतेन सपन्तेषिरं दक्षमाशाते। अद्रुहा देवौ वर्धेते॥
वृष्टिद्यावा रीत्यापेषस्पती दानुमत्याः। बृहन्तं गर्तमाशाते॥११॥
हे वरुण मित्र सम भाव दे, कर रक्षा दिव्यता दान कर।
दूर कर सब दोष हमारे, इन्द्रियां बलवान कर॥
मित्र वरुण की शक्तियां, सत्य दिखायें वेद ज्ञान से।
प्रेरक बल उपभोग करा, बढ़ती रूप समान से॥
मित्र वरुण सुखवर्षा करते, कर्म ज्ञान बढ़ाने वाले।
देते दान योग्य ही अन्न, अखिल ब्रह्माण्ड-रथ चलाने वाले॥

युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परि तस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि॥
युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे। शोणा धृष्णू नृवाहसा॥
केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसे। समुषद्भिरजायथाः॥१२॥
जो साधक अर्थ बचाते, करते योगाभ्यास हैं।
ज्ञान ज्योति से पाते, उत्तम मोक्ष-प्रकाश हैं॥
इन्द्र का रथ चलने वाला, धरता अनेक शरीर है।
चलता रथ शक्ति भरता, ज्ञानवान साधता धीर है॥

ज्ञान रहित इस मन को, आत्मा ही ज्ञान देता।
रूप इसका यह दिखाता; कर्मों का फल दान देता॥

इति चतुर्थः खण्डः।

अयं सोम इन्द्र तुभ्यं सुन्वे तुभ्यं पवते त्वमस्य पाहि।
त्वं ह यं चकृषे त्वं ववृष इन्दुं मदाय युज्याय सोमम्॥
स ईं रथो न भुरिषाडयोजि महः पुरूणि सातये वसूनि।
आदीं विश्वा नहुष्याणि जाता स्वर्षाता वन ऊर्ध्वा नवन्त॥
शुष्मी शर्धो न मारुतं पवस्वानभिशस्ता दिव्या यथा विट्।
आपो न मक्षू सुमतिर्भवा नः सहस्राप्साः पृतनाषाण् न यज्ञः॥१३॥
हे इन्द्र तेरे लिए बना यह, सोम तू ही पान कर।
ब्रह्मदर्शन इससे होता, आनन्ददाता जान कर॥
सुखदाता सोम रथ सम, सहनशक्ति का दाता।
सम्पत्ति देने के लिए इन्द्रियों, में तेज-दान कराता॥
जब यह नर तेजस्वी बन, परमानन्द को पाता।
सारे सुख-साधन का, यह स्वामी बन जाता॥
दिव्य अखण्डित सोम, शक्तिशाली शरीर में बहता।
प्राणशक्ति इन्द्रियों को देता, सदा एकरस है रहता॥
जल सम जल्दी चलकर, रूपों कर्मों में छा जाता।
शत्रुभावों पर विजयी हो, बुद्धियों से शुभ काम बनाता॥

त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः। देवेभिर्मानुषे जने॥
स नो मन्द्राभिरध्वरे जिह्वाभिर्यजा महः।
आ देवान् वक्षि यक्षि च॥
वेत्था हि वेधो अध्वनः पथश्च देवाञ्जसा।
अग्ने यज्ञेषु सुक्रतो॥१४॥
हे पथ-प्रदर्शक इन्द्र, हमारी इन्द्रियां जो कर्म करतीं।
ज्ञान पातीं, श्रेष्ठ कर्म हित, तुझ को हैं सदा ये वरतीं॥
जीवन यज्ञ में अग्नि, वाणियों में तेज का संग कराए।
हे अग्ने ! दिव्य गुणों से, हम को तूही दिव्य बनाए॥

संकल्प-सिद्ध वाणी में इतना, तेज चमक दिखलाता।
दिव्य गुणों को लाने का, साधन वह बन जाता॥
जीवन-यज्ञ कराने वाले, मेधावी अग्नि शुभ कराता।
दिव्य गुण पाने के हित, सारे साधन तू बतलाता॥

होता देवो अमर्त्यः पुरस्तादेति मायया। विदथानि प्रचोदयन्॥
वाजी वाजेषु धीयतेऽध्वरेषु प्र णीयते। विप्रो यज्ञस्य साधनः॥
धिया चक्रे वरेण्यो भूतानां गर्भमा दधे। दक्षस्य पितरं तना॥१५॥
जीवन-यज्ञ कराने वाला, अमर देव अग्नि है प्यारा।
बुद्धि से दर्शन देता है, सारे शुभ कर्म कराने हारा॥
संकल्परूप शक्तिशाली, अग्नि करता काम महान।
बुद्धि को चमकाने वाला, जीवन-यज्ञ करे गतिमान॥
धारणशक्ति श्रेष्ठ बनाती, करता सारे क्रियाकलाप।
बल उपजाता हमें बढ़ाता, सारे काम कराता आप॥

इति पञ्चमः खण्डः।

आ सुते सिञ्चत श्रियं रोदस्योरभिश्रियम्। रसा दधीत वृषभम्॥
ते जानत स्वमोक्यां३ सं वत्सासो न मातृभिः।
मिथो नसन्त जामिभिः॥
उप स्रक्वेषु बप्सतः कृण्वते धरुणं दिवि।
इन्द्रे अग्ना नमः स्वः॥१६॥
धरती से अम्बर तक छाया, सबका साधन अग्नि महान।
यज्ञों में रसपान कराओ, सुख बरसा करता कल्याण॥
पुत्र कभी न साथ छोड़ते, जैसे जननी प्यारी का।
कार्यसाधिका इन्द्रियाँ चाहें, साथ अग्नि बलधारी का॥
साधक अंगों में अग्नि ला, ज्ञान बलों को पाता है।
इन्द्र अग्नि को परम सुख देकर, धारक बल पा जाता है॥

तदिदास भुवनेषु ज्येष्ठं यतो जज्ञ उग्रस्त्वेषनृम्णः।
सद्यो जज्ञानो नि रिणाति शत्रूननु यं विश्वे मदन्त्यूमाः॥
वावृधानः शवसा भूर्योजाः शत्रुर्दासाय भियसं दधाति।
अव्यनच्च व्यनच्च सस्नि सं ते नवन्त प्रभृता मदेषु॥

त्वे क्रतुमपि वृञ्जन्ति विश्वे द्विर्यदेते त्रिर्भवन्त्यूमाः ।
स्वादोः स्वादीयं स्वादुना सृजा समदः सु मधु मधुनाभि योधीः ॥१७॥

सब लोकों में सुन्दर ज्योति, इन्द्र ही सुविख्यात है ।
अज्ञान निशा को हटा कर, करता हर्ष की प्रात है ॥
अपनी शक्ति से हो बढ़कर, विघ्नों का करता संहार ।
जड़ चेतन जो पालन करती, बुद्धि पर पाता अधिकार ॥
दुगने तिगने होने वाले. अपने कर्म तुझे चढ़ाते ।
तेरे से हो दिव्य सुखों का, मोक्ष-मधु हैं पाते ॥

त्रिकद्रुकेषु महिषो यवाशिरं तुविशुष्म-
स्तृम्पत्सोममपिबद्विष्णुना सुतं यथावशम् ।
स ईं ममाद महि कर्म कर्त्तवे महामुरुं
सैनं सश्चद्देवो देवं सत्य इन्दुः सत्यमिन्द्रम् ॥
साकं जातः क्रतुना साकमोजसा ववक्षिथ
साकं वृद्धो वीर्यैः सासहिर्मृधो विचर्षणिः ।
दाता राध स्तुवते काम्यं वसु प्रचेतन
सैनं सश्चद्देवो देवं सत्य इन्दुः सत्यमिन्द्रम् ॥
अध त्विषीमाँ अभ्योजसा क्रिविं युधाभवदा
रोदसी अपृणदस्य मज्मना प्र वावृधे ।
अधत्तान्यं जठरे प्रेमरिच्यत प्र चेतय सैनं
सश्चद्देवो देवं सत्य इन्दुः सत्यमिन्द्रम् ॥१८॥

इन्द्र बलशाली परमानन्द पाता, तीनों अवस्था में सदा ।
मगन हो पाता सच्चा प्रभु, काम करता शुभ सदा ॥
हे इन्द्र तू है ज्ञानदाता; ब्रह्माण्ड धारण कर दिखाता ।
शक्तियों का बन भण्डारी, शत्रुओं को तू हराता ॥
तुझ को जो है साध लेता, उसको ईश्वर बनाता ।
सच्चा साधक आनन्द पा, सत्यरूप इन्द्र को पाता ॥
सजीला इन्द्र अपनी शक्ति से, बन्धनों को जीत लेता ।
अपनी प्रभा से सारे लोकों का वही बनता है नेता ॥
शक्तिशाली ज्ञानी बनता, जिसे इन्द्र अपनाता है ।
सत्यरूप बन आनन्द पाता, वह ही उस तक जाता है ॥

इति षष्ठः खण्डः । इति तृतीयोऽर्धः ।

इति षष्ठः प्रपाठकः ।

अथ सप्तमः प्रपाठकः

अथ प्रथमोऽर्धः

अभि प्र गोपतिं गिरेन्द्रमर्च यथा विदे । सूनुं सत्यस्य सत्पतिम् ॥
आ हरयः ससृज्रिरेऽरुषीरधि बर्हिषि । यत्राभि सं नवामहे ॥
इन्द्राय गाव आशिरं दुदुह्रे वज्रिणे मधु ।
यत्सीमुपह्वरे विदत् ॥१॥

तू जगा प्रकाशपालक, इन्द्र ज्ञान पाने के लिए ।
सत्य को वह प्रकट करता, जग में जमाने के लिए ॥
अन्तःकरण में चेतन लहरें, उठ उठकर चमकाती हैं ।
हम झुकते हैं उसके आगे, यह उसका दर्श कराती हैं ॥
सिद्ध करें ज्ञानरश्मियां, इन्द्र पाने के लिए ।
इन्द्र इससे आनन्द पाता, रस लुटाने के लिए ॥

आ नो विश्वासु हव्यमिन्द्रं समत्सु भूषत ।
उप ब्रह्माणि सवनानि वृत्रहन् परमज्या ऋचीषम ॥
त्वं दाता प्रथमो राधसामस्यसि सत्य ईशानकृत् ।
तुविद्युम्नस्य युज्या वृणीमहे पुत्रस्य शवसो महः ॥२॥

संघर्ष हैं जितने हम करते, उत्तम स्थान पाने के लिए ।
इन्द्र को वे हों समर्पित, विघ्नबाधाएँ नशाने के लिए ॥
यज्ञ भी जो हम करें, उससे इन्द्र की शोभा बढ़े ।
स्तुति करें उसके गुणों की, जो सारे दुष्टों से लड़े ॥
हे इन्द्र तू ऐश्वर्यदाता, तुझ से ही प्रभुता पाते हैं ।
समाधि द्वारा तुझ से मिल, दुःखनाशक बल पाते हैं ॥

प्रत्नं पीयूषं पूर्व्यं यदुक्थ्यं महो गाहाद्दिव आ निरधुक्षत ।
इन्द्रमभि जायमानं समस्वरन् ॥
आदीं के चित् पश्यमानास आप्यं वसुरुचो दिव्या अभ्यनूषत ।
दिवो न वारं सविता व्यूर्णुते ॥

अध यदिम पवमान रोदसी इमा च विश्वा भुवनाभि मज्मना ।
यूथे न निष्ठा वृषभो वि राजसि ॥३॥
स्तुतियोग्य ब्रह्मानन्द को, ज्ञानी जन जब पाते हैं ।
प्रकाशलोक से आते इन्द्र के, स्तुति गीत वह गाते हैं ॥
साधक दिव्य भावना लेकर, ऊँची सम्पत की करे कामना ।
ब्रह्मानन्द के दर्शन कर, करे स्तुति और साधना ॥
द्युलोक का पर्दा हटा के, आदित्य ज्योति करे विस्तार ।
प्रेरक प्रज्ञा अज्ञान हटा कर, जाती ज्ञान लोक के पार ॥
हे पवमान सोम तू अपनी, प्रभा जब भुवनों में फैलाता ।
गउओं में खड़े बलिष्ठ बैल सम अनुपम शोभा पाता ॥
सारी गउओं का सुखदाता, बैल ही उनका पालक है ।
तू है ब्रह्मानन्द का स्वामी, सुखदाता भुवन-संचालक है ॥

इममू षु त्वमस्माकं सनिं गायत्रं नव्यांसम् । अग्ने देवेषु प्र वोचः ॥
विभक्तासि चित्रभानो सिन्धोरूर्मा उपाक आ ।
सद्यो दाशुषे क्षरसि ॥
आ नो भज परमेष्वा वाजेषु मध्यमेषु ।
शिक्षा वस्वो अन्तमस्य ॥४॥
ऊपर उठाने वाले अग्ने, दान का उत्तम गान सिखा ।
मेरी इन्द्रियों को अपनी कृपा से, इस गाने की सीख दिला ॥
सुन्दर शोभा वाले स्वामी, नद से लहरें कट जातीं ॥
बांटने वाले तुम से त्यागी में, आनन्द की लहरें आतीं ।
हे अग्ने उत्तम मध्यम, चीजों में तुम्हारा भाग हो ।
छोटी से छोटी सम्पत्ति में, तेरा ही अनुराग हो ॥

अहमिद्धि पितुष्परि मेधामृतस्य जग्रह । अहं सूर्य इवाजनि ॥
अहं प्रत्नेन जन्मना गिरः शुम्भामि कण्ववत् ।
येनेन्द्रः शुष्ममिद्दधे ॥
ये त्वामिन्द्र न तुष्टुवुर्ऋषयो ये च तुष्टुवुः ।
ममेद् वर्धस्व सुष्टुतः ॥५॥
पालक मेरा है सत्यज्ञानी, उस ज्ञान लाभ का साधन करूँ ।
सूर्य सम प्रकाश पाकर, शुभ कर्मों की प्रेरणा करूँ ॥

मैं हूँ स्तोता मैं हूं साधक, जन्म जन्म से गाता गीत।
गुण गाने से ही इन्द्र प्यारा, शक्तिशाली बनता है मीत ।।
हे इन्द्र तुझको साधा ज्ञानियों ने, अज्ञानियों ने छोड़ दिया।
मैंने तुझ को साध जगत् से, नाता अपना तोड़ लिया ।।
मुझ को आगे ले जा भगवन्, मेरा तन मन तेरे अर्पण।
तुझे पाने के हित ही मैंने, लगा दिया तन मन धन ।।

इति प्रथमः खण्डः।

अग्ने विश्वेभिरग्निभिर्जोषि ब्रह्म सहस्कृत।
ये देवत्रा य आयुषु तेभिर्नो महया गिरः ।।
प्र स विश्वेभिरग्निभिरग्निः स यस्य वाजिनः।
तनये तोके अस्मदा सम्यङ् वाजैः परीवृतः ।।
त्वं नो अग्ने अग्निभिर्ब्रह्म यज्ञं च वर्धय।
त्वं नो देवतातये रायो दानाय चोदय ।।६।।
बल से उत्पन्न संकल्प हे अग्ने, उत्तम कर्म कराता।
जीवन ज्योति में वचन बढ़ा, उत्तम मार्ग दिखाता ।।
साधक वही बल वाला जो, निज संकल्प बनाता।
सारे परिजनों से घिर कर, ज्ञान कर्म की शक्ति पाता ।।
हे अग्ने तू शक्ति देकर, वेद ज्ञान और त्याग बढ़ा।
अपना धन हम दान करें, दिव्य हमारे भाव बना ।।

त्वे सोम प्रथमा वृक्तबर्हिषो महे वाजाय श्रवसे धियं दधुः।
स त्वं नो वीर वीर्याय चोदय ।।
अभ्यभि हि श्रवसा ततर्दिथोत्सं न कं चिज्जनपानमक्षितम्।
शर्याभिर्न भरमाणो गभस्त्योः।
अजीजनो अमृत मर्त्याय कमृतस्य धर्मन्नमृतस्य चारुणः।
सदासरो वाजमच्छा सनिष्यदत् ।।७।।
हे सोम सच्चे भक्त तेरा, स्वागत मन मन्दिर में करते।
अन्तः प्रेरणा पाने के हित, तुझ ईश्वर का ध्यान हैं धरते ।।
तू शूरवीर वीर कामों की, शक्ति उनको देता जा।
जीवन-संघर्षों में बढ़ने को, संकल्प नाव खेता जा ।।

जलपान गृह पर हाथों से, कोई खोल कर पीता है।
आनन्द-स्रोत सोम को पा, वैसे भक्त ज्ञान से जीता है।।
हे सोम तू मरने वाले को, सत्य से अमर बनाता है।
बहता रह तू सदा सदा ही, तू बल और ज्ञान का दाता है।।

एन्दुमिन्द्राय सिञ्चत पिबाति सोम्यं मधु।
प्र राधांसि चोदयते महित्वना।।
उपो हरीणां पतिं राधः पृञ्चन्तमब्रवम्।
नूनं श्रुधि स्तुवतो अश्व्यस्य।।
न ह्या३ऽङ्ग पुरा च न जज्ञे वीरतरस्त्वत्।
न की राया नैवथा न भन्दना।।८।।
महिमा से जो सम्पत्ति देता, उसी इन्द्र को सींचें।
हे इन्द्र तू वह रस पान कर, जो आनन्द तुझ से खींचे।।
तू उन इन्द्रियों का स्वामी, जो ज्ञान का धन देने वाली।
प्रज्ञा शक्ति के स्वामी को, सब बातें हैं सुनने वाली।।
हे इन्द्र तेरे बल की समता, करने वाला कोई नहीं आया।
तुझ से अधिक धनरक्षक का, गीत किसी ने न गाया।।

नदं व ओदतीनां नदं योयुवतीनाम्।
पतिं वो अघ्न्यानां धेनूनामिषुध्यसि।।९।।
ऊपर उठा उन्मत्त बनाए, जो देता ऐसी विचारधारा।
मिलाने और घटाने वाली, कर्मशक्तियों का देने हारा।।
ध्यानवृत्तियां जो देता, वे कभी नाश न होतीं।
उसी इन्द्र को मनायें; शक्ति जिसकी ताप खोतीं।।

इति द्वितीयः खण्डः।

देवो वो द्रविणोदाः पूर्णां विवष्ट्वासिचम्।
उद्वा सिञ्चध्वमुप वा पृणध्वमादिद्वो देव ओहते।।
तं होतारमध्वरस्य प्रचेतसं वह्निं देवा अकृण्वत।
दधाति रत्नं विधते सुवीर्यमग्निर्जनाय दाशुषे।।१०।।
हे भक्तो स्वामी तुम्हारा, सारे धनों का ही दाता।
पूरी आहुति देता समर्पक, पूरे धनों को है पाता।।

त्यागी सेवक भक्त को देता, सुन्दर धन शक्ति वाले।
मेरी इन्द्रियां ध्याती उसको, जो उत्तम ज्ञान कर्म पा ले ॥

अदर्शि गातुवित्तमो यस्मिन् व्रतान्यादधुः।
उपो षु जातमार्यस्य वर्धनमग्निं नक्षन्तु नो गिरः ॥
यस्माद्रेजन्त कृष्टयश्चर्कृत्यानि कृण्वतः।
सहस्रसां मेधसाताविव त्मनाग्निं धीभिर्नमस्यत ॥
प्र दैवोदासो अग्निर्देव इन्द्रो न मज्मना।
अनु मातरं पृथिवीं वि वावृते तस्थौ नाकस्य शर्मणि ॥११॥
पथप्रदर्शक ऊँचा देखा, ऊँचा संकल्प बना लिया।
स्तुति करेंगे हम अग्नि की, जिस ने उन्नत पथ दिखा दिया ॥
नमन करो उस अग्नि का, जिससे डर सारे काम करें।
उस दानी का शासन पाने, जिस से प्रज्ञा पा काम करें ॥
गगन निवासी सूर्य जैसे, धरती मां की सेवा करता।
आनन्दकोष में रहकर अग्नि, अन्नकोष में बल भरता ॥

अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्जमिषं च नः।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥
अग्निऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः।
तमीमहे महागयम् ॥
अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्।
दधद्रयिं मयि पोषम् ॥१२॥
हे अग्ने आयु के दाता, तू अन्न बल का दान दे।
दुष्ट भाव का नाश कर, हम से दूर उनको स्थान दे ॥
जो अग्नि है सब का द्रष्टा, पावक सबका हितकारी।
सब कामों में आगे रहता, महाप्राण के हम पुजारी ॥
हे अग्ने वह तेज दे, शुभ ज्ञान कर्म जिस से पायें।
ऐश्वर्य ऐसा दे हमें, जिस से उत्तम बल पा जायें ॥

अग्ने पावक रोचिषा मन्द्रया देव जिह्वया।
आ देवान् वक्षि यक्षि च ॥
तं त्वा घृतस्नवीमहे चित्रभानो स्वर्दृशम्। देवाँ आ वीतये वह ॥
वीतिहोत्र त्वा कवे द्युमन्तं समिधीमहि। अग्ने बृहन्तमध्वरे ॥१३॥

हे पावक अग्ने तू सुन्दर, आनन्दी शक्ति का दाता।
दिव्य गुणों को बुलाकर, हम से उनका मेल कराता॥
विविध ज्योति के स्वामिन्, हमको ज्ञान से शुद्ध बनाता।
दिव्य गुणों को दान कर, तू ही परमानन्द दर्शाता॥

इति तृतीयः खण्डः ।

अवा नो अग्न ऊतिभिर्गायत्रस्य प्रभर्मणि । विश्वासु धीषु वन्द्य ॥
आ नो अग्ने रयिं भर सत्रासाहं वरेण्यम् ।
विश्वासु पृत्सु दुष्टरम् ॥
आ नो अग्ने सुचेतुना रयिं विश्वायुपोषसम् ।
मार्डीकं धेहि जीवसे ॥१४॥

सब कामों के आगे रह, सब का अभिनन्दन पाता।
रक्षा करो हे अग्ने शुभ, कामों में भक्त तुझे गाता॥
हे अग्ने वह बल दे हम को, हम विजय का वरण करें।
ऐसा धैर्य हमें मिल जाये, सारे विघ्नों का हरण करें॥
हे अग्ने जीवन-यज्ञ निभायें, सुखकारी धन दान करो।
उत्तम ज्ञान ही सब पायें, जन जन प्रतिभावान करो॥

अग्निं हिन्वन्तु नो धियः सप्तिमाशुमिवाजिषु ।
तेन जेष्म धनं धनम् ॥
यया गा आकरामहै सेनयाग्ने तवोत्या । तां नो हिन्व मघत्तये ॥
आग्ने स्थूरं रयिं भर पृथुं गोमन्तमश्विनम् ।
अङ्धि खं वर्तया पविम् ॥
अग्ने नक्षत्रमजरमा सूर्यं रोहयो दिवि । दधज्ज्योतिर्जनेभ्यः ॥
अग्ने केतुर्विशामसि प्रेष्ठः श्रेष्ठ उपस्थसत् ।
बोधा स्तोत्रे वयो दधत् ॥१५॥

ज्ञान कर्म की शक्तियां, संकल्प शक्ति को बढ़ायें।
युद्ध जीतें फुर्तीले घोड़ों से, वैसे सब सम्पत्ति पायें॥
हे अग्ने तेरी रक्षक सेना से, हम अंगों पर शासन करते।
उसी शक्ति को तू देता, जिस से हम सम्पत्ति को वरते॥
हे अग्ने ज्ञान कर्म इन्द्रियों से, अमर धनों का दान कर।
प्रेरणा दे अपनी हम को, शीघ्र प्रभुतावान कर॥

है अग्ने नक्षत्र रवि को तू ने, नील गगन में लटकाया।
संकल्प शक्ति से इन्हें रचा, सबका अंधकार मिटाया॥
हे अग्ने तू ज्ञान-प्रदाता, मार्ग दिखाने वाला है।
साधक को दे ज्ञान तू ही, घट में प्राण बसाने वाला है॥

अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम्।
अपां रेतांसि जिन्वति॥
ईशिषे वार्यस्य हि दात्रस्याग्ने स्वः पतिः।
स्तोता स्यां तव शर्मणि॥
उदग्ने शुचयस्तव शुक्रा भ्राजन्त ईरते। तव ज्योतींष्यर्चयः॥१६॥
अग्नि दिव्य गुणों में आगे, ऊँचा पृथिवी पाल रहा।
द्यौलोक से भी ऊँचा, कर्मों के बना जाल रहा॥
हे अग्ने तू वरने योग्य, परम सुख का पालनकर्ता।
तेरी शरण में रह भक्ति करें, तू ही तो कष्टों का हर्ता॥
हे अग्ने तेरी शुभ्र कांतियां, चमक चमक ऊपर जातीं।
पूजन करें हम इन का, हम से जो शुभ कर्म करातीं॥

इति चतुर्थः खण्डः। इति प्रथमोऽर्धः॥

अथ द्वितीयोऽर्धः

कस्ते जामिर्जनानामग्ने को दाश्वध्वरः।
को ह कस्मिन्नसि श्रितः॥
त्वं जामिर्जनानामग्ने मित्रो असि प्रियः। सखा सखिभ्य ईड्यः॥
यजा नो मित्रावरुणा यजा देवाँ ऋतं बृहत्।
अग्ने यक्षि स्वं दमम्॥१॥
हे अग्ने स्वामी तू क्या है, है कहां पर वास तेरा।
कोई भक्त है तेरा बन्धु समर्पक, कोई बना है दास तेरा॥
हे अग्ने तू बन्धु है केवल, भक्तों का मित्र बना।
मित्र बने जन तुझ को ध्यावें, गाते तुझ से प्रेम बढ़ा॥
हे अग्ने संकल्परूप, तू मित्र वरुण से हमें मिला।
तू ही हम को वश में कर, परम सत्य में अंग लगा॥

ईडेन्यो नमस्यस्तिरस्तमांसि दर्शतः । समग्निरिध्यते वृषा ॥
वृषो अग्निः समिध्यतेऽश्वो न देववाहनः । तं हविष्मन्त ईडते ॥
वृषणं त्वा वयं वृषन् वृषणः समिधीमहि । अग्ने दीद्यतं बृहत् ॥२॥
उस अग्नि को हम चमकाते, जो स्तुति योग्य शक्तिशाली ।
अज्ञान अंधेरा पार करा, ज्योति देता बलशाली ।
उस अग्नि को चेतन करे, दिव्य गुण जो धारण करता ।
त्यागभाव से भक्त हैं गाते, तीव्र अश्व सम आगे बढ़ता ॥
हे समर्थ हे शक्तिशाली, तुझ सुखवर्षक का ध्यान करें ।
चमक चमक हे अग्ने तेरी, शक्ति का हम गान करें ॥

उत्ते बृहन्तो अर्चयः समिधानस्य दीदिवः । अग्ने शुक्रास ईरते ॥
उप त्वा जुह्वो३ मम घृताचीर्यन्तु हर्यत । अग्ने हव्या जुषस्व नः ॥
मन्द्रं होतारमृत्विजं चित्रभानुं विभावसुम् ।
अग्निमीडे स उ श्रवत् ॥३॥
हे अग्ने जब तुझे जगाते, ऊपर को तू उठ जाता ।
तेरी ऊँची ज्वालाओं को, कोई शक्तिमत् न पाता ॥
हे प्यारे मेरी त्यागभावना, ज्ञान से मिल तुझ को पावें ।
स्वीकार करो आहुतियां मेरी; पहले संकल्प की आग जलावें ॥
स्तुति करूँ उस अग्नि की; यज्ञ का जो है आनन्ददाता ।
चमक चमक संकल्प अग्नि में; मेरा अन्तर्ज्ञान बढ़ाता ॥

पाहि नो अग्न एकया पाह्यु३त द्वितीयया ।
पाहि गीर्भिस्तिसृभिरूर्जां पते पाहि चतसृभिर्वसो ॥
पाहि विश्वस्माद्रक्षसो अराव्णः प्र स्म वाजेषु नोऽव ।
त्वामिद्धि नेदिष्ठं देवतातय आपिं नक्षामहे वृधे ॥४॥
ज्ञान बल के हो स्वामी, सब को बसाने वाले ।
रक्षा करो हमारी भगवन्, चारों वेद बनाने वाले ॥
हे अग्ने ! जीवन संघर्षों में, हिंसा स्वार्थ से बच जायें ।
दिव्य गुणों से उन्नति करवे, तुझ बन्धु को शरण में आयें ॥

इति प्रथमः खण्डः ।

इनो राजन्नरतिः समिद्धो रौद्रो दक्षाय सुषुमाँ अदर्शि ।
चिकिद्वि भाति भासा बृहतासिक्नीमेति रुशतीमपाजन् ।।
कृष्णां यदेनीमभि वर्पसाभूज्जनयन्योषां बृहतः पितुर्जाम् ।
ऊर्ध्वं भानुं सूर्यस्य स्तभायन् दिवो वसुभिररतिर्वि भाति ।।
भद्रो भद्रया सचमान आगात् स्वसारं जारो अभ्येति पश्चात् ।
सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन् रुशद्भिर्वर्णैरभि राममस्थात् ।।५।।
सूर्य भी है अग्नि रूप, चक्र घुमा शोभा देता ।
ज्योति से भयानक कृष्णा निशा में लाली भर देता ।।
सूर्य जनक ने उषा पुत्री, को जब भय में प्रकटाया ।
काली रात हटा अग्नि ने, प्रकाशपुञ्ज का चक्र चलाया ।।
यह अग्नि द्युलोक ढांप, प्रकाश रवि का थाम लेता ।
तेजधारी यही अग्नि, सूर्य बनकर काम देता ।।
निशानाशिनी उषा के पीछे, सूर्य भागता शोभा पाता ।
परिचित सुन्दर आलोकों से, चमक चमक अंधकार नशाता ।।

कया ते अग्ने अङ्गिर ऊर्जो नपादुपस्तुतिम् । वराय देव मन्यवे ।।
दाशेम कस्य मनसा यज्ञस्य सहसो यहो । कदु वोच इदं नमः ।।
अधा त्वं हि नस्करो विश्वा अस्मभ्यं सुक्षितीः ।
वाजद्रविणसो गिरः ।।६।।
अंग अंग में रमे हुए, अग्ने हम तुम को वरते हैं ।
उस वाणी से तुम्हें बुलायें, जिसमें मन्यु भरते हैं ।।
वही शक्तिशाली अग्नि, पाप से हमें बचाते हैं ।
किस वस्तु का दान करें, जिस से शीस झुकाते हैं ।।

अग्न आ याह्यग्निभिर्होतारं त्वा वृणीमहे ।
आ त्वामनक्तु प्रयता हविष्मती यजिष्ठं बर्हिरासदे ।।
अच्छा हि त्वा सहसः सूनो अङ्गिरः स्रुचश्चरन्त्यध्वरे ।
ऊर्जो नपातं घृतकेशमीमहेऽग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् ।।७।।
हे अग्ने तू आ जा अपनी, दीप्ति शक्ति को साथ लिये ।
तुझे बुलाते त्यागभाव से, यज्ञ-कार्य को हाथ लिये ।।
यजनशील, पूजनीय को, हृदय आसन पर बिठलायें ।
जानें तुझ को बुद्धि से, तेरे गुण सब ओर फैलायें ।।

हे बलदाता अंग अंग में, तेरी शक्ति भर जाये।
जीवन-यज्ञ में ज्ञान-घृत से ही यज्ञ कर पायें ॥
तुझ को लखकर मेरे अंग, सारे हव्यों से यज्ञ रचायें।
यज्ञ अग्नि में स्रुवा लिये, गतिशील बनें तुझे बढ़ायें ॥
तू बल को है सच्चा करता, तुझे ज्ञान से सभी जगाते।
तू संकल्प की उत्तम अग्नि, तुझे कामना से ध्याते ॥

अच्छा नः शीरशोचिषं गिरो यन्तु दर्शतम्।
अच्छा यज्ञासो नमसा पुरुवसुं पुरुप्रशस्तमूतये ॥
अग्निं सूनुं सहसो जातवेदसं दानाय वार्याणाम्।
द्विता यो भूदमृतो मर्त्येष्वा होता मन्द्रतमो विशि ॥८॥
गीत गायें उस अग्नि के, जो मार्ग दिखाने वाला है।
शांत ज्योति को नमस्कार करें, जो सबका बसाने वाला है ॥
उसका लेकर आसरा हम, यज्ञभाव से बढ़ते जायें।
उसी अग्नि को नमन करें, और उसी के गीत गायें ॥
सहनशक्ति को दर्शाता, सब चीजों का ज्ञान कराता।
उसी अग्नि के पास जाओ, श्रेष्ठ पदार्थ जो हमें दिलाता ॥
अमर बना जो सब जीवों में, दो रूपों में अपना ज्ञान करे।
उत्तम सुख का देने वाला, दिव्य गुणों का दान करे ॥

इति द्वितीयः खण्डः।

अदाभ्यः पुर एता विशामग्निर्मानुषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवः ॥
अभि प्रयांसि वाहसा दाश्वाँ अश्नोति मर्त्यः।
क्षयं पावकशोचिषः ॥
साह्वान् विश्वा अभियुजः क्रतुर्देवानामसृक्तः।
अग्निस्तुविश्रवस्तमः ॥९॥
आगे चलने वाला अग्नि, बनता जीवन का नेता।
शीघ्रगामी रथ की न्याईं, यात्रा में है सुख देता ॥
झुक झुक चलता साधक, सुख से ज्ञान वास को पाता।
नीचे नीचे जो चलता है, वही सब से ऊँचा जाता ॥
सारे दुर्भावों का जेता, दिव्य गुणों से भर दे मन।
ज्ञान धन से धनी बना, ज्ञान प्रभा से चमका दे तन ॥

भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः ।
भद्रा उत प्रशस्तयः ॥
भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये येना समत्सु सासहिः ।
अव स्थिरा तनुहि भूरि शर्धतां वनेमा ते अभिष्टये ॥१०॥
उपासित अग्नि दानमात्र से, जग कर ही कल्याण करे ।
शुभ हो प्रगति पथ भी, सुखकारी हमारे गान करे ॥
हमारे शुभ संकल्प बनाओ, विघ्नों को मार भगायें ।
संघर्षों में विजयी बन, शत्रु भावों को दूर हटायें ॥
इष्ट प्राप्ति हित भजें तुम्हें, दुःखसागर से तर जायें ।
पाप पंक को पार करें, दुष्ट भाव हम से डर पायें ॥

अग्ने वाजस्य गोमत ईशानः सहसो यहो ।
अस्मे देहि जातवेदो महि श्रवः ॥
स इधानो वसुष्कविरग्निरीडेन्यो गिरा ।
रेवदस्मभ्यं पुर्वणीक दीदिहि ॥
क्षपो राजन्नुत त्मनाग्ने वस्तोरुतोषसः ।
स तिग्मजम्भ रक्षसो दह प्रति ॥११॥
हे अग्ने तुम हो बलशाली, ज्ञान धनों के भी स्वामी ।
सब के ज्ञाता सब के शासक, दो आत्मज्ञान हे अन्तर्यामी ॥
मेरी वाणी तेरे गुण गाए, हे क्रांतिकारी बसाने वाले ।
मेरा ज्ञान बढ़ता ही जाए; ज्ञान-प्रभा चमकाने वाले ॥
हे चमकीले सब के शासक, निज तीक्ष्ण ज्योति दिखाता जा ।
अनुपम तेज दिखा निश दिन, सब शत्रु भाव जलाता जा ॥

इति तृतीयः खण्डः ।

विशोविशो वो अतिथिं वाजयन्तः पुरुप्रियम् ।
अग्निं वो दुर्यं वच स्तुषे शूषस्य मन्मभिः ॥
यं जनासो हविष्मन्तो मित्रं न सर्पिरासुतिम् ।
प्रशंसन्ति प्रशस्तिभिः ॥
पन्यांसं जातवेदसं यो देवतात्युद्यता । हव्यान्यैरयद् दिवि ॥१२॥
सब का प्यारा सब में व्यापक, अग्नि की पूजा करें ।
घर में आये विद्वान् का; स्वागत कर मधुभाव भरें ॥

श्रद्धा भरे साधक गीतों से, सदा उसी का गान करें।
सब को सब कुछ देने वाला, दिव्य गुणों का दान करे॥
त्यागभाव को भरकर सब को, प्रकाशलोक दिखाता है।
उसके जो हैं गुण गाता, वही परम पद पाता है॥

समिद्धमग्निं समिधा गिरा गृणे शुचिं पावकं पुरो अध्वरे ध्रुवम्।
विप्रं होतारं पुरुवारमद्रुहं कविं सुम्नैरीमहे जातवेदसम्॥
त्वां दूतमग्ने अमृतं युगे युगे हव्यवाहं दधिरे पायुमीड्यम्।
देवासश्च मर्तासश्च जागृविं विभुं विश्पतिं नमसा नि षेदिरे॥
विभूषन्नग्न उभयाँ अनु व्रता दूतो देवानां रजसी समीयसे।
यत्ते धीतिं सुमतिमावृणीमहेऽध स्मा नस्त्रिवरूथः शिवो भव॥१३॥

वाणी से जो अग्नि बढ़ता, उसकी प्रशंसा मैं करूँ।
संकल्प को दृढ़ करने को, धारण वाणी करूँ॥
पावन अग्नि पापरहित है, जीवन यज्ञ चलाता है।
सब को पावन करने वाला, आगे आगे जाता है॥
बुद्धि बढ़ाता यज्ञ कराता, रक्षा करे सब ओर से।
प्यारे क्रांतदर्शी को हम, करें उपासना जोर से॥
हे अग्ने तू गीत सुनाता, यज्ञ के आगे रहता।
साधक है तुझको ध्याता, तेरी शक्ति से सब सहता॥
तेरी शक्ति का फल पा, प्रजापाल को नमन करे।
जागरूक रह पा आत्मशक्ति, उत्तम पथ पर गमन करें॥
हे अग्ने तू देव नरों को, दिव्य गुणों से भूषित करता।
कर्म में लीन जनों को, दे संदेशा गुण से भरता॥
तेरी योजना को अपना, हम हैं कार्यजगत् में लगते।
तीनों अग्नि में रहकर, तीन अवस्था में हम जगते॥
कल्याण करो हे अग्ने, रहकर सारी अवस्थाओं में।
जागें, सोवें सपने देखें, रहें जग की सेवाओं में॥

उप त्वा जामयो गिरो देदिशतीर्हविष्कृतः।
वायोरनीके अस्थिरन्॥
यस्य त्रिधात्ववृतं बर्हिस्तस्थावसन्दिनम्।
आपश्चिन्नि दधा पदम्॥

एवं देवस्य मीढुषोऽनाधृष्टाभिरूतिभिः ।
भद्रा सूर्य इवोपदृक् ।।१४।।
भक्त सत्य सत्ता को है ध्याता ।
प्राणायाम से मन स्थिर बनाता ।।
प्रभु के प्यारे गीत प्रभु में मन लगाते ।
उसकी ओर इशारे करते, उसे बताते ।।
आसन बिछा अन्तःकरण का, तीनों तत्त्व धारण किये ।
संकल्प की अग्नि लिये, कर्म का आह्वान लिये ।।
पात्र-पद अग्नि का, कामनाएँ पूर्ण करता ।
उन्नति-पथ का विधाता, सूर्य सम है दृष्टि भरता ।।

इति चतुर्थः खण्डः । इति द्वितीयोऽर्धः ।

अथ तृतीयोऽर्धः

अभि त्वा पूर्वपीतये इन्द्र स्तोमेभिरायवः ।
समीचीनास ऋभवः समस्वरन् रुद्रा गृणन्त पूर्व्यम् ।।
अस्येदिन्द्रो वावृधे वृष्ण्यं शवो मदे सुतस्य विष्णवि ।
अद्या तमस्य महिमानमायवोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा ।।१।।
पूर्ण आयु और प्रज्ञा चाहें, तेरी स्तुति वही करें ।
प्रज्ञा से ही आनन्द मिलता, भक्ति तेरी यही करे ।।
प्राणशक्ति को वश में कर, तेरा साधन सदा करें ।
शत्रुनाश की इच्छा वाले, मन से शक्ति तेरी भरें ।।
इन्द्रियों का जो स्वामी बनता, परमानन्द से शक्ति पाता ।
उसी इन्द्र को सभी जानते, सारा जग है महिमा गाता ।।

प्र वामर्चन्त्युक्थिनो नीथाविदो जरितारः ।
इन्द्राग्नी इष आ वृणे ।।
इन्द्राग्नी नवतिं पुरो दासपत्नीरधूनुतम् । साकमेकेन कर्मणा ।।
इन्द्राग्नी अपसस्पर्युप प्र यन्ति धीतयः । ऋतस्य पथ्या३ अनु ।।
इन्द्राग्नी तविषाणि वां सधस्थानि प्रयांसि च ।
युवोरप्तूर्यं हितम् ।।२।।

साम गान के गाने वाले, इन्द्र का पूजन करें।
ब्रह्म-पथ दर्शाने वाले, अग्नि का यजन करें।
प्रेरणा को मान तेरी, नमन मैं तेरा करूँ।
दस पुरियों को तुम ने जीता, दोनों की भक्ति भरूँ।
तुम दोनों ही हम को, परम सत्य दर्शाते हो।
विचार शक्तियां विकसित, हम से कर्म कराते हो।।
दोनों का बल एक स्थान, हम को आगे बढ़ाता।
कर्मों में मन जब लगता, तब तब आनन्द पाता।।

अग्ध्यू३ षु शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः।
भगं न हि त्वा यशसं वसुविदमनु शूर चरामसि॥
पौरो अश्वस्य पुरुकृद्गवामस्युत्सो देव हिरण्ययः।
न किहि दानं परि मर्धिषत् त्वे यद्यद्यामि तदा भर ॥३॥
हे इन्द्र अपनी शक्ति दे, कामना पूर्ण करो।
ज्ञान कर्म का तू विधाता, शक्ति से रक्षण करो।।
विभूतियों का रूप तू है, तेरे पीछे हम चलें।
विकार मन के दूर करे, धन धान्य वाले बनें।।
कर्मकारी इन्द्रियां घोड़े, तू शक्ति से भरता है।
तेरी कृपा से ज्ञान इन्द्रियों से दूध ज्ञान का झरता है।।
कर्मज्ञान को शक्ति मिलकर, काम हमारा पूरा करती।
तेरी दानशीलता मन में, चमकीला आनन्द भरती।।

त्वं ह्येहि चेरवे विदा भगं वसुत्तये।
उद्वावृषस्व मघवन् गविष्टय उदिन्द्राश्वमिष्टये॥
त्वं पुरू सहस्राणि शतानि च यूथा दानाय मंहसे।
आ पुरन्दरं चकृम विप्रवचसं इन्द्रं गायन्तोऽवसे ॥४॥
हे इन्द्र तुझे हैं भक्त बुलाते, परम धन पाने के लिये।
प्रभो शक्ति दे कर्म ज्ञान में शक्ति लाने के लिये।।
हे इन्द्र तू दानी है, भक्त गीतों से पुकारें।
बुद्धि बाणों को बढ़ा कर, देहनगरी में पधारें।।
दान शील जन ही पाता, तुम्हारे हजारों दान।
शक्ति अपनी को बढ़ा, गाता मैं तुम्हारे गान।।

यो विश्वा दयते वसु होता मन्द्रो जनानाम् ।
मधोर्न पात्रा प्रथमान्यस्मै प्र स्तोमा यन्त्वग्नये ॥
अश्वं न गीर्भी रथ्यं सुदानवो मर्मृज्यन्ते देवयवः ।
उभे तोके तनये दस्म विश्पते पर्षि राधो मघोनाम् ॥५॥
जो दाता देता सब को, सुखकारी सारे साधन ।
अर्पित हैं गीत हमारे, मधुपात्रों का भरा नमन ॥
साधक दानभावना से ही, वाहक प्रज्ञाशक्ति पाते ।
दिव्य ज्ञान से चमक देव, पुत्र पोतों में धन लाते ॥

इति प्रथमः खण्डः ।

इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युरा चके ॥६॥
हमारी सुनो पुकार प्रभो, सुख का करके दान ।
रक्षा करो सदा हमारी, इसीलिए करता गुणगान ॥

कया त्वं न ऊत्याभि प्र मन्दसे वृषन् ।
कया स्तोतृभ्य आ भर ॥७॥
इन्द्र है तेरी शक्ति अद्भुत, परमानन्द को देने वाली ।
उत्तम कर्म करा भक्तों से, पूर्ण सुख रक्षाशाली ॥

इन्द्रमिद्देवतातय इन्द्रं प्रयत्यध्वरे ।
इन्द्रं समीके वनिनो हवामह इन्द्रं धनस्य सातये ॥
इन्द्रो मह्ना रोदसी पप्रथच्छव इन्द्रः सूर्यमरोचयत् ।
इन्द्रे ह विश्वा भुवनानि येमिर इन्द्रे स्वानास इन्दवः ॥८॥
इन्द्र का लेते सहारा, शक्ति पाने के लिए ।
आत्म-यज्ञ करते रहें, विजयी बनाने के लिए ॥
ज्ञान धन तो चाहिए, शक्ति बढ़ाने के लिए ।
इन्द्र को ही हम बुलाते, सफलता पाने के लिए ॥
सूय में ज्योति भरी, द्यो पृथिवी का विस्तार किया ।
नियमन कर सब लोकों का, आनन्दरस प्रसार किया ॥

विश्वकर्मन् हविषा वावृधानः स्वयं यजस्व तन्वा३ स्वा हि ते ।
मुह्यन्त्वन्ये अभितो जनास इहास्माकं मघवा सूरिरस्तु ॥९॥

जग के रचयिता हे परमेश्वर, अर्पित हो यज्ञ बढ़ाता।
चांद सूरज की हवि देकर, जग को पूर्ण बनाता॥
यज्ञ-भावना सब को देकर, हम को अपना भक्त बना।
ऐश्वर्यदाता तू हमारा; ऐश्वर्य हमारे को बढ़ा॥

अया रुचा हरिण्या पुनानो विश्वा द्वेषांसि
तरति सयुग्वभिः सूरो न सयुग्वभिः।
धारा पृष्ठस्य रोचते पुनानो अरुषो हरिः
विश्वा यद्रूपा परियास्यृक्वभिः सप्तास्येभिर्ऋक्वभिः॥
प्राचीमनु प्रदिशं याति चेकितत्सं रश्मिभि-
र्यतते दर्शतो रथो दैव्यो दर्शतो रथः।
अग्मन्नुक्थानि पौंस्येन्द्रं जैत्राय हर्षयन्
वज्रश्च यद्भवथो अनपच्युता समत्स्वनपच्युता॥
त्वं ह त्यत्पणीनां विदो वसु सं मातृभिर्मर्जयसि
स्व आ दम ऋतस्य धीतिभिर्दमे।
परावतो न साम तद्यत्रा रणन्ति धीतयः
त्रिधातुभिररुषीभिर्वयो दधे रोचमानो वयो दधे॥१०॥

शूरवीर सहयोग लाभ से, शत्रु विजय कर लेता है।
पवमान सोम अज्ञान हटा; ज्ञान से द्वेष हर लेता है॥
साधक के मन परमानन्द आ, द्वेष नष्ट कर पाता।
सातों इन्द्रियों में आकर, वहां दिव्यानन्द चमकाता॥
जीवन पथ में पग पग पर, शक्ति दान करता रहता।
प्रत्यक्ष रूप हो सब स्थानों पर, ज्ञान वारि बन बहता॥
सोम प्रकाश दान कर सब को, पूर्व दिशा में दर्श कराता॥
दिव्य गुणों के रथ को लेकर, ज्ञान की किरणें चमक उठीं।
शक्ति भरे गीत जब गायें, विजय हित प्रज्ञा गमक उठी॥
परमानन्द से भरी प्रज्ञा, विजय लाभ सदा करती।
विघ्नविनाशक इन्द्र वज्र पा, इन्द्र को विजयश्री वरती॥
जीवन के संघर्षों में, सोम इन्द्र कभी न हारें।
ऐसे देवों पर साधक; क्यों न तन मन वारें॥
अपने धन को भोग लगा, स्वयं ही उससे जिया करते।
ऐसे कंजूसों के अन्तःकरण, परम सत्य शुद्ध किया करते॥

दिव्यानन्द से धोया भोग, शुद्ध रूप है हो जाता।
साम गान मधुर बना, दूर दूर तक खो जाता॥

इति द्वितीयः खण्डः।

उत नो गोषणिं धियमश्वसां वाजसामुत। नृवत्कृणुह्यूतये॥११॥
ज्ञान-प्रकाश से पालक प्रभो, उन्नतिपथ हमें दर्शा।
बुद्धि क्रियाशक्ति से, कर्म इन्द्रियां बलवान बना॥
ज्ञान-धन से धनवान करो, दिन दिन बढ़ते जायें।
शुभ कर्म ही करते हुए, पापों से लड़ते जायें॥

शशमानस्य वा नरः स्वेदस्य सत्यशवसः।
विदा कामस्य वेनतः॥१२॥
प्राणशक्तियो नेता हो तुम, साधक को सत्य तप दान करो।
गतिशील सदा वह बना रहे, उसको विजयो बलवान करो॥

उप नः सूनवो गिरः शृण्वन्त्वमृतस्य ये।
सुमृडीका भवन्तु नः॥१३॥
अमर पिता के पुत्र हैं, दिव्यगुण हमारे पास रहें।
सुख देकर उसके भक्तों को, उसके सारे कष्ट सहें॥

प्र वां महि द्यवी अभ्युपस्तुतिं भरामहे। शुची उप प्रशस्तये॥
पुनाने तन्वा मिथः स्वेन दक्षेण राजथः। ऊह्याथे सनादृतम्॥
मही मित्रस्य साधथस्तरन्ती पिप्रती ऋतम्।
परि यज्ञं नि षेदथुः॥१४॥
धरा सूर्य तुम दोनों मित्र, शुद्ध भाव से बसाने वाले।
भक्त तुम्हारा वर्णन करते, यश गानों को गाने वाले॥
निज देहों से अलग रहें, तुम बल से शासन करते।
प्रभु सत्ता कर प्रकाशित, परम सत्य को धारण करते॥
परम सत्य को बांट धरा, सूर्य परिक्रमा करती।
पूर्ण तृप्ति देकर सब को, यज्ञ-भावना भरती॥

अयमु ते समतसि कपोत इव गर्भधिम्। वचस्तच्चिन्न ओहसे॥
स्तोत्रं राधानां पते गिर्वाहो वीर यस्य ते। विभूतिरस्तु सूनृता॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठा न ऊतयेऽस्मिन् वाजे शतक्रतो ।
समन्येषु ब्रवावहै ।।१५।।

गर्भवती कपोती का, रक्षण कपोत प्रेम से करे ।
साधक की विनय को सुन, सप्रेम ध्यान से वह भरे ।।
सुख सम्पत्ति के तुम स्वामी, तेरा करें आराधन ।
तुम प्रेरक हो शूरवीर हो, तेरा ही करते वर्णन ।।
इन्द्र शक्तियों के स्वामी, हमें यज्ञ का मार्ग बता ।
उन्नति पथ पर चलते हम, तेरी सम्पत्ति पावें सदा ।।

गाव उप वदावटे महो यज्ञस्य रप्सुदा । उभा कर्णा हिरण्यया ।।
अभ्यारमिदद्रयो निषिक्तं पुष्करे मधु । अवटस्य विसर्जने ।।
सिञ्चन्ति नमसावटमुच्चाचक्रं परिज्मानम् ।
नीचीनवारमक्षितम् ।।१६।।

सोने के कानों वाली गउएँ, इन्द्रियों में यज्ञ भाव भरें ।
उनमें श्रद्धा विश्वास धरें, संकल्पों से कर्म करें ।।
अन्तःकरण का आनन्दामृत, चित्तवृत्तियां भोग करतीं ।
इन से मिलकर प्रज्ञाशक्ति, मन में शक्ति को भरतीं ।।
उच्चलोक में भ्रमण करे, जो अधः लोक में भाव रहते ।
अपना आप अर्पण कर, भक्त सींचते शुद्ध कहते ।।

इति तृतीयः खण्डः ।

मा भेम मा श्रमिष्मोग्रस्य सख्ये तव ।
महत्ते वृष्णो अभिचक्ष्यं कृतं पश्येम तुर्वशं यदुम् ।।
सव्यामनु स्फिग्यं वावसे वृषा न दानो अस्य रोषति ।
मध्वा सम्पृक्ताः सारघेण धेनवस्तूयमेहि द्रवा पिब ।।१७।।

हे इन्द्र तू बलवान है, तुझे मित्र पा भय मिटायें ।
हिंसाशील को यम नियम, सिखा वश में लायें ।।
ऐसे काम करें सदा हम, जिस से कभी न थकने पायें ।
ऐसी शक्ति तू ही देता, तुझ को तेरी कीर्ति सुनायें ।।
अनुकूल हमारे तू रहता है, दान हमारा व्यर्थ न जाता ।
अमृतभरी मन की शक्तियां, मधुर पान से उनका नाता ।।

इमा उ त्वा पुरूवसो गिरो वर्धन्तु या मम ।
पावकवर्णाः शुचयो विपश्चितोऽभि स्तोमैरनूषत ॥
अयं सहस्रमृषिभिः सहस्कृतः समुद्र इव पप्रथे ।
सत्यः सो अस्य महिमा गृणे शवो यज्ञेषु विप्रराज्ये ॥१८॥
मेरी वाणियाँ तुझे ध्यातीं, हे इन्द्र हम में बसाने वाले ।
सब के शोधक स्वयं शुद्ध, गीतों का आनन्द पावे वाले ॥
कई गुणा बलवान बनता, इन्द्र ज्ञान की शक्ति पा ।
समुद्र-सम यह फैल जाता, प्रज्ञा से अनुरक्ति ला ॥
सचमुच यह महान है, ज्ञान अग्नि की स्तुति करूँ ।
यज्ञ-भाव हो लक्ष्य मेरा, इससे मैं बल को वरूँ ॥

यस्यायं विश्व आर्यो दासः शेवधिपा अरिः ।
तिरश्चिदर्ये रुशमे पवीरवि तुभ्येत् सो अज्यते रयिः ॥
तुरण्यवो मधुमन्तं घृतश्चुतं विप्रासो अर्कमानृचुः ।
अस्मे रयिः पप्रथे वृष्ण्यं शवोऽस्मे स्वानास इन्दवः ॥१९॥
उन्नति-पथ पर ले जाए, अवनत कर गिराता हो ।
रक्षक हो या शत्रु हो, सुखदाता या दुःखदाता हो ॥
धन को वही पाता है, जो इन्द्रियों का स्वामी है ।
ज्ञान प्रभा से ज्योतित, तेरे इन्द्ररूप का अनुगामी है ॥
प्रतिभाशाली कर्मशील हो, तेरे ज्ञान तेज की पूजा करते ।
त्यागी बन ऐश्वर्य बढ़ावें, अन्तर्ज्ञान से आनन्द वरते ॥

गोमन्न इन्दो अश्ववत् सुतः सुदक्ष धनिव ।
शुचिं च वर्णमधि गोषु धारय ॥
स नो हरीणां पत इन्दो देवप्सरस्तमः ।
सखेव सख्ये नर्यो रुचे भव ॥
सनेमि त्वमस्मदा अदेवं कं चिदत्रिणम् ।
साह्वाँ इन्दो परि बाधो अप द्वयुम् ॥२०॥
तैयार होकर सोम तू, कल्याणकारी शक्ति दे ।
ज्ञान कर्म पथ पर चलें, यश पावें में अनुरक्ति दे ॥
सब अंगों के स्वामी सोम, तू ज्ञान कर्म भण्डार है ।
साधक शुभ ही करो, जैसे मित्र मित्र का प्यार है ॥

हे चमकाने वाले सोम, लघु स्वार्थ भाव नष्ट कर।
आनन्ददाता तू प्रभो, हमारे झगड़े कष्ट हर॥

अञ्जते व्यञ्जते समञ्जते क्रतुं रिहन्ति मध्वाभ्यञ्जते।
सिन्धोरुच्छ्वासे पतयन्तमुक्षणं हिरण्यपावाः पशुमप्सु गृभ्णते॥
विपश्चिते पवमानाय गायत मही न धारात्यन्धो अर्षति।
अहिर्न जूर्णामति सर्पति त्वचमत्यो न क्रीडन्नसरद्वृषा हरिः॥
अग्रेगो राजाप्यस्तविष्यते विमानो अह्नां भुवनेष्वर्पितः।
हरिर्घृतस्नुः सुदृशीको अर्णवो ज्योतीरथः पवते राय ओक्यः॥२१॥

ज्ञान से पावन बने भक्त, हृदय में सोम का आनन्द पाते।
ज्ञान कर्म को सानन्द पा, जीवन अपना शुद्ध बनाते॥
स्तुति करो उसी सोम की, भले बुरे का ज्ञान जो देता।
सर्प त्वचा सम पाप छोड़, घोड़े सम आगे दौड़ा जाता॥
मन की आंखों से देख, उसे कर्मों से प्रकटाते हैं।
अन्तःकरण में उसे रचा, जीवन मधुर बनाते हैं॥
प्राणशक्ति का देने वाला, सोम है सौन्दर्य धारा बहाता।
अग्रगामी आलोकधारी, सोम है ज्ञान-कर्म निर्माता॥
वह आकर्षक ज्योतिवाला, ज्योति-रथ पर आता है।
अमर सुखों को देने वाला, आनन्द भर भर लाता है॥
ज्ञान-प्रभा से आलोकित कर, भक्त हृदय सुखदाता है।
परमानन्द का दान करे, जीवन अमर बनाता है॥

इति चतुर्थः खण्डः। इति तृतीयोऽर्धः।

इति सप्तमः प्रपाठकः।

अथ अष्टमः प्रपाठकः

अथ प्रथमोऽर्धः

विश्वेभिरग्ने अग्निभिरिमं यज्ञमिदं वचः। चनो धाः सहसो यहो ॥
यच्चिद्धि शश्वता तना देवं देवं यजामहे। त्वे इद्धूयते हविः ॥
प्रियो नो अस्तु विश्पतिर्होता मन्द्रो वरेण्यः।
प्रियाः स्वग्नयो वयम् ॥१॥
हे अग्ने तेरा बल ही, सब रचना है करता।
यज्ञभावना भर दे हम में, तू है ज्ञान ज्योति धरता ॥
वाणी में भी शक्ति भर दे, ऊँची भावना हो हमारी।
कर्मयोगी बन सभी हम, पा सकें करुणा तुम्हारी ॥
कर्मों के ताने बाने से, नित नित शुभ गुण पावें।
सारे साधन तुझ को अर्पित, कर संकल्प शक्ति से ध्यावें ॥
सारी सृष्टि को जो बनाता, वही हमारा प्यारा है।
आनन्द देता स्वामी सब का, शुभ भावों का द्वारा है ॥

इन्द्रं वो विश्वतस्परि हवामहे जनेभ्यः। अस्माकमस्तु केवलः ॥
स नो वृषन्नमुं चरुं सत्रादावन्नपा वृधि। अस्मभ्यमप्रतिष्कुतः ॥
वृषा यूथेव वंसगः कृष्टीरियर्त्योजसा। ईशानो अप्रतिष्कुतः ॥२॥
इन्द्र को हम सब बुलाते, लक्ष्य है वही हमारा।
भक्त जन हैं उस को पाते, सर्वश्रेष्ठ स्वामी प्यारा ॥
हे इन्द्र है तू सुख वर्षाता, हमें हवि का दान दे।
यज्ञ कर ही भोग भोगें, हम को ऐसा ज्ञान दे ॥
शक्तिशाली बैल जैसे गउओं ढिग स्वयं है जाता।
कर्मों के स्वामी इन्द्र प्रभु को, क्रियाशील है पाता ॥

त्वं नश्चित्र ऊत्या वसो राधांसि चोदय।
अस्य रायस्त्वमग्ने रथीरसि विदा गाधं तुचे तु नः ॥
पर्षि तोकं तनयं पर्तृभिष्ट्वमदब्धैरप्रयुत्वभिः।
अग्ने हेडांसि दैव्या युयोधि नोऽदेवानि ह्वरांसि च ॥३॥

अपनी अद्भुत रक्षा में रख, आनन्द-साधन वर्षाओ।
शक्ति समृद्धि के तुम स्वामी, सन्तान हमारी श्रेष्ठ बनाओ॥
अमोघ साधन हैं तुम्हारे, पुत्र पौत्र का पालन करता।
दैविक, भौतिक, आध्यात्मिक; तापों बाधाओं को हरता॥

किमित्ते विष्णो परिचक्षि नाम प्र यद्ववक्षे शिपिविष्टो अस्मि।
मा वर्पो अस्मदप गूह एतद्यदन्यरूपः समिथे बभूथ॥
प्र तत्ते अद्य शिपिविष्ट हव्यमर्यः शंसामि वयुनानि विद्वान्।
तं त्वा गृणामि तवसमतव्यान् क्षयन्तमस्य रजसः पराके॥
वषट् ते विष्णवास आ कृणोमि तन्मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यम्।
वर्धन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥४॥
विष्णो कैसे वर्णन करूँ, तेरे नाम का स्वामी।
तू है अपने को दिखाता, हो कर अन्तर्यामी॥
तेजभरा निज रूप दिखा, मत हम से अपना आप छिपा।
कैसे जानें कैसे मानें, संघर्षों में तेरा रूप है क्या॥
मैं दीन तेरे गीतों से, बल और शक्ति लिया करता।
हे विष्णो तू यज्ञ रूप है, तेरे मुख में हवि दान करूँ।
तू है सब में रहने वाला, स्वीकार करो धन धान धरूँ॥
तुझे बढ़ाऊँ स्तुति गीतों से; तू मेरे ढिग आता जा।
तेरी व्यापक शक्ति पाऊँ, कष्टों से हमें बचाता जा॥

इति प्रथमः खण्डः।

वायो शुक्रो अयामि ते मध्वो अग्रं दिविष्टिषु।
आ याहि सोमपीतये स्पार्हो देव नियुत्वता॥
इन्द्रश्च वायवेषां सोमानां पीतिमर्हथः।
युवां हि यन्तीन्दवो निम्नमापो न सध्र्यक्॥
वायविन्द्रश्च शुष्मिणा सरथं शवसस्पती।
नियुत्वन्ता न ऊतय आ यातं सोमपीतये॥५॥
हे प्राणशक्ते अवगुण छोड़, गुणों को मैं पाऊँ।
शुद्धभाव से तुझ से, दिव्य मधुर फल खाऊँ॥
हे देव तुझे मैं चाहूँ, तू योग भरी प्रज्ञाशक्ति दे।
परमानन्द का पान करूँ, ऐसी अनुपम भक्ति दे॥

पानी नीचे को बहता है, परमानन्द देवों को पाता।
प्राण और प्रज्ञा शक्ति, पाने वाला है तर जाता॥
वायु इन्द्र तुम शक्ति दो, परमानन्द का पान करें।
तेरे दिखाए मार्ग पर चल, योग शक्ति का ध्यान करें॥

अध क्षपा परिष्कृतो वाजाँ अभि प्र गाहसे।
यदी विवस्वतो धियो हरिं हिन्वन्ति यातवे॥
तमस्य मर्जयामसि मदो य इन्द्रपातमः।
यं गाव आसभिर्दधुः पुरा नूनं च सूरयः॥
तं गायथा पुराण्या पुनानमभ्यनूषत।
उतो कृपन्त धीतयो देवानां नाम बिभ्रतीः॥६॥
ऊंचे विचार ले भक्त चाहें, सोम से ऊँचा बनता।
अज्ञान है तब नाश होता, ज्ञान चारों ओर तनता॥
परमानन्द से प्रज्ञाशक्ति, पाने को हम शुद्ध बनाते।
ज्ञानशक्ति से पाकर इसको, प्राणशक्ति से उसे बढ़ाते॥
करो प्रशंसा मधुगीतों से, आई परमानन्द की धारा।
सूर्य अग्नि की दिव्य शक्तियां, देतीं उसे सहारा॥

अश्वं न त्वा वारवन्तं वन्दध्या अग्निं नमोभिः।
सम्राजन्तमध्वराणाम्॥
स घा नः सूनुः शवसा पृथुप्रगामा सुशेवः।
मीढ्वाँ अस्माकं बभूयात्॥
स नो दूराच्चासाच्च नि मर्त्यादघायोः।
पाहि सदमिद्विश्वायुः॥७॥
विनयी बन करें वन्दना, जो यज्ञों का अधिष्ठाता।
घोड़े सा शक्तिशाली अग्नि, विघ्नों को मार भगाता॥
हमें प्रेरणा देने वाला, असीम बल ले सब में समाया।
कैसी सुन्दर रचना उसकी, सुख ही सुख बरसाया॥
हे सब के आधार प्रभो, दूर रहे या वह पास।
पापी जन से हमें बचाओ, हमारे यश का हो विकास॥

त्वमिन्द्र प्रतूर्तिष्वभि विश्वा असि स्पृधः।
अशस्तिहा जनिता वृत्रतूरसि त्वं तूर्य तरुष्यतः॥

अनु ते शुष्मं तुरयन्तमीयतुः क्षोणी शिशुं न मातरः ।
विश्वास्ते स्पृधः श्नथयन्त मन्यवे वृत्रं यदिन्द्र तूर्वसि ॥८॥
वासनाएँ शत्रु बन जब, आत्मयुद्ध में आती है।
बलशाली शत्रुनाशक इन्द्र से, वह भय खाती हैं॥
हिंसक भावों का नाश करें, स्वच्छन्दता दमन करें।
सुन्दर शासन करने वाला, तू दुष्टों का शमन करे॥
शक्तिशाली बालक के, माता पिता अनुगामी।
पृथिवी द्यौ लोक सभी, तेरी गति से द्रुतगामी॥
सब के मन को ढकने वाले, अज्ञान करे तू नाश।
काम क्रोध हैं ढीले होते, ज्ञान का होता जब प्रकाश॥

इति द्वितीयः खण्डः ।

यज्ञ इन्द्रमवर्धयद् यद्भूमिं व्यवर्तयत् । चक्राण ओपशं दिवि ॥
व्य३न्तरिक्षमतिरन् मदे सोमस्य रोचना ।
इन्द्रो यदभिनद् बलम् ॥
उद्गा आजदङ्गिरोभ्य आविष्कृण्वन् गुहा सतीः ।
अर्वाञ्चं नुनुदे बलम् ॥६॥
ज्ञान और कर्म की शक्ति, मन का तन से मेल करे।
शक्ति आत्मा की तब बढ़ती, जब यह बुद्धि खेल करे॥
काम क्रोध का काला परदा, इन्द्र ने जब फाड़ डाला।
अंग अंग में छिपी शक्तियों, का हो गया उजाला॥

त्यमु वः सत्रासाहं विश्वासु गीर्ष्वायतम् । आ च्यावयस्यूतये ॥
युध्मं सन्तमनर्वाणं सोमपामनपच्युतम् । नरमवार्यक्रतुम् ॥
शिक्षा ण इन्द्र राय आ पुरु विद्वाँ ऋचीषम ।
अवा नः पार्ये धने ॥१०॥
उन्नति चाहो गीत गा, इन्द्र को ही तुम बुलाओ।
उससे करके सामना, दुष्ट भावों को भगाओ॥
काम क्रोध शत्रुओं को, रण में सदा हराने वाला।
उस नेता में अनुपम शक्ति, परमानन्द पिलाने वाला॥
हे इन्द्र शिक्षा दे हमें तू, समृद्धि कैसे पायें हम।
तेरी रक्षा पा भव पार करें, मुक्तिधन कमायें हम॥

तव त्यदिन्द्रियं बृहत्तव दक्षमुत क्रतुम् ।
वज्रं शिशाति धिषणा वरेण्यम् ।।
तव द्यौरिन्द्र पौंस्यं पृथिवी वर्धति श्रवः ।
त्वामापः पर्वतासश्च हिन्विरे ।।
त्वां विष्णुर्बृहन् क्षयो मित्रो गृणाति वरुणः ।
त्वां शर्धो मदत्यनु मारुतम् ।।११।।
हे इन्द्र तेरी ज्ञान कर्म, इन्द्रियाँ शक्ति वाली ।
प्रज्ञाशक्ति पाती उसको, बुरी भावना से खाली ।।
तेरी शक्ति सब में रहती, जग के सारे लोकों में ।
तेरा यश सब गाते हैं, भक्ति भरे श्लोकों में ।।
तू विशाल और व्यापक है, स्नेह दान करता रहता ।
प्राणशक्ति से हर्ष देकर, पाप मैल हरता रहता ।।

इति तृतीयः खण्डः ।

नमस्ते अग्न ओजसे गृणन्ति देव कृष्टयः । अमैरमित्रमर्दय ।।
कुवित्सु नो गविष्टयेऽग्ने संवेषिषो रयिम् । उरुकृदुरु णस्कृधि ।।
मा नो अग्ने महाधने परा वर्ग्भारभृद्यथा ।
संवर्गं सं रयिं जय ।।१२।।
हे अग्ने कर्मशील जन, अपनी भेंट चढ़ा बल पाते ।
तू तेज से शत्रु जला, इसीलिए तुझ को हैं ध्याते ।।
ज्ञान का प्रकाश पायें, वह विभूति दान कर ।
तू बड़ा महान है, हमें महत्ता प्रदान कर ।।
मोक्षलाभ है लक्ष्य हमारा, हमें प्राप्त करने का बल दे ।
हम तेरे पर भार न हों, दिव्य गुणों का पूरा बल दे ।।
साथ हमारा छोड़ न देना, जब तक मोक्ष नहीं पायें ।
ऐश्वर्य लाभ कर तेरे से, आगे ही आगे बढ़ते जायें ।।

समस्य मन्यवे विशो विश्वा नमन्त कृष्टयः । समुद्रायेव सिन्धवः ।।
वि चिद् वृत्रस्य दोधतः शिरो बिभेद वृष्णिना ।
वज्रेण शतपर्वणा ।।
ओजस्तदस्य तित्विष उभे यत्समवर्तयत् ।
इन्द्रश्चर्मेव रोदसी ।।१३।।

प्रज्ञाशक्ति से कर्म कमाते; प्रभु चरणों में जाते।
नदियाँ जैसे सागर पातीं, साधक प्रभु को पाते॥
अज्ञान बड़ा भयकारी है, सारे जग को कंपाता।
क्षात्रशक्ति प्रकाशदाता, इन्द्र का वज्र काट गिराता॥
इन्द्र का बल सब में चमके, वह लोक लोक घुमाता।
योद्धा के कर में ढाल रहे, कण कण गतिशील बनाता॥

सुमन्मा वस्वी रन्ती सूनरी॥
सरूप वृषन्ना गहीमौ भद्रौ धुर्यावभि। ताविमा उप सर्पतः॥
नीव शीर्षाणि मृढ्वं मध्य आपस्य तिष्ठति।
शृङ्गेभिर्दशभिर्दिशन्॥१४॥
चितिशक्ति सुन्दर नेता बन, सारे कर्म कराती।
मननशक्ति से बल पाकर, आगे ही है ले जाती॥
प्राण अपान शरीर-रथ, चलाने वाले घोड़े हैं।
इन्द्र तू इनको थाम ले, आ पहुंचे ये जोड़े हैं॥
दसों इन्द्रियां सीस उठातीं, साधक इनको जीत ले।
कर्म सागर के बीच खड़ीं, करतीं इशारे संगीत के॥

इति चतुर्थः खण्डः। इति प्रथमोऽर्धः॥

अथ द्वितीयोऽर्धः

पन्यं पन्यमित् सोतार आ धावत मद्याय। सोमं वीराय शूराय॥
एह हरी ब्रह्मयुजा शग्मा वक्षतः सखायम्।
इन्द्रं गीर्भिर्गिर्वणसम्॥
पाता वृत्रहा सुतमा घा गमन्नारे अस्मत्।
नि यमते शतमूतिः॥१॥
ज्ञानियो परमानन्द पाने, दौड़ दौड़ कर आओ।
वीरता शूरता भी देता, इससे सब सुख पाओ॥
ज्ञान कर्म से शक्ति पाकर, समाधि में जब योगी जाता।
इन्द्र शक्ति को पाकर, गीत उसी के गाता॥
बहते परमानन्द को पा, इन्द्र हमें है अपनाता।
शत शत शक्ति किरणों पर, संयमशील बन जाता॥

आ त्वा विशन्त्विन्दवः समुद्रमिव सिन्धवः।
न त्वामिन्द्राति रिच्यते॥
विव्यक्थ महिना वृषन्भक्षं सोमस्य जागृवे। य इन्द्र जठरेषु ते॥
अरं त इन्द्र कुक्षये सोमो भवतु वृत्रहन्। अरं धामभ्य इन्दवः॥२॥
नदियां बहती जातीं, सागर में हो जातीं लीन।
इन्द्र परमानन्द को पाता, होते उसके दुःख क्षीण॥
सब से है महान तू ही, तुझ में परमानन्द समाया।
तू ने अपनी ही शक्ति से, उस को है अपनाया॥

जराबोध तद्विविड्ढि विशे विशे यज्ञियाय।
स्तोमं रुद्राय दृशीकम्॥
स नो महाँ अनिमानो धूमकेतुः पुरुश्चन्द्रः। धिये वाजाय हिन्वतु॥
स रेवाँ इव विश्पतिर्दैव्यः केतुः शृणोतु नः।
उक्थैरग्निर्बृहद्भानुः॥३॥
तू स्तुतियों से जाना जाता, समर्पण से गाया।
विनयी भक्त के गीतों में, तू ही सदा समाया॥
अग्नि जो महान है, हम बुद्धि बल से जानते।
आनन्ददाता बुद्धि प्रेरक, उसको सब बखानते॥
प्रजापालक ऐश्वर्यस्वामी, दिव्य ज्ञान का दाता।
वह तेजस्वी उसकी सुनता, जो अपनी विनय सुनाता॥

तद्वो गाय सुते सचा पुरुहूताय सत्वने। शं यद् गवे न शाकिने॥
न घा वसुर्नि यमते दानं वाजस्य गोमतः। यत् सीमुप श्रवद्गिरः॥
कुवित्सस्य प्र हि व्रजं गोमन्तं दस्युहा गमत्।
शचीभिरप नो वरत्॥४॥
परमानन्द को पाना है तो, पूज्य इन्द्र के गीत गाओ।
आत्मयज्ञ में शुभ पाने को, ज्ञान कर्म की शक्ति लगाओ॥
इन्द्र स्तुतियां जब सुन लेता, सिद्ध ही हो जाता।
सब को बसाता शक्तिदाता, अभद्र सुख बरसाता॥
अज्ञान के बन्धन काट, प्रभामयी मुक्ति आती।
सारे अंगों में साधक के, ज्ञान की शक्ति भर जाती॥

इति प्रथमः खण्डः।

इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधा नि दधे पदम् । समूढमस्य पांसुरे ॥
त्रीणि पदा वि चक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः ।
अतो धर्माणि धारयन् ॥
विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे ।
इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥
तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् ॥
तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते । विष्णोर्यत्परमं पदम् ॥
अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे ।
पृथिव्या अधि सानवि ॥५॥

तीन लोक में प्रभु की, सत्ता है फैल रही।
अज्ञानान्धकार भरे अन्तर में, किसी को दिखती नहीं ॥
गुण कर्मों से भरा प्रभु, शक्ति से लोकों में छाया ।
अनुपम अबाध चाल से, सबको है गतिशील बनाया ॥
देख देख प्रभु को रचना, साधक शिक्षा पाता ।
मित्र हमारा वही बना, जो कर्मशक्ति का दाता ॥
ज्ञानी मोक्ष लोक को, सीधा हो देखा करता ।
धरती का जन धरती को, चीजों पर हो है मरता ॥
सावधान जागा जन ही, विष्णु की महिमा जाने ।
दिव्य गुणों से प्रेरित, आगे ही बढ़ना ठाने ॥

मो षु त्वा वाधतश्च नारे अस्मन्नि रीरमन् ।
आरात्तद्वा सधमादं न आ गहीह वा सन्नुप श्रुधि ॥
इमे हि ते ब्रह्मकृतः सुते सचा मधौ न मक्ष आसते ।
इन्द्रे कामं जरितारो वसूयवो रथे न पादमा दधुः ॥६॥

हे इन्द्र मन से प्रतिकूल, मेधावी नहीं सुहाते ।
सभा समाजों में जाकर, श्रेष्ठ बुद्धि वचन सुनाते ॥
मधु से आकर्षित मक्खियां, चारों ओर जुड़ जायें ।
ब्रह्मानन्द रस पाने को, साधन तेरे ढिग आयें ॥
धन के लोभी शूर, रथ पर चढ़ के जाते ।
परम इष्ट पाने को, भक्त इन्द्र से प्रज्ञा पाते ॥

अस्तावि मन्म पूर्व्यं ब्रह्मेन्द्राय वोचत ।
पूर्वीर्ऋतस्य बृहतीरनूषत स्तोतुर्मेधा असृक्षत ॥

समिन्द्रो रायो बृहतीरधूनुत सं क्षोणी समु सूर्यम् ।
सं शुक्रासः शुचयः सं गवाशिरः सोमा इन्द्रममन्दिषुः ॥७॥
इन्द्र बढ़ाए विभूति हमारी, सकल पदार्थ दान करे ।
शक्तिदाता वस्तु सारी, बुद्धि से बलवान करे ॥
ज्ञान मिला कर सब भोगें, पायें परमानन्द ।
बुद्धिमान् बन सब कुछ पायें, सारे हों दुःख मन्द ॥

इन्द्राय सोम पातवे वृत्रघ्ने परि षिच्यसे ।
नरे च दक्षिणावते वीराय सदनासदे ॥
तं सखायः पुरूरुचं वयं यूयं च सूरयः ।
अश्याम वाजगन्ध्यं सनेम वाजपस्त्यम् ॥
परि त्यं हर्यतं हरिं बभ्रुं पुनन्ति वारेण ।
यो देवान्विश्वाँ इत् परि मदेन सह गच्छति ॥८॥
प्रज्ञाशक्ति पाने के हित, हे सोम तुझे पुकारा ।
अज्ञान विघ्नों का नाश करे, बहाता विवेकी वीर धारा ॥
ज्ञानी मित्रो ज्ञान सुगन्धित, सोम भोग को पायें ।
सारे साधक सुख पाने, सोम पास ही जायें ॥
सुन्दर सोम सभी अंगों को, परमानन्द से भर देता ।
चिति शक्ति से पोषक तत्त्व, सोम से ही वह लेता ॥

कस्तमिन्द्र त्वा वसवा मर्त्यो दधर्षति ।
श्रद्धा हि ते मघवन् पार्ये दिवि वाजी वाजं सिषासति ॥
मघोनः स्म वृत्रहत्येषु चोदय ये ददति प्रिया वसु ।
तव प्रणीती हर्यश्व सूरिभिर्विश्वा तरेम दुरिता ॥९॥
हे इन्द्र तेरा कौन करे, अपमान बसाने वाले ।
मोक्ष में भी तू रहता, श्रद्धा ज्ञान बरसाने वाले ॥
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति में, देता अन्न श्रद्धा ज्ञान ।
इसीलिए तू इन्द्र कहाता, तेरी ज्योति महान ॥
धनवाले जब दान करें, उनके विघ्न हटाता जा ।
विद्वान का प्रेम दान कर, हमारे पाप नशाता जा ॥

इति द्वितीयः खण्डः ।

एदु मधोर्मदिन्तरं सिञ्चाध्वर्यो अन्धसः ।
एवा हि वीर स्तवते सदावृधः ॥
इन्द्र स्थातर्हरीणां न किष्टे पूर्व्यस्तुतिम् ।
उदानंश शवसा न भन्दना ॥
तं वो वाजानां पतिमहूमहि श्रवस्यवः ।
अप्रायुभिर्यज्ञेभिर्वावृधेन्यम् ॥१०॥
भक्तिरस से सींच सदा, आनन्द से भरपूर कर ।
आगे आगे बढ़ता जाऊँ, कायरता को दूर कर ॥
बल से तेरी स्तुति न गायें, अपने तेज से तुझे न पायें ।
इन्द्रियों के स्वामी इन्द्र प्रभो ! तेरी शरण में कैसे आयें ॥
अन्तर्ज्ञान की प्रेरणा पा, विनय भाव से तुझे रिझाएं ।
आलस्य छोड़ें ज्ञान बढ़ायें, तुझ को तब हम पाएं ॥

तं गूर्धया स्वर्णरं देवासो देवमरतिं दधन्विरे ।
देवत्रा हव्यमूहिषे ॥
विभूतरातिं विप्र चित्रशोचिषमग्निमीडिष्व यन्तुरम ।
अस्य मेधस्य सोम्यस्य सोभरे प्रेमध्वराय पूर्व्यम् ॥११॥
इन्द्रियां हमारी जिस अग्नि से, सुख आशा करतीं ।
उसी अग्नि के श्रद्धा से, गीतों से मन भरतीं ॥
ज्ञानी मेधावी भक्त सदा तू, उस अग्नि का ध्यान कर ।
उस पवित्र सोम नेता का, यज्ञ हित आह्वान कर ॥

आ सोम स्वानो अद्रिभिस्तिरो वाराण्यव्यया ।
जनो न पुरि चम्वोर्विशद्धरिः सदो वनेषु दध्रिषे ॥
स मामृजे तिरो अण्वानि मेष्यो मीढ्वान्त्सप्तिर्न वाजयुः ।
अनुमाद्यः पवमानो मनीषिभिः सोमो विप्रेभिर्ऋक्वभिः ॥१२॥
अंग अंग से उत्पन्न होकर; परमानन्द तू आता ।
वीर विजयी सम ज्ञान पार कर प्रकाश को पाता ॥
तू इतना आकर्षक बन, भक्ति पात्र सजाता ।
हमारी पार्थिव ज्ञान चेतना में जल्दी घुस जाता ॥
हर्ष बढ़ाता बुद्धि देता, सोम चिति शक्ति पाता ।
बल के चाहक घोड़े सम, सुख बरसाता शुद्ध हो जाता ॥

वयमेनमिदा ह्योऽपीपेमेह वज्रिणम् ।
तस्मा उ अद्य सवने सुतं भरा नूनं भूषत श्रुते ॥
वृकश्चिदस्य वारण उरामथिरा वयुनेषु भूषति ।
सेमं न स्तोमं जुजुषाण आ गहीन्द्र प्र चित्रया धिया ॥१३॥
हमारी आत्मा का वज्र, ज्ञान को हम ने रिझाया ।
ज्ञानयज्ञ से आनन्दरस से, हम ने इसे सजाया ॥
दुःखदायो चोर प्रज्ञाशक्ति से, सुन्दर बन जाता ।
हे इन्द्र धारण शक्ति ले आ, तेरी स्तुति में गाता ॥

इन्द्राग्नी रोचना दिवः परि वाजेषु भूषथः । तद्वां चेति प्र वीर्यम् ॥
इन्द्राग्नी अपसस्पर्युप प्र यन्ति धीतयः । ऋतस्य पथ्या३ अनु ॥
इन्द्राग्नी तविषाणि वां सधस्थानि प्रयांसि च ।
युवोरप्तूर्यं हितम् ॥१४॥
हे प्रकाशक इन्द्र अग्ने, प्रकाशलोक में शोभा पाते ।
ज्ञान कर्म को करते करते, तुम अपनी शक्ति दर्शाते ॥
परम सत्य दर्शाने वाले, विचारशक्ति के देने वाले ।
अनुगामी हम बनें तुम्हारे, तुम आगे ले जाने वाले ॥
इन्द्र अग्नि दोनों की शक्ति, एक स्थान पर आती ।
उनकी शक्ति से बुद्धि हमारी, कर्म प्रेरणा पाती ॥

क ईं वेद सुते सचा पिबन्तं कद्वयो दधे ।
अयं यः पुरो विभिनत्त्योजसा मन्दानः शिप्र्यन्धसः ॥
दाना मृगो न वारणः पुरुत्रा चरथं दधे ।
न किष्ट्वा नि यमदा सुते गमो महांश्चरस्योजसा ॥
य उग्रः सन्ननिष्टृतः स्थिरो रणाय संस्कृतः ।
यदि स्तोतुर्मघवा शृणवद्धवं नेन्द्रो योषत्या गमत् ॥१५॥
यज्ञों में साथ साथ रस पोता, इन्द्र को जाने कौन ।
आयु उसकी कोई न जाने, ज्ञान से पर्दे फाड़े जौन ॥
मदमस्त हाथी वन का, वन में निर्द्वन्द्व विचरता है ।
ब्रह्मानन्द में पहुंचा साधक, नहीं किसी से डरता है ॥
बलशाली यह इन्द्र यदि, साधक की वाणी सुन पाए ।
जीवन के संघर्षों में, सदा सहायक बन जाए ॥

इति तृतीयः खण्डः ।

पवमाना असृक्षत सोमाः शुक्रास इन्दवः । अभि विश्वानि काव्या ॥
पवमाना दिवस्पर्यन्तरिक्षादसृक्षत । पृथिव्या अधि सानवि ॥
पवमानास आशवः शुभ्रा असृग्रमिन्दवः ।
घ्नन्तो विश्वा अप द्विषः ॥१६॥
परमानन्द ही शक्ति देता, सारी रचना उससे होती ।
साधक को कवि बना, उसके सारे द्वन्द्व है खोती ॥
यही साधना प्राणकोष में, अन्न कोष को ले जाती ।
प्रकाशमयी अवस्था में भी, भक्तों को सुख पहुंचाती ॥
सबका स्वामी सोम है प्रकटा, मलिन भाव नर नाश करे ।
भक्त हृदय को शुद्ध बना, आनन्दसुधा प्रकाश करे ॥

तोशा वृत्रहणा हुवे सजित्वानापराजिता । इन्द्राग्नी वाजसातमा ॥
प्र वामर्चन्त्युक्थिनो नीथाविदो जरितारः ।
इन्द्राग्नी इष आ वृणे ॥
इन्द्राग्नी नवतिं पुरो दासपत्नीरधूनुतम् । साकमेकेन कर्मणा ॥१७॥
शत्रुभाव मन का नशाए, अज्ञान अंधेरा नशाता ।
विजयी बन शक्ति के दाता, इन्द्र अग्नि को मैं बुलाता ॥
ब्रह्ममार्ग के जो पथिक हैं, साम गान को गाते ।
तुम से मिले हमें प्रेरणा, तुझ को पूजें और मनाते ॥
हे इन्द्र अग्नि तुम दोनों ने, समाधि सिद्धि को उपजाया ।
हिंसाभावों के नव्वे जीवों को, तुम ने मार भगाया ॥

उप त्वा रण्वसन्दृशं प्रयस्वन्तः सहस्कृत । अग्ने ससृज्महे गिरः ॥
उप च्छायामिव घृणेरगन्म शर्म ते वयम् । अग्ने हिरण्यसन्दृशः ॥
य उग्र इव शर्यहा तिग्मशृङ्गो न वंसगः ।
अग्ने पुरो रुरोजिथ ॥१८॥
तू सुन्दर है तू रमणीय, तेरा दर्शन कैसे पावें ।
तेरे घर तक जाने को, तेरे प्रेम के स्वर गावें ॥
रवि सम तेज तुम्हारा अग्ने, तेरी शरण में सुख पाएं ।
तेजधारी के घर जाकर, जैसे दुःख मिट जाएं ॥
हे अग्ने तू बड़ा कठोर है, बली बैल सींगों वाला ।
अपने तेज से विघ्नों को, नष्ट भ्रष्ट समूल कर डाला ॥

ऋतावानं वैश्वानरमृतस्य ज्योतिषस्पतिम् । अजस्रं घर्ममीमहे ॥
य इदं प्रतिपप्रथे यज्ञस्य स्वरुत्तिरन् । ऋतूनुत्सृजते वशी ॥
अग्निः प्रियेषु धामसु कामो भूतस्य भव्यस्य ।
सम्राडेको विराजति ॥१६॥

हम सर्वव्यापक अग्नि चाहें, जो सत्यरूप ज्योति दर्शाता ।
उसका प्रकाश कभी न घटता, सत्य प्रभु तक ले जाता ॥
यज्ञ साधना से जो मिलता, वही हमारा ताना तनता ।
ऋतुओं की रचना करता, नियम नियामक बनता ॥
भूत भविष्य संकल्प जगत्, मूल वही कहलाता ।
सब से ऊँचे लोकों का स्वामी, सबका है अधिष्ठाता ॥

इति चतुर्थः खण्डः । इति द्वितीयोऽर्धः ।

अथ तृतीयोऽर्धः

अग्निः प्रत्नेन जन्मना शुम्भानस्तन्वां३ स्वाम् ।
कविर्विप्रेण वावृधे ॥
ऊर्जो नपातमा हुवेऽग्निं पावकशोचिषम् । अस्मिन् यज्ञे स्वध्वरे ॥
स नो मित्रमहस्त्वमग्ने शुक्रेण शोचिषा ।
देवैरा सत्सि बर्हिषि ॥१॥

जिस साधक की श्रेष्ठ बुद्धि, अपना रूप सजाता है ।
संकल्प-आग कर में लेकर, क्रांतिदर्शक बन जाता है ॥
बल के स्थापक अग्नि को, शुभ यज्ञों में बुलाता हूँ ।
कांति वाली शक्ति पा, आगे बढ़ता जाता हूं ॥
हे अग्ने तू दिव्य गुणधारी, शुद्ध तेज का दान कर ।
मेरा मित्र बनकर प्रभो ! मन मन्दिर में स्थान कर ॥

उत्ते शुष्मासो अस्थू रक्षो भिन्दन्तो अद्रिवः ।
नुदस्व याः परिस्पृधः ॥
अया निजघ्निरोजसा रथसङ्गे धने हिते ।
स्तवा अबिभ्युषा हृदा ॥
अस्य व्रतानि नाधृषे पवमानस्य दूढ्या । रुज यस्त्वा पृतन्यति ॥

तं हिन्वन्ति मदच्युतं हरिं नदीषु वाजिनम् ।
इन्दुमिन्द्राय मत्सरम् ॥२॥
हे ब्रह्मानन्द तू सब से ऊपर, हिंसक भावों का नाश करे ।
सब के सिर पर रहने वाले, उच्च भाव प्रकाश करे ॥
हे सोम तू जीवन यज्ञ में आ, ऐश्वर्यों का दान करे ।
निर्भय होकर तुझ को ध्याऊँ, तू शुभ शक्तिवान करे ॥
जिसकी बुद्धि बिगड़ गई, वह सोम की आज्ञा न तोड़े ।
नाश करो उस द्वेष भाव का, जो नर स्वयं नहीं छोड़े ॥
साधक मांगे आनन्दरस, नस नस में जो बल भरता ।
हे इन्द्र तू परमानन्द दे, प्रज्ञाशक्ति से जो झरता ॥

आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि मयूररोमभिः ।
मा त्वा केचिन्नि येमुरिन्न पाशिनोऽति धन्वेव ताँ इहि ॥
वृत्रखादो बलं रुजः पुरां दर्मो अपामजः ।
स्थाता रथस्य हर्योरभिस्वर इन्द्रो दृढा चिदारुजः ॥
गम्भीराँ उदधीँरिव क्रतुं पुष्यसि गा इव ।
प्र सुगोपा यवसं धेनवो यथा ह्रदं कुल्या इवाशत ॥३॥
ज्ञान तारों से सजी हुई, वृत्तियां धारण करे ।
बन्धन में मत बंध जाना, धनुर्धारी बन विजय करे ॥
अज्ञान का विघ्न हटाने वाला, पंचकोष के पर्दे पार करे ।
शरीर रथ चलाने वाला, कर्मशक्ति संचार करे ॥
गहरे सागर भर जाते हैं, पा नदियों को धाराओं को ।
संकल्प हमारे सुदृढ़ बनाना, ग्वाला जैसे गाओं का ॥
दौड़ दौड़ कर सारी गाएँ, चारा खावें जातीं ।
नहरें दौड़ें नदियों में, तुझ में बुद्धियाँ समातीं ॥

यथा गौरो अपा कृतं तृष्यन्नेत्यवेरिणम् ।
आपित्वे नः प्रपित्वे तूयमा गहि कण्वेषु सु सचा पिब ॥
मन्दन्तु त्वा मघवन्निन्द्रेन्दवो राधोदेयाय सुन्वते ।
आमुष्या सोममपिबश्चमू सुतं ज्येष्ठं तद्दधिषे सहः ॥४॥
प्यासा व्याकुल हिरण, दौड़कर सर को जाता ।
दिव्य मन चल ज्ञान नदी, से जोड़े इन्द्रियों का नाता ॥

ब्रह्मानन्द के साधक को, इन्द्र विभूतिवान कर।
तुझे रिझाएँ ब्रह्मानन्द कैसे, बलदायक सोम पान कर ॥
ज्ञान बढ़ाता कर्म कराता, वही शक्ति को पाता।
महान शक्ति धारण कर, साधक सिद्ध हो जाता ॥

त्वमङ्ग प्र शंसिषो देवः शविष्ठ मर्त्यम्।
न त्वदन्यो मघवन्नस्ति मर्डितेन्द्र ब्रवीमि ते वचः ॥
मा ते राधांसि मा त ऊतयो वसोऽस्मान् कदाचना दभन्।
विश्वा च न उपमिमीहि मानुष वसूनि चर्षणिभ्य आ ॥५॥
हे बलशाली मरने वाले देह को, तू जीवन देता।
तेरे गीत सदा मैं गाऊँ, तू है सुख का नेता ॥
कर्मशील साधक रह पायें, ऐसे घर निर्माण कर।
सब को बसाने का विघ्न हर, उन्नतिपथ प्रदान कर ॥

इति प्रथमः खण्डः।

प्रति ष्या सूनरी जनी व्युच्छन्ती परि स्वसुः।
दिवो अदर्शि दुहिता ॥
अश्वेव चित्रारुषी माता गवामृतावरी। सखा भूदश्विनोरुषाः ॥
उत सखास्यश्विनोरुत माता गवामसि। उतोषो वस्व ईशिषे ॥६॥
कर्मों का जाल बुनने वाली, रात्रि की बहिन उषा आई।
सूर्य पिता से जन्म लिया, अंधकार हटाने आई ॥
प्रज्ञारूप उषा साधक के, अज्ञान बीज जलाती है।
विचित्र ज्ञान संग तेज लिये, अश्वि संग सत्य पाती है ॥
अश्वियों की तू सखी है, उषा ज्ञान-किरण की माता।
हे उषे तू मानी है, प्राणशक्ति को अधिष्ठाता ॥

एषो उषा अपूर्व्या व्युच्छति प्रिया दिवः।
स्तुषे वामश्विना बृहत् ॥
या दस्रा सिन्धुमातरा मनोतरा रयीणाम्। धिया देवा वसुविदा ॥
वच्यन्ते वां ककुहासो जूर्णायामधि विष्टपि।
यद्वां रथो विभिष्पतात् ॥७॥
देखो देखो प्रकाशलोक से, अद्भुत प्रज्ञा आती।
ज्ञान कर्म की करूँ प्रशंसा, प्रकाश सदा बरसाती ॥

अश्वी क्रोध पाप हटायें, ज्ञान नालियां ठीक चलायें।
सारे बलों को करें प्रेरित, ध्यानवृत्ति से ऐश्वर्य पायें॥
दोनों अश्वियों के रथ पर, प्राणशक्ति से देह चलता।
उन्नति-पथ पर जाता है, मोक्ष स्थान से न टलता॥
जब यह ऊँचे पद पर उस, परमानन्द को पाता।
तू ही बड़ा महान है, तब यह जान है जाता॥

उषस्तच्चित्रमा भरास्मभ्यं वाजिनीवति।
येन तोकं च तनयं च धामहे॥
उषो अद्येह गोमत्यश्वावति विभावरि।
रेवदस्मे व्युच्छ सूनृतावति॥
युङ्क्ष्वा हि वाजिनीवत्यश्वाँ अद्यारुणाँ उषः।
अथा नो विश्वा सौभगान्या वह॥८॥

ज्ञानमयी उषे ! वाणी से, योग्य ज्ञान का लाभ करा।
सन्तानों को पाल सकें, ऐसी विद्या ज्ञान दिला॥
कर्म कराती ज्ञान दिलाती, प्यारा सत्य दिखाती है।
प्रभात हमारा सुखवाला हो, ऐसा ऐश्वर्य दिलाती है॥
चमकीले घोड़ों के रथ में जोड़, ज्ञान धन लेती आ।
सारे सुन्दर सौभाग्यों को, हमें सदा तू देती जा॥

अश्विना वर्तिरस्मदा गोमद् दस्रा हिरण्यवत्।
अर्वाग्रथं समनसा नि यच्छतम्॥
एह देवा मयोभुवा दस्रा हिरण्यवर्त्तनी।
उषर्बुधो वहन्तु सोमपीतये॥
यावित्था श्लोकमा दिवो ज्योतिर्जनाय चक्रथुः।
आ न ऊर्जं वहतमश्विना युवम्॥९॥

हे अश्वियो ज्ञान संकल्प शक्ति से, पापों का नाश करो।
ज्ञान कर्म से चलने वाले, देहरथ पर शासन प्रकाश करो॥
प्रातः काल जो साधक जगते, ज्ञान संकल्प में भरें आनन्द।
दुष्ट भावों का नाश करा, रहता उनका तेज अमन्द॥
प्रकाशलोक से लाकर देते, साधक जन को उत्तम ज्योति।
हम को बल धारण करा, बढ़े हमारी मन की शक्ति॥

इति द्वितीयः खण्डः।

अग्नि तं मन्ये यो वसुरस्तं यं यन्ति धेनवः।
अस्तमर्वन्त आशवोऽस्तं नित्यासो वाजिन इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥
अग्निर्हि वाजिनं विशे ददाति विश्वचर्षणिः।
अग्नी राये स्वाभुवं स प्रीतो याति वार्यमिषं स्तोतृभ्य आ भर ॥
सो अग्निर्यो वसुर्गृणे सं यमायन्ति धेनवः।
समर्वन्तो रघुद्रुवः सं सुजातासः सूरय इषं स्तोतृभ्य आ भर ॥१०॥
सब को बसाने वाला अग्नि, ज्ञानियों का सहारा है।
गउओं का घर बाड़ा, घोड़े का अस्तबल वह हमारा है ॥
हे अग्ने दे प्रेरणा, भक्तों को सम्पत्ति दान कर।
तेरा सहारा कभी न छोड़ें, ऐसी बुद्धि ज्ञान भर ॥
अग्नि जो जग चमकाए, व्यापक बन मुझ को भरता।
रचना गुण साधक में भर, ज्ञान प्रेरणा पूरी करता ॥
सब को बसा रहा जो, अग्नि वही कहाता।
गउएँ बाड़े में रहती हैं, घोड़ा अस्तबल में जाता ॥
संस्कार वाले ज्ञानी, उसकी शरण हैं जाते।
पा प्रेरणा ज्ञान की, धन सम्पत्ति को पाते ॥

महे नो अद्य बोधयोषो राये दिवित्मती।
यथा चिन्नो अबोधयः सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते ॥
या सुनीथे शौचद्रथे व्यौच्छो दुहितर्दिवः।
सा व्युच्छ सहीयसि सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते ॥
सा नो अद्याभरद्वसुर्व्युच्छा दुहितर्दिवः।
यो व्यौच्छः सहीयसि सत्यश्रवसि वाय्ये सुजाते अश्वसूनृते ॥११॥
हे उषे अज्ञान हटा दे, आत्मिक धन से बढ़ा।
मधुर सत्य से प्रज्ञा रानी, अन्तःकरण में सत्य जगा ॥
प्रकाशलोक से रस लाकर, ज्ञान की ज्योति जगाती है।
न्याय शुद्धता से जगमग करती, सर्वत्र ज्ञान फैलाती है ॥
शुभ संस्कार से जन्मी है, मधुर सत्य के बल वाली।
अन्तःकरण में आलोक भरे, उषा दिव्य प्रभा वाली ॥
प्रकाशलोक से ज्ञान को लाकर, सम्पत्ति से भरपूर कर।
ज्ञान फैलाकर संस्कारों से, अज्ञान अंधेरा दूर कर ॥

प्रति प्रियतमं रथं वृषणं वसुवाहनम् ।
स्तोता वामश्विनावृषि स्तोमेभिर्भूषति प्रति माध्वी मम श्रुतं हवम् ॥
अत्यायातमश्विना तिरो विश्वा अहं सना ।
दस्रा हिरण्यवर्तनी सुषुम्णा सिन्धुवाहसा माध्वी मम श्रुतं हवम् ॥
आ नो रत्नानि बिभ्रतावश्विना गच्छतं युवम् ।
रुद्रा हिरण्यवर्तनी जुषाणा वाजिनीवसू माध्वी मम श्रुतं हवम् ॥१२॥

ज्ञान कर्म की दिव्य शक्तियो, गाते गीत तुम्हारे हैं ।
सम्पत्ति सुख देने वाली, मधु मांगे भक्त विचारे हैं ॥
ज्ञान कर्म की शक्तियां, बाधाएँ दूर हटाती हैं ।
सुख से ज्ञान बढ़ाने वाली, मधुर भावना आती हैं ॥
तुम दोनों को हम पायें, सुन्दर सम्पत्ति पाने को ।
ज्ञान और संकल्प मिलें, सब समृद्धि बढ़ाने को ॥
दुर्भावों से डरा अज्ञानी, मैं तेरा तेज निहार रहा ।
ज्ञानशक्ति में चेतनता को, मधु के लिए पुकार रहा ॥

इति तृतीयः खण्डः ।

अबोध्यग्निः समिधा जनानां प्रति धेनुमिवायतीमुषासम् ।
यह्वा इव प्र वयामुज्जिहानाः प्र भानवः सस्रते नाकमच्छ ॥
अबोधि होता यजथाय देवानूर्ध्वो अग्निः सुमनाः प्रातरस्थात् ।
समिद्धस्य रुशदर्दशि पाजो महान् देवस्तमसो निरमोचि ॥
यदीं गणस्य रशनामजीगः शुचिरङ्क्ते शुचिभिर्गोभिरग्निः ।
आद्दक्षिणा युज्यते वाजयन्त्युत्तानामूर्ध्वो अधयज्जुहूभिः ॥१३॥

आनन्द दूध से भर देती, उषा यज्ञ की ज्वाला पा ।
संकल्प की अग्नि बढ़ती है, व्यापक सुखनीति अपना ॥
ज्ञानी जन सुख पाते, ज्ञान की किरणें मोद बढ़ातीं ।
उत्तम ज्योति धीरे-धीरे, सुख के घर पहुंचाती ॥
दिव्य गुणों से सजा, सुभाव का अग्नि जलता है ।
अज्ञान अंधेरा नाश करे, विज्ञान जगत् का पलता है ॥
ज्ञानशक्तियाँ इस में रहतीं, तब अग्नि तत्त्व दर्शाता है ।
विवेक शक्ति है उसको मिलती, ज्वालाओं को भोग कराता है ॥

इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरागाच्चित्रः प्रकेतो अजनिष्ट विभ्वा ।
यथा प्रसूता सवितुः सवायँवा रात्र्युषसे योनिमारैक् ॥
रुशद्वत्सा रुशती श्वेत्यागादारैगु कृष्णा सदनान्यस्याः ।
समानबन्धू अमृते अनूची द्यावा वर्णं चरत आमिनाने ॥
समानो अध्वा स्वस्रोरनन्तस्तमन्यान्या चरतो देवशिष्टे ।
न मेथते न तस्थतुः सुमेके नक्तोषासा समनसा विरूपे ॥१४॥
निशा भागती स्थान छोड़, उषा रवि के पहले आती ।
अज्ञान भगा प्रज्ञान आता, प्रज्ञा ब्रह्म के दर्श कराती ॥
सर्वश्रेष्ठ यह ज्योति आकर, प्रज्ञान को उत्पन्न करती ।
सब के प्रेरक ब्रह्म को लाने, ऋतम्भरा ज्ञान भरती ॥
सुन्दरी शुक्ला उषा रानी, सज धज कर आई ।
अपनी कृष्णा बहिन से, खाली जगह कराई ॥
दोनों बहिनें अमर हैं, नाना रंग बनाती हैं ।
द्युलोक में वास है इनका, अकथनीय कहाती हैं ॥
निशा उषा का मार्ग एक है, अमन्द प्रकाश का स्वामी ।
रवि है इनका मार्ग बनाता, जो है इस पथ का गामी ॥
दोनों बारी बारी चलतीं, कहीं नहीं रुक जाती हैं ।
शुभ लक्षण दर्शातीं मिलकर, कभी नहीं टकराती हैं ॥

आ भात्यग्निरुषसामनीकमुद्विप्राणां देवया वाचो अस्थुः ।
अर्वाञ्चा नूनं रथ्येह यातं पीपिवांसमश्विना घर्ममच्छ ॥
न संस्कृतं प्र मिमीतो गमिष्ठान्ति नूनमश्विनोपस्तुतेह ।
दिवाभिपित्वेऽवसागमिष्ठा प्रत्यवर्ति दाशुषे शम्भविष्ठा ॥
उतायातं संगवे प्रातरह्नो मध्यन्दिन उदिता सूर्य्यस्य ।
दिवा नक्तमवसा शन्तमेन नेदानीं पीतिरश्विना ततान ॥१५॥
संकल्पशक्ति दिव्यालोक से, कार्य सफल बनाती ।
विचारशक्तियां उन्नत करके, दिव्य वाणी प्रकटातीं ॥
ज्ञान कर्म के घोड़े आओ, मेरा प्रशंसित रथ ले जाओ ।
तेज को पाने जाता हूं, आगे आगे मुझे बढ़ाओ ॥
अध्यात्म-यज्ञ से आई, ज्ञान संकल्प शक्ति प्यारी ।
ब्रह्मानन्द रस नष्ट न करती, संस्कृत सुन्दर मनोहारी ॥

ज्ञान का दिन जब निकले, तुझे तभी हम लख पाते ।
श्रद्धालु भक्त कल्याणदाता, मार्ग दर्शन कर जाते ।।
प्रातः सायं तुम दोनों आओ, कल्याण की वर्षा भरना ।
दिन रात ही शुभ बल देना, नाश कभी मत करना ।।

इति चतुर्थः खण्डः ।

एता उ त्या उषसः केतुमक्रत पूर्वे अर्धे रजसो भानुमञ्जते ।
निष्कृण्वाना आयुधानीव धृष्णवः प्रति गावोऽरुषीर्यन्ति मातरः ।।
उदपप्तन्नरुणा भानवो वृथा स्वायुजो अरुषीर्गा अयुक्षत ।
अक्रन्नुषासो वयुनानि पूर्वथा रुशन्तं भानुमरुषीरशिश्रयुः ।।
अर्चन्ति नारीरपसो न विष्टिभिः समानेन योजनेना परावतः ।
इषं वहन्तीः सुकृते सुदानवे विश्वेदह यजमानाय सुन्वते ।।१६।।
उषा रश्मियां प्रज्ञान रचा, नीलम में रवि प्रकटातीं ।
ज्ञान किरणें ज्ञान रवि, लाकर अज्ञान नशातीं ।।
विजय चाहता योद्धा, शस्त्र तीक्ष्ण बनाता ।
इन्द्रियाँ शुद्ध बनाने, भक्त ज्ञान को पाता ।।
लाल लाल उषा की किरणें, आकर जग में छायीं ।
ज्ञान इन्द्रियाँ ज्ञान बढ़ाने, उन में आके समायीं ।।
चमकोली प्रज्ञाएँ प्रेरक रवि में हैं चमका करतीं ।
पूर्व ज्ञान को जगा कर, वर्तमान में है भरती ।।
धीरे-धीरे बहने वाले, पानी के सम चलतीं जाती ।
समाधि-योग में लगे, भक्त को बल ज्ञान दिलाती ।।
दूर देश में रहने वाली, सब चीजों का ज्ञान कराती ।
कुशल साधना करने वाले, को सीधा मार्ग बतातीं ।।

अबोध्यग्निर्ज्म उदेति सूर्यो व्युषाश्चन्द्रा मह्यावो अर्चिषा ।
आयुक्षातामश्विना यातवे रथं प्रासावीद्देवः सविता जगत् पृथक् ।।
यद्युञ्जाथे वृषणमश्विना रथं घृतेन नो मधुना क्षत्रमुक्षतम् ।
अस्माकं ब्रह्म पृतनासु जिन्वतं वयं धना शूरसाता भजेमहि ।।
अर्वाङ् त्रिचक्रो मधुवाहनो रथो जीराश्वो अश्विनोर्यातु सुष्टुतः ।
त्रिबन्धुरो मघवा विश्वसौभगः शं न आ वक्षद् द्विपदे चतुष्पदे ।।१७।।

धरा पीठ पर जैसे अग्नि, सूर्य बन उग आता।
आनन्ददायिनी उषा प्रभा से, तम राक्षस मर जाता॥
आत्मिक यज्ञ में ज्ञान अग्नि, रूप रूप में जलती।
ज्ञान संकल्प पूज्य शक्तियां, साधन बनकर चलती॥
जुड़ जाओ तुम दोनों, रथ में मुझ को ले जाओ।
दिव्यशक्ति मुझ को देकर, सब वस्तु का ज्ञान कराओ॥
इस सुखकारी वाहन में, यात्री अब यात्रा करते।
अपने जगे ज्ञान मधु से, इसमें आनन्द भरते॥
संघर्षों में वे बल हैं देते, उससे हम सम्पत्ति पाते।
विजय लाभ करते जाते, आगे आगे बढ़ते जाते॥
ज्ञान कर्म से सधा हुआ, रथ तीन गति से चलता।
जागृत स्वप्न सुषुप्ति में भी, अनुकूल दिशा में निकलता॥
तीन गुणी शोभा पाकर, सब का यह कल्याण करे।
दोपाए चौपाए सब को ही, पावन शक्तिवान करे॥

प्र ते धारा असश्चतो दिवो न यन्ति वृष्टयः।
अच्छा वाजं सहस्रिणम्॥
अभि प्रियाणि काव्या विश्वा चक्षाणो अर्षति।
हरिस्तुञ्जान आयुधा॥
स मर्मृजान आयुभिरिभो राजेव सुव्रतः। श्येनो न वंसु षीदति॥
स नो विश्वा दिवो वसूतो पृथिव्या अधि।
पुनान इन्दवा भर॥१८॥

हे परमानन्द तेरी स्वाधीन धाराएँ, प्रकाशलोक से आतीं।
वर्षा जैसे अन्न दिलाती, ज्ञान बल बरसाती॥
ज्ञानी तेरी प्यारी रचना, देख देख मस्त हो जाता।
अज्ञान के बन्धन काट, सुन्दर सोम मुक्ति को पाता॥
भक्ति भाव से शुद्ध होकर, वीर शासक निर्भय होता।
बाज बना लोक लोक में, घूम घूम तेज भय लाता॥
हे आनन्दक परमानन्द तू, प्रकाशलोक से आता जा।
धरा धाम के सारे पदार्थ, सम्पत्ति सिद्ध कराता जा॥

इति पञ्चमः खण्डः। इति तृतीयोऽर्धः।

इति अष्टमः प्रपाठकः।

अथ नवमः प्रपाठकः

अथ प्रथमोऽर्धः

आस्य धारा अक्षरन् वृष्णः सुतस्यौजसः । देवाँ अनु प्रभूषतः ॥
सप्ति मृजन्ति वेधसो गृणन्तः कारवो गिरा ।
ज्योतिर्जज्ञानमुक्थ्यम् ॥
सुषहा सोम तानि ते पुनानाय प्रभूवसो । वर्धा समुद्रमुक्थ्य ॥१॥
देखो देखो ब्रह्मानन्द की, धारा सुख वर्षाती ।
यह बल का रूप है सुन्दर, सब अंगों को दिव्य बनाती ॥
बुद्धिमान कर्मिष्ठ भक्त, वाणी से ज्योति बताता ।
श्रेष्ठ ज्ञानी शक्तिशाली, सोम को सिद्ध बनाता ॥
सिद्ध सोम बाधक वृत्ति, नाश करे आनन्ददाता ॥

एष ब्रह्मा य ऋत्विय इन्द्रो नाम श्रुतो गृणे ॥
त्वामिच्छवसस्पते यन्ति गिरो न संयतः ॥
वि स्रुतयो यथा पथा इन्द्र त्वद् यन्तु रातयः ॥२॥
गीत गाऊँ उस शक्ति के, जो इन्द्र कहलाती ।
नियम पालन से पैदा होती, प्रीति शक्ति लाती ॥
शक्ति पा जो संयमी बनता, पाता वही वेदवाणी ।
ज्ञान बढ़ाता आगे जाता, बनता आत्मज्ञानी ॥
मार्ग पा जलधारा जैसे, झर झर झरती रहती ।
दानशीलता तुझ इन्द्र से, सर सर करती बहती ॥

आ त्वा रथं यथोतये सुम्नाय वर्त्तयामसि ।
तुविकूर्मिमृतीषहमिन्द्रं शविष्ठ सत्पतिम् ॥
तुविशुष्म तुविक्रतो शचीवो विश्वया मते । आ पप्राथ महित्वना ॥
यस्य ते महिना महः परि ज्मायन्तमीयतुः ।
हस्ता वज्रं हिरण्ययम् ॥३॥
बलवान इन्द्र तू रथ है, जीवन में प्रगति कराता ।
ज्ञान कर्म का साधन है, सत्यरक्षा से विजय दिलाता ॥

हे अनन्त शक्तिशाली, तू प्रज्ञारूप कहाया।
अपनी कर्म महिमा से, सारे जग पर तू छाया॥
हे इन्द्र तेरी महिमा से ही, ज्ञान कर्म वज्र को लेते।
घूम घूम कर धरा धाम पे, तेरी शक्ति सब को देते॥

आ यः पुरं नार्मिणीमदीदेदत्यः कविर्नभन्यो३ नार्वा।
सूरो न रुरुक्वाञ्छतात्मा॥
अभि द्विजन्मा त्री रोचनानि विश्वा रजांसि शुशुचानो अस्थात्।
होता यजिष्ठो अपां सधस्थे॥
अयं स होता यो द्विजन्मा विश्वा दधे वार्याणि श्रवस्या।
मर्तो यो अस्मै सुतुको ददाश॥४॥
देहनगरी को चेतन रखता, वेगवान क्रांतिकारी।
नभ सम सब में समाया, रवि सम आभा धारी॥
ज्ञान कर्म से उत्पन्न हो, जागृत स्वप्न सुषुप्ति में भरे प्रकाश।
सारे लोकों में रम कर, दुष्ट प्रवृत्तियों का करे विनाश॥
श्रेष्ठ प्रेरणा धारण करता, ज्ञान कर्म से जागा होता।
मरणधर्मा आपा अर्पण करता, शुभ पाता अशुभ खोता॥

अग्ने तमद्याश्वं न स्तोमैः क्रतुं न भद्रं हृदिस्पृशम्।
ऋध्यामा त ओहैः॥
अधा ह्यग्ने क्रतोर्भद्रस्य दक्षस्य साधोः।
रथीर्ऋतस्य बृहतो बभूथ॥
एभिर्नो अर्कैर्भवा नो अर्वाङ् स्वा३र्ण ज्योतिः।
अग्ने विश्वेभिः सुमना अनीकैः॥५॥
हे अग्ने तू हार्दिक संकल्प, तेरी गति है शीघ्र महान।
उत्तम गीत गा-गाकर, करते हम तेरा आह्वान॥
तू विवेक कल्याणदाता, साधक का संकल्प धरता।
सत्य ज्ञान धारण कर, उसकी चाल तेज है करता॥
परम सुखदाता हे अग्ने, दिव्य गुणों को मन में ला।
हमारे स्तुति गीतों को सुन, उत्तम चित्त हो आगे आ॥

इति प्रथमः खण्डः।

अग्ने विवस्वदुषसश्चित्रं राधो अमर्त्य ।
आ दाशुषे जातवेदो वहा त्वमद्या देवाँ उषर्बुधः ॥
जुष्टो हि दूतो असि हव्यवाहनोऽग्ने रथीरध्वराणाम् ।
सजूरश्विभ्यामुषसा सुवीर्यमस्मे धेहि श्रवो बृहत् ॥६॥
हे अमर ज्ञानी, ज्ञान प्रेमी को जब होता ज्ञान ।
करे समर्पण भक्त है प्यारा, दिव्य गुणों का लेता दाम ॥
हे अग्ने तू समर्पण पाकर, आत्मिक यज्ञ का दान है देता ।
ज्ञान हमारा जब आता, तू अन्तर्ज्ञान है देता ॥
आत्मिक यज्ञ कराने वाला, तू है हमारा नेता ॥

विधुं दद्राणं समने बहूनां युवानं सन्तं पलितो जगार ।
देवस्य पश्य काव्यं महित्वाद्या ममार स ह्यः समान ॥
शाक्मना शाको अरुणः सुपर्ण आ यो महः शूरः सनादनीडः ।
यच्चिकेत सत्यमित्तन्न मोघं वसु स्पार्हमुत जेतोत दाता ॥
एभिर्ददे वृष्ण्या पौंस्यानि येभिरौक्षद् वृत्रहत्याय वज्री ।
ये कर्मणः क्रियमाणस्य मह्न ऋतेकर्ममुदजायन्त देवाः ॥७॥
संघर्षों में मारने वाले, युवकों को यह निगल गया ।
देखो लीला इसी देव की, विघ्नराक्षस मार दिया ॥
कल तक जो जीवित था, आज वह मरा पड़ा है ।
कण्ठ विजय की माला पहने, इन्द्र पुरुष ही खड़ा है ॥
अपनी शक्ति से जो चमके, सब का प्रेरक पालक है ।
अपने ऊपर निर्भर रहकर, व्यर्थ ज्ञान का घातक है ॥
मनमोहक सम्पत्ति जीत जीत, सब को उसका दान करे ।
जो जाने वह ठीक ही जाने, विजयानन्द का पान करे ॥
दिव्य गुणों से बल देकर, इन्द्र है सुख वर्षाता ।
साधन पाकर वज्री बन, सारे विघ्नों को नशाता ॥
भूतकाल के कामों में तो, ये ही गुण हैं सदा रहते ।
वर्तमान की गतियों में भी, यही प्रकाश में बहते ॥

अस्ति सोमो अयं सुतः पिबन्त्यस्य मरुतः ।
उत स्वराजो अश्विना ॥
पिबन्ति मित्रो अर्यमा तना पूतस्य वरुणः । त्रिषधस्थस्य जावतः ॥

उतो न्वस्य ओषधा इन्द्रः सुतस्य गोमतः ।
प्रातर्होतेव मत्सति ॥८॥
विचारशक्तियों को, प्रकाशज्ञान पीता है।
शुभ संकल्प हो दिव्य, आनन्द रस से जीता है॥
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति में, रहता जो दिव्य आनन्द।
मित्र अर्यमा और वरुण, पान सदा करे अमन्द॥
प्रातः काल जो हवन करे, होता आनन्द को पाता।
ज्ञान से उत्पन्न रस को पा, इन्द्र बना मग्न हो जाता॥

बण्महाँ असि सूर्य बडादित्य महाँ असि।
महस्ते सतो महिमा पनिष्टम मह्ना देव महाँ असि॥
बट् सूर्य श्रवसा महाँ असि सत्रा देव महाँ असि।
मह्ना देवानामसुर्यः पुरोहितो विभु ज्योतिरदाभ्यम् ॥९॥
हे प्रेरक सचमुच आप का, महिमा रूप महान है।
तू स्तुति के योग्य है, तू ही सदा बलवान है॥
तू ही पुरोहित है हमारा, हमारे हित का ध्यान करता।
अदम्य ज्योति से चमकता, जन को दिव्य गुणों से भरता॥

इति द्वितीयः खण्डः।

उप नो हरिभिः सुतं याहि मदानां पते। उप नो हरिभिः सुतम्॥
द्विता यो वृत्रहन्तमो विद इन्द्रः शतक्रतुः। उप नो हरिभिः सुतम्॥
त्वं हि वृत्रहन्नेषां पाता सोमानामसि।
उप नो हरिभिः सुतम् ॥१०॥
दिव्य आनन्दों को पाकर, इन्द्रियों का ज्ञान जगाओ।
तू आत्मा है इनका स्वामी, शुभ कर्म इन से कराओ॥
विघ्नविनाशक कर्म का करता, दो रूपों में इन्द्र है आता।
ज्ञान बढ़ाता कर्म कराता, आनन्द रस का पान कराता॥
तुम ही पान करो इस रस का, तू विघ्नों का नाशक है।
इन्द्रियों ने जो रस उपजाया, उसका तू प्रकाशक है॥

प्र वो महे महे वृधे भरध्वं प्रचेतसे प्र सुमतिं कृणुध्वम्।
विशः पूर्वीः प्र चर चर्षणिप्राः॥

उरुव्यचसे महिने सुवृक्तिमिन्द्राय ब्रह्म जनयन्त विप्राः ।
तस्य व्रतानि न मिनन्ति धीराः ॥
इन्द्रं वाणीरनुत्तमन्युमेव सत्रा राजानं दधिरे सहध्यै ।
हर्यश्वाय बर्हया समापीन् ॥११॥
हे जनो आगे बढ़ो, उन्नति-पथ में मन लगाओ ।
साधना सेवा करो, इन्द्र बनो पूरा ज्ञान पाओ ।।
विद्वान् साधकों ने इन्द्र के, महान गुणों को गाया ।
ध्यानी जन नियम में रहते, उन्होंने उनको पाया ।।
सर्वव्यापक एक इन्द्र, मननशक्ति से पाया जाता ।
सहनशक्ति पाने को ही, विकसित बुद्धि से गाया जाता ।।
हे इन्द्र तू हम को शक्ति दे, ज्ञान और कर्म बढ़ावें ।
तेरी सहचर चेतन शक्ति, तेरी कृपा से हम पावें ।।

यदिन्द्र यावतस्त्वमेतावदहमीशीय ।
स्तोतारमिद्दिधिषे रदावसो न पापत्वाय रंसिषम् ॥
शिक्षेयमिन्महयते दिवे दिवे राय आ कुहचिद् विदे ।
न हि त्वदन्यन्मघवन्न आप्यं वस्यो अस्ति पिता च न ॥१२॥
हे इन्द्र तू सम्पत्ति का स्वामी, केवल साधक को देना ।
भक्तों को ही सब कुछ देकर, पापी जनों का सुख लेना ।।
हे ईश्वर सम्पत्तिशाली, तू ही रहने को घर देता ।
तुझ को ही मैं पालक मानूं, तू ही भक्तों का है नेता ।।

श्रुधी हवं विपिपानस्याद्रेर्बोधा विप्रस्यार्चतो मनीषाम् ।
कृष्वा दुवांस्यन्तमा सचेमा ।।
न ते गिरो अपि मृष्ये तुरस्य न सुष्टुतिमसुर्यस्य विद्वान् ।
सदा ते नाम स्वयशो विवक्मि ॥
भूरि हि ते सवना मानुषेषु भूरि मनीषी हवते त्वामित् ।
मारे अस्मन्मघवं ज्योक्कः ॥१३॥
हे इन्द्र आनन्दाभिलाषी, सच्चे भक्त की सुनो पुकार ।
मेधावी मन की गति जानते, उनकी सेवा के बनो आधार ।।
हे इन्द्र मूर्ख की स्तुतियों को, मैं गणना में नहीं लाता ।
अशुद्ध स्तुति को नहीं मानूं, विवेकी बन तेरा यश गाता ।।

हे इन्द्र तेरे भक्त गायें तेरे, गीत कई प्रकार से।
तू कभी मत दूर करना, अपने प्यारे आधार से॥

इति तृतीयः खण्डः ।

प्रो ष्वस्मै पुरोरथमिन्द्राय शूषमर्चत ।
अभीके चिदु लोककृत् सङ्गे समत्सु वृत्रहा ।
अस्माकं बोधि चोदिता नभन्तामन्यकेषां ज्याका अधि धन्वसु ॥
त्वं सिन्धूँरवासृजोऽधराचो अहन्नहिम् ।
अशत्रुरिन्द्र जज्ञिषे विश्वं पुष्यसि वार्यम् ।
तं त्वा परि ष्वजामहे नभन्तामन्यकेषां ज्याका अधि धन्वसु ॥
वि षु विश्वा अरातयोऽर्यो नशन्त नो धियः ।
अस्तासि शत्रवे वधं यो न इन्द्र जिघांसति ॥
या ते रातिर्ददिर्वसु नभन्तामन्यकेषां ज्याका अधि धन्वसु ॥१४॥
उसी इन्द्र के गीत गाओ, जिस की शक्ति आगे ले जाती ।
अत्यन्त समीप से ज्योति देता, सारे विघ्नों को खा जाती ॥
हमें प्रेरणा दे आगे करता, काम क्रोध को यही हटाए ।
उनके तीखे तीरों को, चलने से पहले काट गिराए ॥
हे इन्द्र तू ने नाश किया, विघ्नों को परमानन्द जो रोक रहे ।
साधक के तुम मित्र बने; दिव्य गुण पालो ऐसा लोक कहे ॥
सप्रेम मिलें इसी मित्र से, जो काम क्रोध का नाश करे ।
दुष्ट भावना कट कट गिरती, प्रज्ञारानी जब प्रकाश करे ॥
कंजूसी सब की नष्ट हो, हे इन्द्र यह वरदान दो ।
उच्च भावना जो घटाए, ऐसे शत्रुओं के प्राण लो ॥
कामादि शत्रु हार जायें, ऐसी शक्ति हम पायें ।
कभी नहीं कंजूस बने, दान त्याग में लग जायें ॥

रेवाँ इद्रेवत स्तोता स्यात् त्वावतो मघोनः । प्रेदु हरिवः सुतस्य ॥
उक्थं च न शस्यमानं नागो रयिरा चिकेत ।
न गायत्रं गीयमानम् ॥
मा न इन्द्र पीयत्नवे मा शर्धते परा दाः ।
शिक्षा शचीवः शचीभिः ॥१५॥

ज्ञान शक्ति के स्वामी, इन्द्र हमें शिक्षावान कर।
हिंसक भावना न हमें दबायें, ऐसी शक्ति दान कर॥

एन्द्र याहि हरिभिरुप कण्वस्य सुष्टुतिम्।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो॥
आत्रा वि नेमिरेषामुरां न धूनुते वृकः।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो॥
आ त्वा ग्रावा वदन्निह सोमी घोषेण वक्षतु।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो॥१६॥
हे इन्द्र साधक की स्तुति, इन्द्रियों सहित सुन लीजिए।
प्रकाशलोक के तुम स्वामी, दिव्य अवस्था दीजिए॥
भेड़िया भेड़ को ज्यों वश करता, इन्द्र शक्ति आधीन है।
प्रकाशलोक का स्वामी सदा, प्रकाश में आसीन है॥
प्रेरक परमानन्द मिलता, इन्द्र को बड़े शोर से।
प्रकाश की किरणें चमकतीं, उसके चारों छोर से॥

पवस्व सोम मन्दयन्निन्द्राय मधुमत्तमः॥
ते सुतासो विपश्चितः शुक्रा वायुमसृक्षत॥
असृग्रं देववीतये वाजयन्तो रथा इव॥१७॥
मधुर सोम तू इन्द्र हवि, बह कर हर्ष बढ़ाता जा।
मेधा विकसित करने वाले, परमानन्द को पाता जा॥
प्राणशक्ति का दाता वही, परमानन्द कहाता है।
बुद्धि तीव्र करने वाला, तेज शक्ति का दाता है॥
रथ के चालक सम ज्ञान कर्म, दिव्य गुणों को देते हैं।
चारों ओर से आते रस, दुःख सारे हर लेते हैं॥

इति चतुर्थः खण्डः।

अग्नि होतारं मन्ये दास्वन्तं वसोः
सूनुं सहसो जातवेदसं विप्रं न जातवेदसम्।
य ऊर्ध्वया स्वध्वरो देवाचया कृपा
घृतस्य विभ्राष्टिमनु शुक्रशोचिष आजुह्वानस्य सर्पिषः॥

यजिष्ठं त्वा यजमाना हुवेम ज्येष्ठ-
मङ्गिरसां विप्र मन्मभिर्विप्रेभिः शुक्र मन्मभिः ।
परिज्मानमिव द्यां होतारं चर्षणीनाम् ।
शोचिष्केशं वृषणं यमिमा विशः प्रावन्तु जूतये विशः ॥
स हि पुरू चिदोजसा विरुक्मता
दीद्यानो भवति द्रुहन्तरः परशुर्न द्रुहन्तरः ।
वीळु चिद्यस्य समृतौ श्रुवद्वनेव यत्स्थिरम् ।
निष्षहमाणो यमते नायते धन्वासहा नायते ॥१८॥

मैं अग्नि को होता दाता, ज्ञानी मान ध्याता हूं ।
कर्म कराता सर्वज्ञ विद्वान्, उसी को पाता हूं ॥
दिव्य हो दिव्य पथ पाता, समर्पण से जल पाता ।
चमक चमक विचार धाराओं से, वह बढ़ता जाता ॥
हे ज्योतिर्मय बुद्धि विकासक, पूज्य सभी यजमानों का ।
स्तुति करें उच्च विचार से, तू ही बड़ा विद्वानों का ॥
द्यौलोक सम सब पर छाया, दया सभी पर करता है ।
तू चमकीला प्रेरक सब का, ज्योति वर्षा से भरता है ॥
प्रकाश करता वह सदा ही, चमकते निज ओज से ।
फरसा जैसे वृक्ष काटे, शत्रु काटे खोज से ॥
इसका दृढ़ संघर्षण पा, दुर्भावना नष्ट होती ।
अनुशासन रख आगे आता, सब की सत्ता खोती ॥

इति प्रथमोऽर्धः ।

अथ द्वितीयोऽर्धः

अग्ने तव श्रवो वयो महि भ्राजन्ते अर्चयो विभावसो ।
बृहद्भानो शवसा वाजमुक्थ्यां३ दधासि दाशुषे कवे ॥
पावकवर्चाः शुक्रवर्चा अनूनवर्चा उदियर्षि भानुना ।
पुत्रो मातरा विचरन्नुपावसि पृणक्षि रोदसी उभे ॥
ऊर्जो नपाज्जातवेदः सुशस्तिभिर्मन्दस्व धीतिभिर्हितः ।
त्वे इषः सं दधुर्भूरिवर्पसश्चित्रोतयो वामजाताः ॥

इरज्यन्नग्ने प्रथयस्व जन्तुभिरस्मे रायो अमर्त्य ।
स दर्शतस्य वपुषो वि राजसि पृणक्षि दर्शतं क्रतुम् ॥
इष्कर्तारमध्वरस्य प्रचेतसं क्षयन्तं राधसो महः ।
रातिं वामस्य सुभगां महीमिषं दधासि सानसिं रयिम् ॥
ऋतावानं महिषं विश्वदर्शतमग्निं सुम्नाय दधिरे पुरो जनाः ।
श्रुत्कर्णं सप्रथस्तमं त्वा गिरा दैव्यं मानुषा युगा ॥१॥
हे ज्ञानरूप प्रकाश से, सब में वास किया करते ।
दे ज्ञानशक्ति से सभी शक्तियां, सब को प्रेरित करते ॥
उत्तम ज्योति धारणकर्ता, विनयी को ज्ञान प्रदान करे ।
श्रेष्ठ ज्ञानी ज्ञान पाकर, तेरा प्रशंसित गुण गान करे ॥
हे प्रदीप्त हे तेजस्वी अग्ने, तू अपनी कांति दर्शाता ।
तेजस्वी मात पिता को पाले, तू दोनों लोक बचाता ॥
सब में व्यापक बलदाता, तू कृपा का दान करे ।
प्रशंसित विचारों से मुदित, भक्त को गतिवान करे ॥
उन्नति कारक शुभ प्रेरणा, भक्त तुझी से पाता ॥
हे अमर अग्ने अपने प्रभाव से ऐश्वर्य फैला ।
अपने सुन्दर रूप से चमके, अपना साकार रूप दिखा ॥
आत्मिक यज्ञ कराने वाले, ज्ञानी ईश्वर के गीत गायें ।
मगन होकर उसके प्रेम में, दिव्य शक्ति आनन्द पायें ॥
प्रेरणा दे दान को, तू सुन्दर वस्तुएँ देता है ।
बांट बांट खाने को बुद्धि, साधक तुझ से लेता है ॥
तू अपने आदर्श भक्त का, सत्य ज्ञान जो धारी है ।
सुख पाने को तुझे मनायें, जो श्रेष्ठ शक्ति कारी है ॥
मनस्वी जन हैं तुझे ध्याते, तू सब की विनय सुन लेता ।
दिव्य गुणों का तू है स्वामी, भक्तों को तू सुख देता ॥

इति पञ्चमः खण्डः ।

प्र सो अग्ने तवोतिभिः सुवीराभिस्तरति वाजकर्मभिः ।
यस्य त्वं सख्यमाविथ ॥
तव द्रप्सो नीलवान् वाश ऋत्विय इन्धानः सिष्णवा ददे ।
त्वं महीनामुषसामसि प्रियः क्षपो वस्तुषु राजसि ॥२॥

हे ज्ञान कर्ममय अग्ने, तुझ से जो मैत्री करता।
वीरतापूर्ण साधन पाकर, सारे संकट तरता ।।
हे आनन्दरस के सेचक, तेरे तरल रस को पाता।
तेरा मिले सहारा मुझे, नियम से तुझे जगाता ।।
प्रज्ञाएँ उषा रूप बन आतीं, उन का तू है प्यारा।
अज्ञान दुखों को हटा, बल का करता उजियारा ।।

तमोषधीर्दधिरे गर्भमृत्वियं तमापो अग्नि जनयन्त मातरः।
तमित् समानं वनिनश्च वीरुधोऽन्तर्वतीश्च सुवते च विश्वहा ।।३।।
ऋतु वाली औषधियां गर्भ में, उसको धारण करतीं।
जलवाली नदियां माता बन, उसमें प्रकाश हैं भरतीं ।।
वृक्ष वनस्पतियां उसमें, रह कर पलती रहतीं।
जब आती हैं वह जग में, उस की शक्ति कहतीं ।।

अग्निरिन्द्राय पवते दिवि शुक्रो वि राजति।
महीषीव वि जायते ।।४।।
इन्द्र संकल्प शक्ति को पाता, दिव्य गुणों का दाता है।
चमकीली दिव्य गुणों वाली, महती शक्ति कहलाता है ।।

यो जागार तमृचः कामयन्ते यो जागार तमु सामानि यन्ति।
यो जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः ।।५।।
निद्रारूप अज्ञान से जगता, स्तुतिगीत का ज्ञाता।
जो जागे वह साम को जाने, परमानन्द मित्र पाता ।।

अग्निर्जागार तमृचः कामयन्तेऽग्निर्जागार तमु सामानि यन्ति।
अग्निर्जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः ।।६।।
मानव में जागे संकल्प अग्नि, स्तुतिमन्त्र वह गाता।
परमानन्द का मित्र बने, सदा सुखी बन जाता ।।

नमः सखिभ्यः पूर्वसद्भ्यो नमः साकंनिषेभ्यः।
युञ्जे वाचं शतपदीम् ।।
युञ्जे वाचं शतपदीं गाये सहस्रवर्तनि। गायत्रं त्रैष्टुभं जगत् ।।
गायत्रं त्रैष्टुभं जगद् विश्वा रूपाणि सम्भृता।
देवा ओकांसि चक्रिरे ।।७।।
नमस्कार उन मित्रों को, जो पहले सभा में आए।
नमस्ते साथ बैठे साथी को, मेरी वाणी उसके गुण गाए ।।

प्रशंसित वाणी बोल बोल, राग अनेकों गाता हूं।
गायत्री त्रिष्टुभ जगती छन्द में, साम गान रस पाता हूं ॥
गायत्री त्रिष्टुभ जगती छन्द में, साम गान जो रहता है।
दिव्य भावना देता रहता, दिव्य गुणों को कहता है ॥

अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निरिन्द्रो ज्योतिर्ज्योतिरिन्द्रः।
सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः ॥
पुनरूर्जा नि वर्तस्व पुनरग्न इषायुषा। पुनर्नः पाह्यंहसः ॥
सह रय्या नि वर्तस्वाग्ने पिन्वस्व धारया।
विश्वप्स्न्या विश्वतस्परि ॥८॥

विख्यात अग्नि का रूप है ज्योति, इसको अग्नि कहते।
इन्द्र भी हैं ज्योति वाला, सूर्य को ज्योतिरूप कहते ॥
आओ अग्ने तुम बल से, प्रेरणा और प्राण दो।
पापकर्मों से बचा कर, पुण्य कर्मों का ज्ञान दो ॥
ईश्वर बनकर आओ अग्ने, अपना सुन्दर रूप धरो।
सर्वव्यापी आनन्दधारा की, वर्षा हम पर सदा करो ॥

इति षष्ठः खण्डः।

यदिन्द्राहं यथा त्वमीशीय वस्व एक इत्।
स्तोता मे गोसखा स्यात् ॥
शिक्षेयमस्मै दित्सेयं शचीपते मनीषिणे। यदहं गोपतिः स्याम् ॥
धेनुष्ट इन्द्र सूनृता यजमानाय सुन्वते। गामश्वं पिप्युषी दुहे ॥९॥

मन इन्द्रियों के साथ मिले, इन्द्र तेरे गीत गाऊँ।
ज्ञान एवं कर्मशक्ति, तेरे जैसी मैं भी पाऊँ ॥
इन्द्रियों का स्वामी बन जाऊँ, इन्द्रियजित् को ज्ञान दूं।
शक्तिमन् शिक्षित बन स्वयं, अन्यों को शिक्षा दान दूं ॥
हे इन्द्र तेरी गाय है सत्यवाणी, दे साधक को तृप्त बना।
कर्मेन्द्रियों को देकर शक्ति, उत्तम कर्म ही सदा करा ॥

आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे ॥
यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः ॥
तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ।
आपो जनयथा च नः ॥१०॥

कल्याणकारी हों सदा, ज्ञान जल की धारायें।
उससे बल और शक्ति पा, सुन्दर से सुन्दर बन जायें ॥

आनन्दरस से भरी हुई हो, हे ज्ञान की जलधारा।
माता बन पालो पोसो, तेरा पुत्र बनूं मैं प्यारा ॥
आनन्दरस पाने को हो, तेरी शरण में हम आयें।
तेरी प्रेरणा पाकर ही, सब समर्थ हो संपत्ति पायें ॥

वात आ वातु भेषजं शम्भु मयोभु नो हृदे।
प्र न आयूंषि तारिषत् ॥
उत वात पितासि न उत भ्रातोत नः सखा।
स नो जीवातवे कृधि ॥
यददो वात ते गृहेऽमृतं निहितं गुहा। तस्य नो धेहि जीवसे ॥११॥
सर्वव्यापक प्रभु हमारे, सारे ही संताप हरे।
ऐसे साधन हमें बताये, सुख से जीवन पार करे ॥
हे प्रभो तुम सर्वव्यापक, भाई पिता हमारे हो।
जीवन के हित शक्ति दो, पालक रक्षक प्यारे हो ॥
अमृत रस के धारक, हम को रसपान कराओ।
तेरे अंदर छिपा हुआ, रस मेरे अंतर में टपकाओ ॥

अभि वाजी विश्वरूपो जनित्रं हिरण्ययं बिभ्रदत्कं सुपर्णः।
सूर्यस्य भानुमृतुथा वसानः परि स्वयं मेधमृज्रो जजान ॥
अप्सु रेतः शिश्रिये विश्वरूपं तेजः पृथिव्यामधि यत् संबभूव।
अन्तरिक्षे स्वं महिमानं मिमानः कनिक्रन्ति वृष्णो अश्वस्य रेतः ॥
अयं सहस्रा परि युक्ता वसानः सूर्यस्य भानुं यज्ञो दाधार।
सहस्रदाः शतदा भूरिदावा धर्ता दिवो भुवनस्य विश्पतिः ॥१२॥
उत्तम प्रज्ञा से पूर्ण बल वाला अग्नि कई रूप धरे।
अपना मूल स्थान बिना भूले, रवि सम प्रकाश करे ॥
अपने प्रेरक रवि को नियम से करता वरण अग्नि।
धीरे धीरे बढ़ता जाता, परम पुरुष शरण अग्नि ॥
जलों में बीज बना रहता, विश्वरूप बन उदय होता।
आकाश में महिमा फैला, प्रभु शक्ति का बनता स्रोता ॥
यह अग्नि यज्ञरूप से, आलोक लोक धारण करता।
प्रजापति और सब सुखदाता, रवि के रूपों को धरता ॥

नाके सुपर्णमुप यत्पतन्तं हृदा वेनन्तो अभ्यचक्षत त्वा।
हिरण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुरण्युम् ॥
ऊर्ध्वो गन्धर्वो अधि नाके अस्थात् प्रत्यङ्चित्रा बिभ्रदस्यायुधानि।
वसानो अत्कं सुरभिं दृशे कं स्वाऽर्ण नाम जनत प्रियाणि ॥

द्रप्सः समुद्रमभि यज्जिगाति पश्यन् गृध्रस्य चक्षसा विधर्मन् ।
भानुः शुक्रेण शोचिषा चकानस्तृतीये चक्रे रजसि प्रियाणि ॥१३॥

हे इन्द्र हमारे प्रेमी, तू पक्षी बन उड़ा जा रहा ।
दिव्य गुणों को धरकर, सुखमार्ग अपना रहा ॥
तेरे पैर ज्योति पूर्ण हैं, तू नियम से भ्रमण करता ।
दिव्य शक्ति का संदेशा, विघ्न भक्तों के है हरता ॥
इन्द्रियों को वश में करके, यम नियम पालन जो करता ।
मोक्ष मार्ग पाने के लिए, अपनी शक्ति को है धरता ॥
व्यापक सुगन्ध भरा सुख, पाने को सुख रूप धरे ।
सब को सुखी बना कर ही, मन में वह आनन्द भरे ॥
शक्तिशाली इन्द्र बना जब, आनन्दरस पाने जाये ।
तीव्र गति से चलता चलता, अन्तरिक्ष में ज्योति पाये ॥
सफल मनोरथ वह होता; जिसकी आंखों में प्रभा समाये ।
ज्योति मार्ग पर चलता, उत्तम आनन्द को पा जाये ॥

इति सप्तमः खण्डः । इति द्वितीयोऽर्धः ।

अथ तृतीयोऽर्धः

आशुः शिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम् ।
सङ्क्रन्दनोऽनिमिष एकवीरः शतं सेना अजयत् साकमिन्द्रः ॥
सङ्क्रन्दनेनानिमिषेण जिष्णुना युत्कारेण दुश्च्यवनेन धृष्णुना ।
तदिन्द्रेण जयत तत्सहध्वं युधो नर इषुहस्तेन वृष्णा ॥
स इषुहस्तैः स निषङ्गिभिर्वशी संस्रष्टा स युध इन्द्रो गणेन ।
संसृष्टजित् सोमपा बाहुशर्ध्यूग्रधन्वा प्रतिहिताभिरस्ता ॥१॥

सब में व्यापक प्रज्ञाशक्ति, तेजी से सब में घुस जाती ।
सब के अन्दर छिपे भेद को, जान जान कर हर्षाती ॥
इन्द्र बनी वह महाशक्ति, ज्ञान को वर्षा करती है ।
आनन्द के मेघ सम, गति बनती आलस्य हरती है ॥
इसे अकेला मत समझो, सब को वश में कर लेती है ।
अपनी अनुपम शक्ति से, विजय इन्द्र को ही देती है ॥
उसी ज्ञान को पाकर, जग में विजयी बन जाओ ।
वीर बनो दृढ़ वीर बनो, संघर्षों में बढ़ते जाओ ॥
ज्ञान साधना भरा इन्द्र, सब विघ्नों का नाश करे ।
उत्तम विचारों के साथ, मित्रभाव प्रकाश करे ॥

इन्द्र जब परमानन्द पीता, धनुर्धारी सी शक्ति पाता।
दूर दूर तक बाण फेंककर, शत्रुदल को मार भगाता॥

बृहस्पते परि दीया रथेन रक्षोहामित्राँ अपबाधमानः।
प्रभञ्जन्त्सेनाः प्रमृणो युधा जयन्नस्माकमेध्यविता रथानाम्॥
बलविज्ञायः स्थविरः प्रवीरः सहस्वान् वाजी सहमान उग्रः।
अभिवीरो अभिसत्वा सहोजा जैत्रमिन्द्र रथमा तिष्ठ गोवित्॥
गोत्रभिदं गोविदं वज्रबाहुं जयन्तमज्म प्रमृणन्तमोजसा।
इमं सजाता अनु वीरयध्वमिन्द्रं सखायो अनु सं रभध्वम्॥२॥

हे बृहस्पते इन्द्र देह रथ पर, चढ़ के चलता जा।
घूम घूम हिंसक भावों को, तोड़ तोड़ के दलता आ।
दुष्टभावों पर विजय पा, रक्षा हमारी सदा करो।
जो हैं हम को कष्ट देते, उन दुष्ट को शीघ्र हरो॥
शक्तिशाली इन्द्र अपने, अनुभव बल को जानता।
सात्त्विक बल वाली इन्द्रियों से, मोक्षपथ सुगम है मानता॥
इन्द्रियो तुम साथ हो जन्मी, बिजयी इन्द्र का शासन मानो।
मोक्षपथ से जो हटाते, काम क्रोधादि को शत्रु जानो॥

अभि गोत्राणि सहसा गाहमानोऽदयो वीरः शतमन्युरिन्द्रः।
दुश्च्यवनः पृतनाषाडयुध्यो३ऽस्माकं सेना अवतु प्र युत्सु॥
इन्द्र आसां नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुर एतु सोमः।
देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्रम्॥
इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञ आदित्यानां मरुतां शर्ध उग्रम्।
महामनसां भुवनच्यवानां घोषो देवानां जयतामुदस्थात्॥३॥

इन्द्र निज शक्ति से, देहों के भीतर भ्रमण करे।
मननशक्ति से दुर्भाव दबाता, सात्त्विक पथ अनुगमन करे॥
देव सेनाएँ मार मार कर, दुष्ट वृत्तियों का शमन करें।
दक्षिण दिशा पर रहे बृहस्पति, यज्ञ बायीं ओर चले।
सोम सामने से आता, तभी विजय का लाभ फले॥
तोड़ फोड़ और नाश दिखातीं, सेनाएँ आगे आगे जातीं।
विजयश्री तब वरतीं जब, मरुत को अपना नेता पातीं॥
तेज बढ़े सुखकर इन्द्र का, वरुण तो सब का स्वामी।
आदित्यों मरुतों की सेना में, इन्द्र ही है आगे गामी॥
देवभाव हैं गर्जन करते, उदार चेता वीर जनों में।
असुर भावना को जीतें, संकल्प जन्मना सभी मनों में॥

उद्धर्षय मघवन्नायुधान्युत् सत्वनां मामकानां मनांसि ।
उद्वृत्रहन् वाजिनां वाजिनान्युद्रथानां जयतां यन्तु घोषाः ॥
अस्माकमिन्द्रः समृतेषु ध्वजेष्वस्माकं या इषवस्ता जयन्तु ।
अस्माकं वीरा उत्तरे भवन्त्वस्मां उ देवा अवता हवेषु ॥
असौ या सेना मरुतः परेषामभ्येति न ओजसा स्पर्धमाना ।
तां गूहत तमसापव्रतेन यथैतेषामन्यो अन्यं न जानात् ॥४॥
हे ज्ञानी वे साधन बढ़ाओ, दुर्भावनाएँ नष्ट हों ।
सानन्द सात्त्विक गुण बढ़ें, उन को न कोई कष्ट हो ॥
अज्ञान का पर्दा हटा कर, ज्ञान से वाणी बढ़ा ।
विजयी जन के शब्द गूंजें, वाणी ऊपर उनको उठा ॥
देव असुर जब जब लड़ें, इन्द्र हो विजयी हमारा ।
दिव्य भाव आगे बढ़ें, श्रेष्ठ हो योद्धा प्यारा ॥
विनय करें तेरी प्रभु जी, तेरी शरण में हम आयें ।
सारे अंग मिलकर, दिव्य भावों को जगायें ॥
दुष्ट भावों की सेना को, प्राणशक्ति से नाश करें ।
क्रियाशक्ति से मूछित करें, जो अपना बल प्रकाश करें ॥

अमीषां चित्तं प्रतिलोभयन्ती गृहाणाङ्गान्यप्वे परेहि ।
अभि प्रेहि निर्दह हृत्सु शोकैरन्धेनामित्रास्तमसा सचन्ताम् ॥
प्रेता जयता नर इन्द्रो वः शर्म यच्छतु ।
उग्रा वः सन्तु बाहवोऽनाधृष्या यथासथ ॥
अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसंशिते ।
गच्छामित्रान् प्र पद्यस्व मामीषां कं च नोच्छिषः ॥५॥
हे आत्मशक्ति तू हमारी, दुर्भावनाओं को पकड़ ।
उनको लुभा कर शक्ति से, पहुंच उनको ले जकड़ ॥
पहुंच उन के हृदयों में, शोक से उन को जला ।
वे शत्रु भाव ढक जायें, अन्धकार का पर्दा लगा ॥
आगे बढ़ो विजयी बनो, इन्द्र से सुख शांति पाओ ।
भुजबल तुम्हारा सर्वहारी, जिससे विजयश्री अपनाओ ॥
अज्ञान नाशिका आत्मशक्ति, सूक्ष्म बनी हो वेद ज्ञान से ।
मुक्त होकर नष्ट कर दो, जो बाधाएँ उपजीं ज्ञान से ॥

कङ्काः सुपर्णा अनु यन्त्वेनान् गृध्राणामन्नमसावस्तु सेना ।
मैषां मोच्यघहारश्च नेन्द्र वयांस्येनाननुसंयन्तु सर्वान् ॥

अमित्रसेनां मघवन्नस्माञ्छत्रुयतीमभि ।
उभौ तामिन्द्र वृत्रहन्नग्निश्च दहतं प्रति ॥
यत्र बाणाः संपतन्ति कुमारा विशिखा इव ।
तत्र नो ब्रह्मणस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु ॥६॥
हार कर जब शत्रु गिरते, उड़ाकू गीध उन पर गिरते ।
सारी सेना पर टूट टूटकर, भक्षण उस का करते ॥
सुख चाहें साधन जुटायें, अन्दर के शत्रुओं का नाश करें ।
किसी की शक्ति नहीं वे छोड़ें, मन में सुख-प्रकाश करें ॥
हे इन्द्र ! पाप का साथी मत बनो, सब की जड़ को काटें ।
उडते हुए उनके पीछे भागें, उन के प्राणों को चाटें ॥
शत्रु सेना है दुर्भावों की, हे इन्द्र इन का नाश करो ।
अग्नि के तुम साथी हो, दोनों मिल इन के प्राण हरो ॥
मुंडित बालक सम बाण, कुंठित जहाँ पड़ जाते ।
जीवन-रण में साधन हीन को, आकर प्रभु बचाते ॥
बड़ों बड़ों का है जो स्वामी, शांति सुख देने वाला ।
कल्याण करें वे सदा हमारा, सारे दुःख हर लेने वाला ॥

वि रक्षो वि मृधो जहि वि वृत्रस्य हनू रुज ।
वि मन्युमिन्द्र वृत्रहन्नमित्रस्याभिदासतः ॥
वि न इन्द्र मृधो जहि नीचा यच्छ पृतन्यतः ।
यो अस्माँ अभिदासत्यधरं गमया तमः ॥
इन्द्रस्य बाहू स्थविरौ युवानावनाधृष्यौ सुप्रतीकावसह्यौ ।
तौ युञ्जीत प्रथमौ योग आगते याभ्यां जितमसुराणां सहो महत् ॥७॥
हे इन्द्र हिंसा लोभ वृत्ति, नाश कर बाधा हटा ।
दुर्भावना से क्रोध उपजे, शीघ्र हम से तू भगा ॥
सेना सजा जो हम पर चढ़ते, दुष्ट भाव भगा प्यारे ।
हमें अधीन जो करना चाहे, लोभादि शत्रु हटा प्यारे ॥
ज्ञान एवं कर्मशक्ति तो, उस इन्द्र की महान है ।
शत्रु उसको कर सकें सहन न, नीति बड़ी बलवान है ॥
समाधि लगाने के लिए तो, इन से काम लेना चाहिए ।
प्राणशक्ति बलवती को, प्रयत्न से थाम लेना चाहिए ॥

मर्माणि ते वर्मणा च्छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानु वस्ताम् ।
उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वानु देवा मदन्तु ॥

अन्धा अमित्रा भवताशीर्षाणोऽहय इव ।
तेषां वो अग्निनुन्नानामिन्द्रो हन्तु वरं वरम् ॥
यो नः स्वोऽरणो यश्च निष्ठ्यो जिघांसति ।
देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु ब्रह्म वर्म ममान्तरं शर्म वर्म ममान्तरम् ॥८॥
तेरे अंगों की रक्षा हो, ज्योतिर्मय सोम साथ हो ।
अमर वह तुझ को करे, तेरे सिर पे उस का हाथ हो ॥
सर्वोत्तम सुख मिले तुझे, श्रेष्ठ वरुण महान् से ।
दिव्यशक्तियां मोद मनायें, तेरे मोक्ष प्रयाण से ॥
अंधे बेसिर सांप की भांति, आंख तुम्हारी नष्ट हों ।
अग्नि से सिर फुंके तुम्हारा, इन्द्र के बल से भ्रष्ट हों ॥
दिव्यगुण उन का नाश करें, पाप न रहने पाएँ ।
मित्र बनाऊँ उच्च गुणों को, दुर्गुण सब भग जाएँ ॥

मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः परावत आ जगन्था परस्याः
सृकं संशाय पविमिन्द्र तिग्मं वि शत्रून् ताढि वि मृधो नुदस्व ॥
भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥९॥
हे इन्द्र तू शेरों की न्याईं, दूर-दूर से आता है ।
दुर्गम विषय में ढूंढ़-ढूंढ़, साधक प्रज्ञा पाता है ॥
तीक्ष्ण तेजस्वी वज्र अस्त्र को, तीक्ष्ण और बना ।
अन्दर का शत्रु मार-मार, तामस भावों को दूर भगा ॥
यज्ञ का दिव्य शक्ति पाके, कानों को भद्र सुनावें ।
आंखों से पावन दृश्य लखें, अंगों को सशक्त बनावें ॥
कल्याणकारी इन्द्र हम को, शुभ प्रेरणा प्रदान कर ।
पूषा, बृहस्पति मिलकर, संयम शक्तिमान कर ॥
वेदज्ञान का स्वामी ईश्वर, सदा हमारा कल्याण करे ।
हम को ज्ञान की ज्योति दे, उत्तम प्रतिभावान करे ॥

इति नवमः प्रपाठकः । इति एकविंशोऽध्यायः ॥

इत्युत्तरार्चिकः समाप्तः । सामवेदसंहिता समाप्ता ॥